विलक्षण ज्ञानी

आशीर्वाद

गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव
वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव

संपादन
आर्ष मार्ग संरक्षक, कविहृदय, प्रज्ञायोगी
दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव

रचयित्री
आर्यिका आस्थाश्री माताजी

प्रकाशक
श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

पुस्तक का नाम	:	**विलक्षण ज्ञानी**
आशीर्वाद	:	**गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव** **वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव**
संपादन	:	**आर्षमार्ग संरक्षक प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्यश्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव**
सहयोग	:	**मुनि श्री सुविज्ञसागरजी, मुनि श्री सुयशगुप्तजी** **मुनि श्री चन्द्रगुप्तजी, मुनि श्री अध्यात्मनंद जी**
रचयित्री	:	**आर्यिका आस्थाश्री माताजी**
सहयोग	:	**आर्यिका सुवत्सलमति माताजी, आर्यिका सुनिधिमति माताजी** **आर्यिका सुनीतिमति माताजी, क्षुल्लक सुधर्मगुप्त जी** **क्षु. सुवीक्ष्यमति, क्षु. धन्यश्री माताजी** **ब्र. केशरबाई अम्मा जी, ब्र. सोहनलाल जी**
सर्वाधिकार सुरक्षित	:	**रचनाकाराधीन**
प्रतियाँ	:	**1000**
संस्करण	:	**प्रथम, वर्ष-2016**
प्रकाशक	:	**श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)** Email : dharamrajshree@gmail.com
प्राप्ति स्थान		**ब्रह्मचारी सोहनलाल जी** (संघस्थ आचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव) मो. 9672007747 **एन.एल. कछारा** मो. 9214460622
मुद्रक	:	**राजू ग्राफिक आर्ट, जयपुर** फोन : 0141-2313339, 9829050791 Email : shahsundeep@rocketmail.com rajugraphicart@gmail.com

वैज्ञानिक जैनाचार्य

आप विलक्षण संत हैं वैज्ञानिक आचार्य।
कनकनन्दी शुभ नाम है, हम सबके आचार्य॥

परम पूज्य वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव एक विलक्षण जैनाचार्य हैं।

बाल्यकाल से आप मेधावी हैं। खोजपूर्ण जिज्ञासु प्रवृत्ति आपमें जन्मजात है। आप स्व-पर विश्वकल्याण में परम उत्साही हैं। इतने पर भी आप परम शांत, गंभीर, अपरिश्रावी आदि विशेष गुणों के धनी हैं। सम्पूर्ण नन्दी संघ के, हम सबके शिक्षा गुरु हैं।

मेरा परम सौभाग्य है कि ऐसे महामना के सान्निध्य में मैंने दीक्षा से लेकर 7 वर्षावास किये। उनसे अनेक महान् आध्यात्मिक, दार्शनिक आदि ग्रन्थों का अध्ययन किया। फरवरी 1998 के बाद पुनः 2-4-2015 को लगभग 17 वर्षों बाद आपके पुनीत दर्शन हुए।

आपके सान्निध्य में सम्पन्न हुआ आसपुर का पंचकल्याणक हमारे लिए प्रशिक्षण शिविर बन गया। पहले आप महाशिक्षक, वैज्ञानिक व लेखक थे। अब आप महाकवि भी हो गये हैं। अभी तक आपकी लगभग 60 से अधिक गीताञ्जलियाँ प्रकाशित हो गयी हैं तथा अनवरत काव्य सृजन जारी हैं। हर एक कविता में एक-एक ग्रन्थ समाया हुआ है। प्रत्येक कविता महान अर्थों से भरी हुई खोजपूर्ण है।

ऐसे ज्ञान के महासागर पर उनकी ही प्रथम शिष्या, प्रथम दीक्षिता, शिक्षिता आर्यिका आस्थाश्री माताजी ने **'विलक्षण ज्ञानी'** नामक परिचय ग्रन्थ लिखा है।

जो विशेष प्रसिद्धि, ख्याति, पूजा लाभ से सर्वथा परे हैं। अपने पूर्व परिचय पूर्व इतिहास पर प्रायः मौन हैं ऐसे परम निस्पृही सन्त का परिचय खोजना और लिखना भी महनीय कार्य है।

जो बालिका राजस्थान, मध्यप्रदेश के सीमांत ग्रामीण अंचल में मात्र 7वीं कक्षा तक का लौकिक शिक्षण प्राप्त कर पायी हो और पढ़ने खेलने की बाल्यावस्था में मोक्षमार्ग पर चल पड़ी हो वो आज अनेक विधानों, कथा ग्रन्थों की लेखिका बन गयी है। अब वे इस ग्रन्थ के माध्यम से जन-जन को अपने दीक्षा-शिक्षा गुरु का जीवन दर्शन करा रही हैं। ये दो-दो महान् आचार्यों (परम पूज्य गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागर जी और महाकवि वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव) की महती कृपा का ही प्रभाव है। आप इसी प्रकार नित नये ग्रन्थों का सृजन करती रहें। केवलज्ञान से पूर्व तक आपकी ज्ञानधारा अनवरत चलती रहे

इसी शुभकामना, शुभाशीर्वाद के साथ.....

आचार्य गुप्तिनंदी

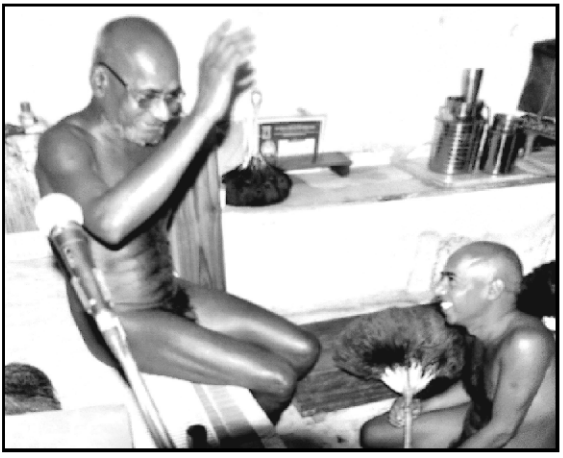

आचार्य कनकनन्दी जी गुरुदेव आचार्य गुप्तिनंदी जी को आशीर्वाद देते हुए

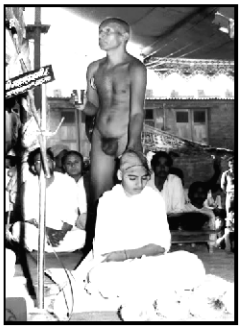

आ. कुन्थुसागर जी से दीक्षा लेते हुए
आ. आस्थाश्री माताजी

प्रस्तावना

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्व साहूणं

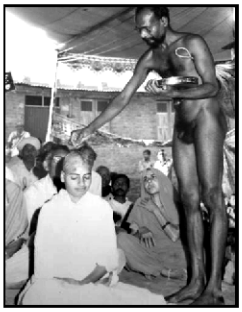

आ. कनकनन्दी जी से दीक्षा लेते हुए
आ. आस्थाश्री माताजी

मेरे वैज्ञानिक गुरुदेव

दोहा– आध्यात्मिक गुरु आप हो, श्रुत के हो भंडार।
माँ वीणा मुख में बसी, करते नव्य विचार।।

हरेक मनुष्य के जीवन में गुरु की आवश्यकता होती है। बिना गुरु के हमारा जीवन अधूरा है। जन्म से लेकर मरने तक गुरु की आवश्यकता है। जब कोई मोक्ष की राह पर चलने का निश्चय करता है तब उसे गुरु की आवश्यकता होती है। गुरु ही शरण में आये हुये भव्य को सत्य का मार्ग दिखाते हैं, धर्म में आगे बढ़ाते हैं वह भव्यात्मा जब धर्म का मर्म समझ लेता है तब वह भी अपने गुरु के उपकार को स्मरण करने के लिये गुरु के प्रति भाव भरी विनयाञ्जली प्रस्तुत करता है।

मैंने 18 वर्षों के बाद गुरुदेव के दर्शन किये। दर्शन करके जो आनंद मुझे प्राप्त हुआ उससे प्रेरित होकर मेरी भावना हुई– मैं गुरुदेव के व्यक्तित्व पर कुछ लिखूँ। आचार्यश्री के अंदर जो गुण हैं उनका सम्पूर्ण वर्णन तो मैं नहीं कर सकती फिर भी गुरु दर्शन से मेरी भावना हुई कि मैं उनके कुछ गुणों का वर्णन करूँ। क्योंकि गुरु अपने गुणों का बखान स्वयं नहीं कर सकते। जब हम किसी महापुरुष की जीवनी पढ़ते हैं तो, हमारे रोम–रोम पुलकित हो जाते हैं, हमारी आस्था और बढ़ जाती है और उनके जीवन को पढ़कर तो ऐसा लगता है कि इन महापुरुषों के समान कभी हम भी बन सकते हैं।

आचार्यश्री के उज्ज्वल जीवन चारित्र से हमें शिक्षा मिलती है जो कार्य हमारे गुरुदेव ने किया है, कर रहे हैं वह शायद ही आने वाले समय में कोई कर पाये

आचार्यश्री ने बचपन से ही ज्ञान पाने के लिये जो पुरुषार्थ किया है वह अचिन्तनीय है। हर जीव के अन्दर अनन्त शक्ति है। हम अपनी शक्ति को छुपाकर बैठे हैं।

शक्ति को जागृत नहीं कर रहे हैं। जब हम किसी महापुरुष का आदर्शमय पवित्र जीवन चरित्र पढ़ते हैं तो हमारी आत्म शक्ति भी बढ़ जाती है। जिस बालक ने बचपन से इतना गहरा ज्ञान प्राप्त किया हो, अपना व्यक्तित्व विशाल बनाया हो, अपने आपको धर्म के लिये समर्पित किया हो, वह बालक कितना महान् होगा। हम कल्पना भी नहीं कर सकते। कहाँ से कैसे वह भव्यात्मा गुरु के चरणों में पहुँचता है, अपने जीवन की बागडोर गुरु चरणों में समर्पित करता है। वे ही आगे एक महान् वैज्ञानिक संत बनकर अपने जैन धर्म को भारत में ही नहीं परन्तु पूरे विश्व में, विदेश तक पहुँचा रहे हैं। जन-जन को जैन धर्म एक वैज्ञानिक धर्म है, समझा रहे हैं। उन्होंने जैन धर्म को विज्ञान से जोड़ने का कार्य किया है। ऐसे गुरुवर के जीवन चारित्र पर एक बार अवश्य नजर डालें। मैं आचार्य भगवन् से उनके चरणों की धूल के कण बराबर ज्ञान प्राप्त कर लूँ तो शायद बहुत जल्दी ही संसार के दुःखों से पार हो जाऊँगी। किस प्रकार की विचारधारा गुरुदेव में है-

''सर्व जीव हिताय, सर्व जीव सुखाय''

उनकी भावना भारत को विश्व गुरु बनाने की है। भारत पुनः विश्व गुरु बने। ऐसी पवित्र उज्ज्वल भावना गुरुदेव के रग-रग में समाई हुई है। ऐसे आचार्य गुरुदेव का जीवन चरित्र हम सबके लिये अनुकरणीय है, उनके आदर्शों पर हम भी चलें इसी भावना से सत्य, समता, शांति, सुख का जो मार्ग दिखाने वाले गुरु है, उनके चरणों में त्रय भक्ति पूर्वक नमन, वंदन करती हूँ।

मेरा परम सौभाग्य है ऐसे ज्ञानी गुरुदेव की मुझे प्रथम शिष्या बनने का सौभाग्य मिला। उन्होंने मेरी दीक्षा अपने दीक्षा गुरु गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव से करवाई।

गुरुदेव ने आदर्श प्रस्तुत किया और पूरे नंदी संघ के लिये प्रेरणास्पद बने। गुरुदेव नंदी संघ के शिक्षा गुरु हैं। मैंने गुरुदेव के कुछ गुणों को छंद में पिरोया है। गुरुदेव के नाम पर देवपुरा में मैंने **'श्री कनकनंदी विधान'** भी लिखा है। यह विधान गुरुदेव के शुभ आशीर्वाद से मात्र तीन दिन में ही पूर्ण हो गया। यह एक अपने आप में मेरे लिये अतिशय है। 50 अर्घ उस विधान में है। हर भक्त उस विधान से भी गुरुदेव के गुणानुवाद करके पुण्य का संचय करें। हम कभी गुरु के पूर्ण गुणों का वर्णन नहीं कर सकते। इस पुस्तक में भी आचार्यश्री के क्रांतिकारी जीवन के संस्मरणों को मैंने लिखने का प्रयास किया है। उनके संस्करणों का अथाह सागर है उनमें से कुछ ही इसमें लिख रही हूँ। जितनी जानकारी मुझे आचार्यश्री द्वारा लिखित पुस्तकों में मिली उन्हीं के आधार पर ये लिखी है। यह पुस्तक भी गुरुदेव के आशीर्वाद से 8 दिन में ही पूर्ण हो गई थी। इस पुस्तक को मैंने आचार्यश्री के द्वारा लिखित **'भावना गीताञ्जलि'** धारा नं. 31 और मेरा लक्ष्य साधना एवं अनुभव के आधार पर लिखी है। कुछ विषय स्वयं आचार्यश्री ने मुझे बताये हैं।

गुरुदेव पहले गद्य रूप में 250 ग्रन्थों का सृजन कर चुके हैं। अब गुरुदेव पद्य रूप में गहन विषयों को कविता के माध्यम से अनेक गीताञ्जलियों में लिख रहे हैं। चारों अनुयोग के सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय को आपने कविता में पिरो दिया है। आप पहले संघस्थ साधुओं को कविता, गीत आदि बनाने की प्रेरणा देते थे। अब आप सबसे आगे बढ़ गये हैं। आप कवि ही नहीं है, महाकवि हैं। आपकी कवितायें सामान्य व्यक्ति समझ नहीं पाता है। आपने श्रेष्ठतम कविताओं की रचना की है। कोई विषय पर साधु प्रश्न पूछते हैं तो आप तुरन्त ही उस विषय पर एक कविता लिख देते हैं। उस कविता के नीचे आप उस व्यक्ति का नाम दे देते हैं कि ये कविता उस साधु की या श्रावक की प्रेरणा से बनी है। कुछ भी आपको किसी ने दिया है तो आप उसका नाम कभी नहीं छुपाते हैं। उसका नाम छपवाते हैं, यह आपका सबसे बड़ा गुण है गुरुदेव के बारे में और अधिक विषय आगे आप स्वयं पढ़ेंगे। मैं गुरुदेव के चरणों में नमन करती हूँ।

इस पुस्तक का संपादन करने वाले परम पूज्य प्रज्ञायोगी कविहृदय आर्षमार्ग संरक्षक आचार्य श्री गुप्तिनंदी जी गुरुदेव को त्रय भक्तिपूर्वक कोटि-कोटि नमोऽस्तु। गुरुदेव बारिकी से हर एक शब्द को बड़ी सरलता से जोड़ देते हैं। कहाँ पर कैसे लिखना, ये सब काम आचार्यश्री करते हैं। गुरुदेव ही मेरी हर पुस्तक का संपादन बहुत अच्छे से करते हैं। अपनी मेहनत से उसमें चार चाँद लगा देते हैं। उनको मैं पुनः नमन करती हूँ।

यह पुस्तक 'आसपुर' में 23-4-2015 तिथि पंचमी को प्रारम्भ की थी और 30-4-2015 बारस, गुरुवार को पूर्ण हुई। आसपुर में भगवान् आदिनाथ का पंचकल्याणक हुआ। उसमें भी हमें पूरा सान्निध्य गुरुदेव का मिला।

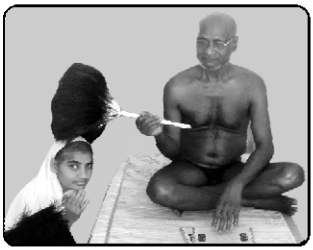

आ. कनकनन्दी जी से आशीर्वाद लेते हुए
आ. आस्थाश्री माताजी

प्रत्येक मानव इस पुस्तक को पढ़े और वैज्ञानिक आचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव के जीवन चारित्र को जाने। आपके चरणों में मेरी आस्था और बढ़े। 'आस्था' आस्था से मोक्ष का रास्ता प्राप्त करे। आचार्य श्री विद्यानंदी जी ने भी इस पुस्तक के लिये कुछ फोटो भेजे थे, उनको मैं नमोऽस्तु करती हूँ।

इस पुस्तक में मुझे जिन भक्तों ने फोटो भेजे हैं, उनको बहुत-बहुत आशीर्वाद देती हूँ। कुछ फोटो मुझे धर्मस्थल से प्राप्त हुये। सबसे अधिक फोटो श्रीमान् बाबूभाई गाँधी अकलूज वालों ने भेजे हैं। अहमदाबाद से श्रीमान् शंकरलाल जी भरतकुमार जी ने भेजे हैं। रोहतक से श्रीमान् दीपक कुमार जी, प्रभाष (भाषु) कुमार जी ने भी कुछ फोटो भेजे हैं। जयपुर से श्रीमान् देव प्रकाश जी खण्डाका परिवार ने भी कुछ फोटो भेजे हैं। कुछ फोटो खोड़निया परिवार सागवाड़ा से मिले, उन सब भक्तों को आशीर्वाद।

इस पुस्तक को प्रकाशित कराने वाले दान-दातार सभी भक्तों को आशीर्वाद।

आपकी शिष्या
आर्यिका आस्थाश्री

मैं और मुझे कैसे मिले गुरुदेव

कनकनन्दी आचार्य हैं, शिक्षक सूरि महान्।
उनको मैं ध्याऊँ सदा, वरूँ पूर्ण विज्ञान।।

निश्चयनय से तो सभी द्रव्य अनादि निधन हैं लेकिन द्रव्य दृष्टि से यह जीव ना कभी उत्पन्न होता है और ना नष्ट होता है। फिर भी व्यवहारनय से मेरी इस पर्याय का–

जन्म 1 अगस्त, 1972 को भोपाल (म.प्र.) में पिताश्री कोमलचंद जी की धर्मपत्नी श्रीमती त्रिवेणी देवी (वर्तमान क्षुल्लिका धन्यश्री माताजी) की कोख से हुआ। ज्योतिर्विद नानाजी श्री खेमचन्द जी (सागर) ने उस समय मेरी जन्म कुण्डली बनाई और भविष्यवाणी की। उन्होंने कहा– ये बालक बड़ा होनहार है, इसका भविष्य उज्ज्वल है, ये छोटी उम्र में ही घर–परिवार का त्याग कर देगा, बहुत जल्दी ही इसे महान् ज्ञानी आचार्य (संभवतः ग. गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुंथुसागर जी व वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव) की शरण प्राप्त होगी। उनके पास रहकर ये परिवार का नाम रोशन करेगा। जैन धर्म की अच्छी प्रभावना करेगा। सबके दिलों पर राज करेगा। इसलिये इसका नाम 'राजेन्द्र' रखता हूँ।

जीवन के अठारह (18) वर्ष खेलते–खेलते, विद्यालय–महाविद्यालय में पढ़ते हुए बीत गये। कहते हैं– माता–पिता के बचपन के दिये संस्कार अन्तिम संस्कार तक काम आते हैं। आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव कहते हैं–

नींव महल की आधार शिला है,
बीज वृक्ष की आधार शिला है,
संस्कार देना हो तो बच्चों को दो,
बच्चे धर्म, देश और राष्ट्र की आधारशिला है।

मेरे जीवन में भी संस्कारों के बीज घटित हुए, बचपन से मेरे माता–पिता मुझे मन्दिर जाने की प्रेरणा देते थे।

हमारे परिवार में देव–दर्शन करके मंदिर के चंदन का तिलक लगाकर घर पर आने के बाद ही दूध, भोजन आदि मिलता था। देवदर्शन के बिना घर में किसी को भी खाना–पीना नहीं मिलता था।

भोपाल में ही एक सज्जन धर्मात्मा श्री माणकचंद जी जैन (गुड़वाले) रोज छोटे–छोटे बच्चों को बुलाकर जिन–पूजन कराते थे और जो बच्चे रोज पूजन करने आते थे उन्हें वे प्रति रविवार नये–नये पुरस्कार देकर प्रोत्साहित करते थे। मैं भी बचपन में लगातार पूजन करने जाता रहा। मैंने बचपन में तत्त्वार्थ सूत्र, भक्तामर स्त्रोत आदि कंठस्थ कर लिये। लेकिन आज मुझे यह अनुभव आया कि बचपन में की गई पूजा ने भी आज मुझे 'मुनि व आचार्य' के पूज्य पद तक पहुँचा दिया। कहते हैं 'बच्चे मन के सच्चे'। मैंने बचपन में 9 वर्ष की अवस्था से लेकर 14 वर्ष की उम्र तक नित्य पूजन की। जब मैं 12 वर्ष का था तब जन्म नगर भोपाल शहर में 'क्षुल्लक श्री सन्मतिसागर ज्ञानानंद जी' संघ सहित आये। उन्होंने विशाल स्याद्वाद शिक्षण शिविर लगाया। भोपाल में इससे पहले हमेशा वीतराग विज्ञान शिक्षण शिविर लगते थे परन्तु पहली बार एक पिच्छी कमण्डल धारी संत द्वारा शिविर लगाया गया जिसमें भोपाल संभाग के हजारों शिविरार्थी सम्मिलित हुए। मैं भी उस शिविर में सम्मिलित हुआ तथा भजन प्रतियोगिता आदि अनेक प्रतियोगिताओं में उच्च पुरस्कार भी प्राप्त किये। मेरा बाल मन उस शिविर से ऐसा प्रभावित हुआ कि 12 वर्ष की छोटी उम्र में मैं घर छोड़कर संघ के साथ चल पड़ा। भोपाल से बैरागढ़ तक मैं पैदल चलता गया। जब मैंने पूज्य क्षुल्लकजी से अपनी भावना व्यक्त की तब मेरे पिताजी व क्षुल्लकजी दोनों ने ही मुझे मना कर दिया और कहा– अभी आप बहुत छोटे हैं इसलिये थोड़े बड़े होने के बाद हम आपको ले चलेंगे। मेरा बाल मन कुंठित होकर रह गया। लगभग 16 वर्ष की उम्र तक मुझमें धर्म भावना प्रचुर थी। 16 वर्ष की किशोरावस्था लगते ही मेरा मन धर्म से विमुख होने लगा। शैक्षणिक व्यस्तता होने से व एन.सी.सी., आर.एस.एस., आकाशवाणी, आर्केस्ट्रा आदि अनेक कार्यों में व्यस्त होने से मैं धर्म से दूर होने लगा।

जब मैं 18 वर्ष का हुआ तब 1990 में वे क्षुल्लकजी अब 'आचार्यकल्प श्री सन्मतिसागरजी विद्याभूषण' बनकर संघ सहित आये। तब मेरे माता-पिता ने मुझे साथ चलने के लिए कहा, परन्तु मैं नहीं गया, मैंने महावीर जयंती, दशलक्षण आदि प्रमुख पर्वों में भी मंदिर जाना छोड़ दिया जबकि शहर में पूज्य गुरुदेव के चातुर्मास का असर दिखाई देने लगा। उस समय 7 पिच्छी के लिए 50 से अधिक चौके लग रहे थे, घर-घर में मात्र मुनियों की चर्चा चल रही थी। हमारे परिवार में भी सब गुरु भक्ति के रंग में रंग गये। घर में हमारे पिताश्री, माताजी व बड़े भाई सभी कहने लगे कि हम घर छोड़कर गुरुदेव के साथ जायेंगे तब मैंने कहा- आप सब चले जाइये मैं घर पर रहकर छोटे भाई-बहन को पाल लूँगा। उसमें भी मेरी अज्ञानता ही कारण है।

जब मैं 16 वर्ष का था तब घर में चर्चा हो रही थी कि ये रोज मंदिर जाता है, पूजन करता है, लगता है नानाजी की भविष्यवाणी सच हो रही है तब मैंने पूछा नानाजी की क्या भविष्यवाणी है ? जब मुझे भविष्यवाणी का पता चला तब मैं किशोरावस्था से गुजर रहा था, किशोरावस्था के जोश में मैंने कहा कि मैं किसी कुण्डली, भविष्यवाणी को नहीं मानता और मैं इसे झूठलाकर रहूँगा। उस दिन से मैंने मंदिर जाना आदि सब धार्मिक क्रियाओं को छोड़ दिया। लगभग 2 वर्ष भविष्यवाणी को झूठा साबित करने में चले गये।

इसी के अन्तर्गत पूरा चातुर्मास बीत गया लेकिन मैं नहीं गया। अब घर में चर्चा थी कि आखिर इसे क्या हो गया ? क्या कुण्डली का फलादेश भी गलत हो सकता है। परन्तु होनी को कुछ और ही मंजूर था।

चातुर्मास के दौरान अन्तिम दौर में हमारे घर पर भी चौका लगा। लगभग 30 दिन के लम्बे इंतजार के बाद क्षुल्लक श्री काम विजयनंदीजी का हमारे घर पर पड़गाहन हुआ। मैं कॉलेज से घर आया तो देखा घर के बाहर बहुत भीड़ है। पता चला क्षुल्लकजी का आहार पूरा होने वाला है, तभी मेरे बड़े भाई 'श्री वीरेन्द्र जैन' कमण्डल लेकर बाहर आये, कमण्डल का आकर्षण सबको रहता है, मैंने कहा कमण्डल मैं ले जाऊँगा।

बड़े भाई ने कहा– नहीं मैं ले जाऊँगा, बहुत प्रयास करने के बाद भी जब भाई ने कमण्डल नहीं दिया तब मुझे 'पिच्छी' दिखाई दी। मैंने पिच्छी उठा ली और बाहर आकर बड़े भाई से बोला कोई बात नहीं तुम कमण्डल रखो मैं पिच्छी लेकर जाऊँगा। अन्दर सब पिच्छी ढूँढ़ने लगे, सब मेरे पास पिच्छी माँगने आये पर मैंने नहीं दी, सब मुझे क्षुल्लकजी के पास ले गये और कहा– क्षुल्लकजी पिच्छी के बिना 7 कदम से आगे नहीं जाते इसलिये उन्हें पिच्छी दे दो। मेरे पिच्छी देने के बाद क्षुल्लकजी ने कहा– इसने पिच्छी उठाई है इसलिये एक न एक दिन पिच्छी अवश्य लेगा।

एक दिन मैंने सुना क्षुल्लकजी के लगातार 15 दिन से अंतराय हो रहे हैं। 18 वर्ष के युवा क्षुल्लकजी की इतनी कठोर साधना सुनकर मेरा मन आन्दोलित हो गया कि क्या एक क्षुल्लकजी के समान हम भी ये साधना कर सकते हैं ?

अगले दिन पूज्य आचार्यश्री का पड़गाहन हमारे घर में हुआ– आचार्यश्री मेरे सामने आकर खड़े हो गये। आज मैं बहुत खुश था कि गुरुदेव का पड़गाहन मुझसे हुआ पर वह खुशी ज्यादा देर नहीं टिकी पहले ही ग्रास में मेरे हाथ से गुरुदेव का अंतराय हो गया (क्योंकि मेरे अंगूठे में नेल पॉलिश लगी थी।) मुझे गहरा धक्का लगा कि मेरी अज्ञानता से पूज्य गुरुदेव का अंतराय हो गया। उसी समय मैंने गुरुदेव का कमण्डल उठाया, उनके साथ धर्मशाला में आया और उसके बाद ही मैंने प्रायश्चित्त स्वरूप घर जाने का त्याग कर दिया। माता–पिता ने परीक्षा ली 3 दिन के उपवास के बाद माता–पिता ने गृह त्याग कर संघ में जाने की अनुमति प्रदान की।

अब मैं (10 अक्टूबर 1990) ब्रह्मचारी बनकर संघ के साथ चल पड़ा। एक दिन 'ब्रह्मचारी नरेशजी' मुजफ्फर नगर से ऐलाचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव का सम्पूर्ण साहित्य लेकर आये तब पूरे संघ में ऐलाचार्य श्री कनकनन्दी जी व उनके साहित्य की चर्चा होने लगी। मेरा बाल मन भी गुरु दर्शन को उमड़ पड़ा, मेरे भावों को पढ़ते हुए आचार्य गुरुदेव व क्षुल्लक श्री कामविजयनंदी जी ने मुझे गणधराचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव के संघ में जाने की प्रेरणा दी क्योंकि 'श्रमणरत्न ऐलाचार्य श्री कनकनन्दी' रूप एकमात्र हीरा गणधराचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव के संघ में ही था।

सन् 1980 से 1991 के दौर में परम पूज्य गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव का वात्सल्य भाव और सिद्धांत चक्रवर्ती अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी ऐलाचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव का गहन ज्ञान, अध्यापन शैली, क्रांतिकारी विचार, सिद्धांतपरक ओजस्वी प्रवचन देश की युवा पीढ़ी को सहज अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे। देश के हर कोने से युवा वैरागी संघ की ओर खींचे चले आ रहे थे। उनमें ही मैं भी एक था।

मुझे वात्सल्य रत्नाकर, ज्ञान दिवाकर, धर्म प्रभाकर गुरुदेव मिले यह मेरा परम सौभाग्य है।

मई, 1991 में जब मैं गुलाब वाटिका दिल्ली के पंचकल्याणक में गुरुदेव के दर्शन हेतु आया तब संघ का सामूहिक स्वाध्याय देखकर एवं संघ का अनुशासन देखकर, साधुगणों में परस्पर वात्सल्य व विनय भाव देखकर मन प्रफुल्लित हो गया। अब मैंने इस संघ में ही आने का दृढ़ संकल्प कर लिया।

कुछ समय बाद मैं संघ में आया तब चाँदनी चौक में संघ के पुनः दर्शन हुए। परन्तु संघ में सूना-सूना लग रहा था। क्योंकि संघ की ऊर्जा पूज्य शिक्षा गुरुदेव वहाँ नहीं थे। मैंने गणधराचार्य श्री से पूज्य ऐलाचार्य श्री के विषय में पूछा तो पता चला कि सरस्वती पुत्र को बड़ी कठिनाई से मौत के मुँह से बचाया गया (क्योंकि पूज्य ऐलाचार्य भगवन् को अचानक हैजा हो गया था) और अब स्वास्थ्य लाभ हेतु उन्हें ग्रीन पार्क में विराजमान किया गया है।

मैं उसी समय ग्रीन पार्क पहुँच गया और अपने अभीष्ट गुरुदेव की सेवा में लग गया। अब रोज उन्हें आहार देना, सुबह-शाम प्राकृतिक शीतोपचार करना व रात्रि में उनके रुचिकर विषय को पढ़कर सुनाना मेरा नित्य कर्म बन गया।

पूज्य गुरुदेव का स्वास्थ्य लाभ होने के बाद व वर्षायोग का समय निकट आने से गुरुदेव ने आचार्यश्री के पास पहुँचने हेतु विहार किया। बहादुरगढ़ पहुँचकर वहाँ यशोमति माताजी के समाधि के चित्र देखकर मेरी वैराग्य भावना बढ़ने लगी।

पूज्य गुरुदेव ने उस समय मेरी भावना को सम्बल दिया। साथ ही प्रेरणा व मार्गदर्शन भी प्रदान किया। उस समय मुनिश्री कल्पश्रुतनंदी जी, मुनिश्री कुमार विद्यानंदी जी, मुनि श्री कनकोज्जवलनंदी जी ने भी मुझे सहयोग दिया।

मेरे पुण्योदय से 7 दिन के अल्प प्रयास में परम पूज्य ऐलाचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के मंत्रोच्चार पूर्वक व परम पूज्य गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव के कर-कमलों से हरियाणा प्रांत के धर्मनगर रोहतक में 22 जुलाई, 1991 को प्रातः 8.15 बजे मेरी व ब्र. संजय भाई बड़ौत वालों की युगल मुनि दीक्षा सम्पन्न हुई। ब्र. संजय भाई मुनि गुणनंदी बने और मैं ब्र. राजेन्द्र से 'मुनि गुप्तिनंदी' बना। यह सब पूज्य गुरुदेव का कृपा प्रसाद है।

अब मैंने चातुर्मास की स्थापना के साथ अधिक से अधिक ज्ञान साधना को ही लक्ष्य बनाया। पूज्य ऐलाचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव, बालाचार्य श्री पद्मनंदी जी के साथ-साथ अनेक मुनिराजों से लगभग 7-7 कक्षाऐं प्रतिदिन होने लगी वह वर्षायोग मेरे स्वाध्याय का स्वर्ण युग था।

इसी बीच संघ में नित्य होने वाले पंचामृत अभिषेक के विषय में मेरे मन में जिज्ञासा उठी। मध्यप्रदेश भोपाल में जन्म होने के कारण हम कूपमण्डूक 13 या 20 पंथ को नहीं जानते थे (वैसे 13 या 20 पंथ नामक शब्द या उसके नियम का प्राचीन आचार्य प्रणीत किसी ग्रंथ में उल्लेख ही नहीं है। हम तो यह समझते थे कि जो जिन प्रतिमा पर पंचामृत अभिषेक करे या पुष्प चढ़ाये वो श्वेताम्बर है और जो नहीं चढ़ाये वो दिगम्बर है यह हमारी अज्ञानता थी।) इस संबंध में मैंने पूज्य दोनों गुरुदेवों से चर्चा की तब गुरुदेव मेरी इस अज्ञानता पर मुस्कुरा दिये और पूज्य ऐलाचार्य भगवन् ने कहा- 'तुम मेरी जिनार्चना' पुस्तक पढ़ो, तुम्हें सब समझ में आ जायेगा। मैंने एक ही दिन में जिनार्चना ग्रंथ का पूरा स्वाध्याय किया। उस समय ही उस विषय संबंधी मेरा अज्ञान अंधकार दूर हो गया और सम्यक् रत्नत्रय, मोक्षमार्ग पर दृढ़ श्रद्धान हो गया।

अब यदि कोई सिर पर तलवार रखकर भी मुझसे पूछे कि सत्य क्या है ? तो मैं दृढ़ विश्वास के साथ यही कहूँगा कि– जैनागम में जो लिखा है वही सत्य है, उसके सिवा कुछ भी सत्य नहीं है।

19 मार्च,1992 को पद्मपुरा से जब धर्म प्रभावनार्थ गुरुदेव ने पूज्य आचार्यश्री से पृथक् विहार किया तब ज्ञान साधनार्थ मैं भी ऐलाचार्यश्री के शरण में चल पड़ा। मेरे अलावा मुनिश्री कुमार विद्यानंदीजी, आर्यिका राजश्री माताजी व आर्यिका क्षमाश्री माताजी भी पूज्य सिद्धांत चक्रवर्ती ऐलाचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव के साथ हो लिये। सन् 1991 से 1998 फरवरी तक पूज्य गुरुदेव के पादमूल में ही मुझे रहने का सौभाग्य मिला। इस दौरान 1. रोहतक (1991), 2. निवाई (1992), 3. लावा (1993), 4. बिजौलिया (1994), 5. कोटा (1995), 6. केशरिया जी (1996), 7. सागवाड़ा (1997)। ये 7 वर्षायोग गुरुदेव के साथ किये। उन्हें उपाध्याय, ऐलाचार्य या आचार्य तीनों पद पर नजदीक से देखा व अनुभव किया है।

पूज्य गुरुदेव का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है–

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की आध्यात्मिक यात्रा (आध्यात्मिक क्रांति एवं विश्व शांति)

1. मार्ग निर्देशक एवं शिक्षा गुरु– प.पू. वात्सल्य रत्नाकर आचार्यश्री विमलसागर जी एवं प.पू. मर्यादा शिष्योत्तम प्रशांतमूर्ति आचार्यश्री भरतसागर जी गुरुदेव।

2. दीक्षा एवं शिक्षा गुरु– प.पू. गणाधिपति गणधराचार्य वात्सल्य रत्नाकर आचार्य गुरुवर श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव।

3. प्रमुख शिक्षा गुरु– प.पू. गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी, आचार्य श्री विद्यानंदजी (कुंदकुंद भारती, दिल्ली), पं. शेखरचन्द जी शास्त्री (ईसरी), पं. परमानंद जी शास्त्री (शाहगढ़), पं. श्रेयांसकुमार जी दिवाकर (सिवनी पं. सुमेरचन्द्र जी दिवाकर के अनुज), पं. प्रभाकर शास्त्री (श्रवणबेलगोला), श्री नागराजैया (हासन, कर्नाटक)।

वैसे भी आचार्यश्री तीसरी कक्षा से ही अध्यापन कार्य कर रहे हैं, विशेषतः 1981 तक आचार्यश्री ने विभिन्न विधाओं का अध्ययन विभिन्न गुरुओं से किया है एवं कर रहे हैं किन्तु विशेषतः 1982 से विभिन्न विधाओं का अध्यापन कार्य स्वयं कर रहे हैं और आगे भी करेंगे। प्रायः 1988 से विशेषतः शोधपूर्ण अध्ययन–लेखन 1990 से वैज्ञानिक चैनलों से शोधपूर्ण ज्ञान कर रहे हैं।

4. क्षुल्लक दीक्षा– अतिशय क्षेत्र पपौराजी (टीकमगढ़, म.प्र.) 1978

5. श्रमण दीक्षा– श्रवणबेलगोला–गोम्मटेश्वर 5 फरवरी, 1981 (सहस्राब्दी महामस्तकाभिषेक के अवसर पर आचार्य श्री देशभूषण जी ससंघ आ. विमलसागरजी ससंघ, आ. विद्यानंदजी आदि प्रायः 200 साधु–साध्वी, भट्टारक चारूकीर्ति, अनेक विद्वान् तथा लाखों श्रद्धालुओं के संगम के अवसर पर।)

6. उपाध्याय पदवी– 25 नवम्बर, 1982 हासन (कर्नाटक) (स्वगुरु आचार्यश्री कुंथुसागरजी गुरुदेव ससंघ तथा श्रद्धालुओं के द्वारा) पदवी प्रदान महोत्सव करीब 1 महीना चला। इस कार्यक्रम में अनेक भट्टारक भी उपस्थित रहे।

7. सिद्धांत चक्रवर्ती पदवी– 1985, शमनेवाड़ी (कर्नाटक) (उपाध्याय कनकनन्दी द्वारा धवला वाचना से प्रभावित होकर आचार्य कुंथुसागरजी स्वसंघ, आचार्य देशभूषणजी ससंघ तथा 15 से 20,000 श्रद्धालुओं के द्वारा त्रिलोक तिलक विधान के अवसर पर।)

8. ऐलाचार्य– 1988, आरा (बिहार) अनेक मुनि दीक्षा के अवसर पर (स्वगुरु आचार्यश्री कुंथुसागरजी गुरुदेव स्वसंघ (प्रायः 35 साधु–साध्वी) तथा हजारों श्रद्धालुओं द्वारा)।

9. विश्व धर्म प्रभाकर– 1991 के प्रारम्भ में दिल्ली (भारत की राजधानी) (स्वगुरु आचार्यश्री कुंथुसागरजी गुरुदेव स्वसंघ, उपाध्याय श्री आनंदसागरजी 'मौनप्रिय' तथा 10–12000 हजार श्रद्धालुओं के द्वारा पंचकल्याणक के अवसर पर।)

10. ज्ञान-विज्ञान दिवाकर- 1991 के अंत में रोहतक (हरियाणा) (स्वगुरु आचार्य श्री कुंथुसागरजी गुरुदेव स्वसंघ (प्रायः 35 साधु-साध्वी) 4-5000 श्रद्धालुओं के द्वारा कल्पुद्रम विधान के अवसर पर।)

11. आचार्य पदवी- 25 अप्रैल 1996 उदयपुर (राज.) मुनि श्री रविनंदी जी मुनि दीक्षा के अवसर पर स्वगुरु आचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव की 4-5 वर्षों की आज्ञा तथा आदेश पत्र एवं अनेक साधु समाज के आग्रह के कारण। आचार्य पदवी के संस्कार प्रदाता आचार्यश्री अभिनंदनसागर जी गुरुदेव। अनुमोदन एवं सान्निध्य स्वसंघस्थ आ. पद्मनंदीजी ससंघ, मुनिश्री कुमार विद्यानंदी, मुनिश्री गुप्तिनंदी, आर्यिका राजश्री माताजी, आ. क्षमाश्री माताजी, ब्र. लीला (वर्तमान में आर्यिका आस्थाश्री) आदि। प्रायः 50-60 साधु-साध्वी तथा प्रायः 30-35000 श्रद्धालुओं की उपस्थिति तथा अनुमोदना।)

12. आचार्यरत्न - 25 अप्रैल, 1996 उदयपुर (राज.) आचार्य पदवी संस्कार के पावन अवसर पर आचार्यश्री अभिनंदनसागर जी गुरुदेव द्वारा प्रदत्त।

13. शिक्षण-प्रशिक्षण- अभी तक आचार्यश्री कनकनंदी जी गुरुदेव से भारत के 13 प्रदेशों के जैन-अजैन लाखों विद्यार्थी, शिक्षक, प्राध्यापक, व्याख्याता, प्राचार्य, प्रोफेसर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, उप-कुलपति, कुलपति, वकील, जज, जैन विद्वान् आदि शिविर-कक्षा, स्वाध्याय, संगोष्ठी, चर्चा, शंका-समाधान आदि से लाभान्वित हुए हैं और हो रहे हैं। आचार्य गुरुवर श्री कुन्थुसागर जी स्वसंघ, आचार्य श्री विमलसागरजी संघस्थ, आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी गुरुदेव ससंघ, गणिनी आर्यिका विशुद्धमती माताजी ससंघ (शिष्या आ. निर्मलसागरजी) साधु-साध्वी तथा अन्यान्य संघस्थ साधु-साध्वी, क्षुल्लक-क्षुल्लिकादि प्रायः (200 से अधिक) आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव से अध्ययन किये हैं और कर रहे हैं। आचार्य श्री विद्यासागर जी गुरुदेव संघस्थ, आचार्यश्री सन्मतिसागर जी विद्याभूषण (ज्ञानानंद) संघस्थ तथा अन्यान्य संघस्थ प्रायः 30-40 ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारिणियाँ भी आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव से अध्ययन किये हैं और कर रहे हैं।

प्रायः 15–20 दिगम्बर आचार्य–उपाध्याय और कुछ श्वेताम्बर साधु भी आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव से ज्ञानार्जन किये हैं और यह प्रक्रिया सतत प्रवाहमान है।

14. आचार्यश्री के शिष्यों के द्वारा धर्म प्रचार– आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के साधु–साध्वी शिष्यों के द्वारा भारत में तथा वैज्ञानिक, उप–कुलपति, प्रोफेसर आदि शिष्यों के द्वारा भारत, भारत के विश्वविद्यालयों, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, जापान, इंग्लैण्ड (यूरोप), नेपाल, श्रीलंका आदि देशों में तथा वहाँ के विश्वविद्यालयों में, विश्व धर्म संसद में धर्म–दर्शन–विज्ञान का प्रचार–प्रसार हो रहा है और यह प्रक्रिया तीव्रता से बढ़ रही है। आचार्यश्री के दिगम्बर–श्वेताम्बर जैन प्रोफेसरादि शिष्य भी दिगम्बर श्वेताम्बर जैन साधु–साध्वी विद्वान्, गृहस्थों आदि को भी प्रगतिशील धर्म का अध्यापन करा रहे हैं। आचार्यश्री के ब्र. शिष्य सोहनलालजी देवड़ा भी अनेक ग्रामों में धर्म–दर्शन–विज्ञान पाठशाला प्रारम्भ करके बच्चों से लेकर प्रौढ़ तक को धर्म का संस्कार दे रहे हैं।

15. आचार्यश्री की पवित्र भावनाएँ एवं महान् योजनाएँ– स्वात्मोपलब्धि रूप मोक्ष ही आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव का सर्वोच्च अन्तिम लक्ष्य है। एतदर्थ सत्य–समता–सहिष्णुता–निस्पृहता–व्यापकता–उदारता–एकता–प्रगतिशीलता–वैज्ञानिकता–प्रभावना–शांति–निष्पक्षता–न्यायप्रियता–पवित्रता–क्षमा–मृदुता–सहज–सरलता–संयम–मौन–एकांतवास रूपी रत्नत्रयमय पवित्र भावनाओं की साधना तथा स्व–पर विश्वकल्याणार्थे इन भावनाओं का विश्व स्तर पर प्रचार–प्रसार स्थापना की महान् योजनाएँ हैं। (साभार–बाल आध्यात्मिक गीताञ्जली)

इन सबके साथ–

हमारे गुरुदेव विलक्षण व्यक्तित्व के धनी हैं। स्वयं में स्वावलम्बी हैं पर संसार से उदासीन हैं। स्वयं के साधना कार्य में बहुत सक्रिय हैं और सागर जैसे गंभीर हैं।

उनकी विश्व कल्याणकारी अनेक-अनेक उच्च भावना है, योजना है परन्तु निस्पृह अध्यात्मिक वृत्ति है। आपने धर्म से अध्यात्म, भू-विज्ञान से अंतरिक्ष विज्ञान, शिक्षा समाज विज्ञान, कर्म विज्ञान, अंग विज्ञान आदि अनेकानेक विषयों पर 250 से अधिक ग्रन्थ लिखे हैं। सभी विषयों पर लगभग 60 से अधिक गीताञ्जलियाँ लिखी हैं परन्तु किसी को छपाने के लिए कभी किसी से याचना नहीं की है। परन्तु चक्रवर्ती से बढ़कर उनका पुण्य प्रबल है जिससे सब कार्य अपने आप हो जाते हैं। देश-विदेश के अनेक जैन-अजैन दार्शनिक वैज्ञानिक साहित्य प्रेमी, दानी भक्त दूर-दूर से खोजते हुए गुरुदेव के चरणों में चले आते हैं और उनके गूढ़ ज्ञान को पाकर भाव-विभोर हो जाते हैं। उनकी उच्च कोटि की ज्ञान-साधना में स्वतः सहयोग करने लग जाते हैं। गुरुदेव का यह महान् कार्य देश-विदेश में सब जगह फैला है फिर भी गुरुदेव प्राकृतिक शुद्ध वातावरण में गाँवों में रहते हैं।

आप आर्ष मार्ग को प्राण-प्रण से मानते हैं, फिर भी पंथवाद, मतवाद, हठाग्रह से सदा दूर रहते हैं। जाति, भाषा, प्रांत, मत, पंथ आदि की लड़ाई से सदा दूर रहते हैं।

आप न्यायप्रिय हैं व अन्याय, पक्षपात, शोषण का सदा विरोध करते हैं। आपने अनेक धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक कुरूढ़ियों का दृढ़ता से सटीक विरोध किया है व आज भी करते रहते हैं। इन सबके बीच भी आप हमेशा कहते हैं-

''हमारे द्वारा धर्म की प्रभावना हो तो बहुत अच्छा है नहीं हो तो कोई चिन्ता की बात नहीं है परन्तु हमारे द्वारा कभी भी धर्म की अप्रभावना नहीं होवे तो यही सबसे बड़ी प्रभावना हो जायेगी।''

पूज्यश्री के द्वारा दिया गया यह सूत्र मेरी सफलता का प्रमुख सूत्र बन गया है। हमारे पूज्य ज्ञान महर्षि समय के बड़े पाबंद हैं। वे कहते हैं-

''समय पैसा नहीं समय जीवन है।''

आपका कहना है रुपये तो कभी भी कमाये जा सकते हैं, कई करोड़पति करोड़ों की संपत्ति गँवाकर रोडपति बनकर वापस अपनी सूझबूझ, मेहनत से पुनः रोडपति से करोडपति बन जाते हैं अर्थात् पैसा फिर से कमाया जा सकता है। लेकिन करोड़ों–अरबों रुपये देकर भी बीता हुआ समय वापस नहीं लाया जा सकता है। इसलिये वे अपने जीवन के हर एक समय का सदुपयोग करते हैं। आप सृजनशील संत हैं हर दिन नया सृजन आपकी लेखनी से होता है यही सृजनशीलता आपने हमें सिखायी है।

आप अनुभव के सागर हैं। वर्तमान युग की सोच से परे आपका अनुभव रहता है, जिसे सामान्य बुद्धि के लोग समझ नहीं पाते हैं, परन्तु एक ना एक दिन आपके अनुभव माणिक को नतमस्तक होकर स्वतः स्वीकार करते हैं।

इत्यादि अनेक गुणों के धनी हमारे पूज्य शिक्षा गुरु परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, सिद्धांत चक्रवर्ती, ज्ञान–विज्ञान दिवाकर वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव हैं। जिनके व्यक्तित्व का बखान करना सूरज को दीपक दिखाने के समान है।

आपके गुणों की हमें भी प्राप्ति हो इसी भावना के साथ–

वन्देतद्गुणलब्धये

आपका शिष्य
आचार्य गुप्तिनंदी

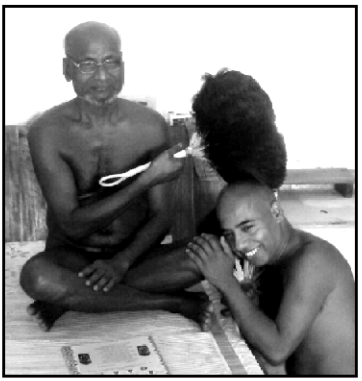

आचार्य कनकनन्दी जी गुरुदेव से आचार्य गुप्तिनंदी जी आशीर्वाद लेते हुए

विलक्षण ज्ञानी

वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री 'कनकनन्दीजी' गुरुदेव

गुरुवः पान्तु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णव-गम्भीरा, मोक्ष-मार्गोपदेशकाः॥

ये कहानी उस महापुरुष की है जिसने अनेक साधु-संत को अरहन्त बनाने का मार्ग बताया। श्रावकों को आगम निष्ठ बनाया है। ऐसे मेरे पूज्य आराध्य गुरुदेव जिनकी वाणी में माँ सरस्वती बैठी है। श्रुतदेवी माँ जिनकी लेखनी बनकर कर-कमलों में बसी है। अरहंत भगवान् की वाणी जिनके मुख से निकलती है वो है वंदनीय, पूजनीय **वैज्ञानिक धर्माचार्य आचार्यरत्न श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव।** किस प्रकार आचार्यश्री ने धर्म के पथ पर कदम बढ़ाया ? कहाँ से गुरुदेव ने यह यात्रा प्रारम्भ की ? किस प्रकार जैनधर्म को एक वैज्ञानिक धर्म सिद्ध किया है ? साहित्य सृजन करते-करते कैसे महाकवि बने ? अपनी बौद्धिक क्षमता को कैसे बढ़ाया ? सत्य, समता और सुख को पाने का लक्ष्य क्यों बनाया ? समता ही आत्मा का स्वभाव है। ऐसा क्यों बताया ?

इन सब प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए आईए हम सब पढ़ेंगे विलक्षण ज्ञानी गुरु की जीवनी।

जब कोई बालक विशेष लक्षणों को लेकर धरती पर आता है तो वह सबके लिये विलक्षण हो जाता है। एक कहावत है- ''पूत के लक्षण पालने में दिखते हैं।''

एक ऐसा बालक जिनका जन्म 1954 में ब्रह्मपुरी उड़ीसा में हुआ। इस बालक का नाम माता रुक्मणि बाई और पिता मोहनचंद जी ने 'गंगाधर' रखा।

आचार्यश्री के जन्म का चित्र

उस समय जितने बालक, इस बालक की उम्र के थे उन सबमें यह बालक सबसे अलग था। अपनी अलग ही पहचान बनाकर रहता था। जैसे–जैसे उम्र बढ़ी, इस बालक में प्रतिभायें भी बढ़ती गईं।

बच्चों का बचपन खेलने–पढ़ने और खाने के लिये होता है परन्तु यह बालक खेल भी बुद्धि को बढ़ाने वाला ही पसन्द करता था। आपकी प्रवृत्ति सब बच्चों से अलग थी। जब आप 4–5 साल के थे तभी से आपके मस्तिष्क में नई–नई योजनायें आती रहती थीं। आप स्वयं पढ़ते थे, अपने सहपाठी मित्रों को भी पढ़ाते थे। उनको जो कुछ भी समझने में कठिनाई पड़ती तो वो आप सहज सरलता से उन्हें समझा देते थे। हर बच्चे का लक्ष्य होता है–पढ़कर पास हो जाये। परन्तु आपका पढ़ना रहस्यमय था, हर विषय को बड़ी तन्मयता के साथ पढ़ते थे, गहराई से उसका चिंतवन करते थे। विज्ञान में आपको शुरू से ही विशेष रूचि थी, जो भी विषय लिखा है उसको विज्ञान से स्वयं सिद्ध करते थे। पढ़ना पड़ता है इस भाव से आपने कभी नहीं पढ़ा, रूचि से विषय पढ़ते थे, पढ़ते तो उसमें एकदम डूब जाते थे। बाहर क्या हो रहा है, यह भी उन्हें भान नहीं रहता था। नया विषय जब पढ़ने में आता तो आप उस विषय के पीछे लग जाते। ये ऐसा क्यों लिखा है ? इसका लॉजिक क्या है ? विज्ञान से व गणित से आप उसे सिद्ध करके ही दम लेते थे। आपके मस्तिष्क (मन) में बचपन से ही हजारों प्रश्न उठते थे। आपके प्रश्नों के उत्तर आपको प्रायः कोई नहीं दे पाता था। तब आप स्वयं ही उसका हल कर लेते थे। जब तक प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता था तब तक आप उसे खोजने में ही लगे रहते थे। उत्तर मिलने पर आपको आत्मिक आनंद मिलता था।

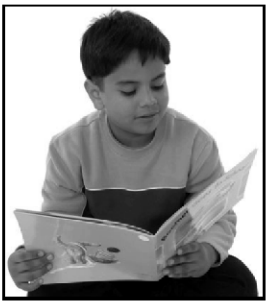

बालक गंगाधर पढ़ते हुए

एक प्रश्न का उत्तर मिल जाता तो दूसरा प्रश्न उठ जाता था। आपके प्रश्नों का आपके शिक्षक भी उत्तर जल्दी नहीं दे पाते थे। आपका बचपन ही बड़ा प्रभावशाली था, किसी बालक को क्या 3–4 वर्ष तक की बातें स्मरण में रहती है ? परन्तु आपको ढाई साल की उम्र तक की सारी बातें स्मरण हैं। आपको अभी तक याद है। अभी भी आचार्य भगवन् अपने मुख से कभी–कभी उपरोक्त प्रसंग बताते रहते हैं। यह आपकी विशेष प्रज्ञा का परिचय है। आप पूर्व भव का विशेष पुण्य लेकर धरती पर अवतरित हुये हैं। आपके अन्दर स्वावलम्बन, स्वच्छता, नैतिकता आदि के संस्कार इतने प्रगाढ़ हैं कि आपको कुछ भी अधिक सिखाना ही नहीं पड़ता था। उल्टा आप दूसरों को सिखाते थे। आप लघु वय से ही अपना सब काम स्वयं करते थे। स्नान करना, भोजन करना, स्वयं के कपड़े धोना, सुखाना, कपड़े समेटकर रखना, स्वयं सलीके से रहना। साफ–सफाई रखना आदि। साफ–सफाई से रहना आपको अच्छा लगता था।

आप भोजन करने के पहले हाथ–पैर, नाखून आदि साफ करके ही बैठते थे। अपने हाथ से ही भोजन करते थे। प्रायः किसी की थाली में भोजन नहीं करते थे।

आज के बच्चों से अगर हम तुलना करते हैं। कोई भी बच्चा, गुरुदेव के बचपन से कण भर भी बराबरी नहीं कर सकता। आज तो बड़े हो या छोटे किसी भी बच्चे को अपने हाथ से स्वयं का काम भी करना नहीं आता है। खुद का काम करने में भी प्रमाद करते हैं। अपने हाथ से पानी भरकर भी नहीं पीते हैं। चिल्लाते रहते हैं, पर पानी भी नहीं भर सकते।

गुरुदेव का बचपन का बड़ा ही सुन्दर नाम 'गंगाधर' माता–पिता ने रखा, जिस गंगा के आगे कितने ही नाम जोड़ सकते हैं। जैसे ज्ञान की गंगा, भक्ति की गंगा, विद्या की गंगा, राम की गंगा, महावीर की गंगा, मन चंगा तो कटौती में गंगा।

आचार्य भगवन् तो समता, संयम, तप, त्याग, सत्य की गंगा को पाने के लिए हरपल प्रयास करते रहते हैं। कब पूर्ण सत्य केवलज्ञान बनकर प्रगट हो आपके मन में ये प्रश्न उठता है, आचार्यश्री को किसी से राग नहीं है, मोह नहीं है, फिर उनके परिचय की क्या आवश्यकता है? हर व्यक्ति के मन में प्रश्न अवश्य आता है।

आपका पूछना सही है। गुरुदेव को पूर्व परिचय की कोई आवश्यकता नहीं है। यही सब बातें हमारी भारत भूमि में हुए हरेक पूर्वाचार्यों ने सोची थी। इसी कारण आज हमारे पास में किसी भी आचार्य का पूरा परिचय किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता, कितने ही आचार्यों का तो हमें नाम भी मालूम नहीं है। वे ऋषि, मुनि इतने निस्पृही, निर्मोही थे कि उन्होंने अपना परिचय भी नहीं दिया।

हमने तीर्थंकर भगवान् के वंश में जन्म लिया है, जहाँ अनेक ऋषि–मुनि हुये हैं। इस कारण भारत ऋषि–मुनियों की भूमि कहलाता है। इन ऋषियों ने जन्म से लेकर मरण तक जीने का और मरने का मार्ग बताया है। 24 तीर्थंकरों के बताये मार्ग पर अनेक ऋषियों ने कदम बढ़ाया है और आत्म तत्त्व, स्व सत्ता को अपनी साधना से प्राप्त किया है। इस कारण यह भारत विश्व गुरु कहलाता था। आज भी इस पावन वसुन्धरा पर अनेक मुनि विचरण कर रहे हैं। अपने–अपने मत का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं।

अभी पंचम काल का स्वर्णिम युग चल रहा है, जहाँ भीषण सर्दी, गर्मी, बरसात, तीनों ऋतुओं में नग्न दिगम्बर मुनिराज अपनी चर्या का पालन कर रहे हैं और पंचम काल के अंत तक करते रहेंगे। इन मुनिराजों के कारण ही आज हमें अग्नि दिखाई दे रही है एवं तब तक ही स्वर्ण उपलब्ध रहेगा। जब तक मुनिराज हैं तब तक जैनधर्म है। महावीर भगवान् का शासन पंचमकाल के अंत तक चलता रहेगा।

उस शासन को मुनि मुद्रा ही चला रही है, चला सकती है। वीर प्रभु के शासन में अनेक मुनिराज हुये। 20वीं सदी में **नन्दी संघ के आचार्य गणाधिपति गणधराचार्य श्री 'कुंथुसागर' जी हुये।** उन्होंने सर्वप्रथम जिनको दीक्षा दी, प्रथम शिष्य बनने का सौभाग्य जिनको मिला वो हैं **आचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव।** उनका बचपन कितना शिक्षाप्रद है ? यदि आज हम पुस्तक में नहीं लिखेंगे तो आने वाले समय में केवल उनका नाम ही हमें याद रह जायेगा। गुरुदेव का परिचय जन-साधारण तक पहुँचे, सब लोग उनके ज्ञान का लाभ उठायें। ऐसे ज्ञानी गुरुदेव का बचपन ही अनेक प्रकार की शिक्षा देने वाला है। हम उनके जीवन से बहुत शिक्षा ले सकते हैं।

5 वर्ष की वय में स्कूल में प्रवेश- पहले जब बच्चे 5 साल के हो जाते थे तब माता-पिता उनका नाम स्कूल में लिखवाते थे। आपका नाम भी 5 वर्ष की उम्र होने पर स्कूल में लिखाया गया, परन्तु आपकी बुद्धि, शालीनता, अनुशासन और वाणी में मधुरता देखकर शिक्षक ने आपका नाम पहली क्लास की अपेक्षा 3 (तीसरी) क्लास में लिखा। उस क्लास में भी आपकी पढ़ने की शैली देखकर आपको टीचर ने क्लास का मॉनीटर बना दिया। आप स्वयं पढ़ते थे और क्लास के छात्रों को निःशुल्क पढ़ाते थे। आप प्राचीन गुरुकुल के समान सब कार्य (जैसे पहले छात्र अपने हाथ से करते थे वैसे ही आप) करते थे। आपको देखकर आपके सहपाठी भी अपना कार्य स्वयं करने लगे। एक स्कूल को आपने गुरुकुल की तरह बना दिया। स्कूल की आप स्वेच्छा से साफ-सफाई करते थे। शुरूआत आप करते थे, दूसरे छात्र आपका अनुकरण करते थे। सभी बच्चों को आप एक ही शिक्षा देते थे। हमें एक-दूसरे से हमेशा मिल-जुलकर रहना है।

स्कूल जाते हुए बालक गंगाधर पढ़ते हुए

प्रेम और शांति से एक–दूसरे का सहयोगी बनना है। आपने किसी भी छात्र से अपनी स्टुडेण्ट लाईफ में लड़ाई–झगड़ा नहीं किया। आपका अनुशासन और समय पर आपकी क्लास में उपस्थिति हर शिक्षक को अच्छी लगती थी। हर शिक्षक आपको सम्मान की दृष्टि से देखता था। आप भी उनका पूरा सम्मान करते थे और उनसे सम्मान पाते थे। आपको हर क्लास में मॉनिटर बनाया गया, आपके सामने सभी बच्चे भी डरते थे, आपके मित्र भी आपको विशेष सम्मान देते थे। आप किसी भी कार्य में पीछे नहीं थे। आप शालीन थे और आपकी बुद्धि इतनी तीक्ष्ण थी कि जो शिक्षक आपको क्लास में पढ़ाते थे, उसे आप बड़े ध्यान से सुनते थे और वहीं पर याद कर लेते थे। अलग से याद भी नहीं करना पड़ता था। आपने किसी शिक्षक से अलग से पढ़ाई नहीं की, कभी आपको कोचिंग क्लास में नहीं जाना पड़ा।

खिलौने बनाते हुए बाल गंगाधर

स्वयं बनाते थे अपने खिलौने– आप खेलने के लिये कभी बाजार से खिलौने खरीद कर नहीं लाये, आप स्वयं खेल के उपकरण बनाकर खेलते थे। आपकी बचपन से ही वैज्ञानिक बुद्धि रही है।

बाल गंगाधर भ्रमण करते हुए

वन भ्रमण– आपको जंगल में अकेले घूमना बहुत अच्छा लगता था और प्रकृति से विशेष आपको लगाव था और पानी में तैरना, खुले आकाश में रहना, पेड़–पौधे, नदी, पहाड़, झरने आदि को घंटों बैठकर निहारना, उनकी सुरक्षा करना, पेड़ लगाना ये सब आपको अच्छा लगता था। तैरना और वन में भ्रमण करना ये सूचित कर रहा है कि आपके जो बचपन के प्रिय खेल थे। ये खेल ही आपको संसार का भ्रमण मिटाने के लिये यहाँ तक लेकर आये हैं।

भ्राता से मिली सीख– एक बार आप शाम के समय भोजन करके लेट गये। उसी समय दूसरे नम्बर के भाई आ गये। आपको सुनाते हुये बड़े भ्राता बोले– यह तो खाता है और सोता है। कोई बात कभी–कभी जैसे हम भूल जाते हैं और किसी के बोलने पर बात याद आ जाती है। वही आपके साथ हुआ भाई के बोलते ही आपकी सुप्त चेतना जाग गई। आप अपने भाई पर क्रोधित नहीं हुये, उनको कुछ भी नहीं बोला और उनकी बात का गहराई से चिंतन किया। एक–एक क्षण अनमोल है, इस तरह सोकर मुझे समय नहीं गँवाना चाहिये। मुझे समय का मूल्यांकन करना चाहिये। आगे किसी को कुछ भी कहने का मौका अब मैं नहीं दूँगा। ऐसा दृढ़ संकल्प आपने कर लिया। उस दिन से पढ़ाई करने में अधिक समय लगाने लगे।

बचपन से विशेष जिज्ञासु– आपकी बचपन से ही विशेष जिज्ञासु प्रवृत्ति थी। ऐसे–ऐसे विषय आप पढ़ते थे और स्वयं ही प्रश्न उठाते और उनका उत्तर भी स्वयं ही खोज लेते थे। 6 वर्ष की उम्र से ही हर तरह के साहित्य का अध्ययन करना आपने प्रारम्भ कर दिया था। ज्ञानार्जन करने के लिए आप एकांत स्थान में रहते थे। पढ़े हुये विषय का ध्यान, मनन, चिंतन करते थे। अकेले ही घर से कोसों दूर जंगल में चले जाते थे। जंगली जानवरों से आपको भय नहीं लगता था। 6 वर्ष की उम्र से ही एकांत में ध्यान करते थे। निडर होकर वन में भ्रमण करते थे। आज के बच्चे कमरे में चूहा, छिपकली आदि देख लेते हैं तो डर के मारे चिल्लाने लगते हैं। पूरा घर सर पे उठा लेते हैं।

बालक गंगाधर ध्यान करते हुए

गपशप नहीं करना– आप अपने मित्रों के साथ उठते–बैठते बातचीत करते थे; परन्तु उनके साथ हंसी–मजाक नहीं करते थे। गप्पे नहीं लगाते थे। आपको गंदी हँसी–मजाक कतई पसन्द नहीं थी।

मित्र प्रश्न पूछते तो उत्तर देते थे, परन्तु फालतू बातें नहीं करते थे। आप सब मित्रों में अपनी अलग ही पहचान बनाकर रहते थे। आपकी शांत, गंभीर, मिलनसार प्रवृत्ति थी।

सादा जीवन उच्च विचार– आप व्यसन से कोसों दूर रहते थे, आपने कभी होटल का भोजन भी नहीं किया। सादगी पूर्ण आपका जीवन था। आप ढ़ोंग–दिखावा, फैशन, छल–कपट, मायाचारी, लड़ाई–झगड़ा, क्रोध आदि से हमेशा दूर रहते थे। घर में बच्चे नई वस्तु देखकर लेने के लिये कितनी जिद्द करते हैं। रोते हैं, माता–पिता को परेशान करते हैं। ये सब दुष्प्रवृत्ति आपके अंदर नहीं थी। कभी नये कपड़े के लिये भी आप नहीं बोलते थे। आपको केवल नये–नये साहित्य लेने की पढ़ने की इच्छा ही रहती थी। धार्मिक वैज्ञानिक पुस्तक पढ़ने का एकमात्र आपको शौक था, वह आज भी है।

कभी आप थियटर में फिल्म देखने नहीं गये, जहाँ शिक्षा और संस्कार मिलते थे वहीं आप जाते थे। आप साधु–संतों के पास जाते और उनसे कुछ न कुछ प्रश्न पूछते।

माता-पिता के साथ बालक गंगाधर

मनोरंजन से दूर– माता–पिता उनको घूमने के लिये, मनोरंजन आदि देखने के लिये कहते तो आपको ये सब गलत लगता था। उनको और शिक्षा दे देते, जिन कारणों से नैतिक आचरण दूषित हो ऐसी भौतिक सामग्री से मुझे दूर रहना है। आप बचपन से ही संगीत के शौकीन थे। जिस संगीत में सत्य हो, ऐसे सुमधुर और कर्णप्रिय गीत ही आप पसन्द करते थे।

प्रकृति से प्रेम– आपको प्रकृति से बड़ा प्रेम था। पेड़–पौधे लगाना, उनकी सुरक्षा करना, आप छोटे–छोटे हाथों से छोटे–छोटे पेड़ लगाते थे। उनमें अपने हाथ से पानी डालते थे। उनकी साफ–सफाई करते, आपने अपने कमरे के सामने एक नारियल का पेड़ लगाया था। जैसे–जैसे पेड़ में पत्ते आते उनकी लम्बाई बढ़ती वैसे–वैसे उनकी कल्पना शक्ति भी बढ़ने लगी, जैसे यह पेड़ बड़ा होकर भारी मात्रा में ऑक्सीजन देगा। छाया देगा, इसके फल हमें मधुर पानी पिलायेंगे इत्यादि सोचते हुए आपने अपने घर के चारों तरफ पेड़ ही पेड़ लगा दिये। आप घर में हमेंशा अपने कमरे में अकेले ही रहते थे। कमरे में जब खिड़की के पास बैठकर पढ़ते थे तो सब पेड़–पौधों को निहारते रहते थे।

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव बचपन में पेड़ लगाते हुए

क्रोध पर समता का जल– एक दिन आप जब स्कूल से आये तो आपकी नजर सबसे पहले नारियल के पेड़ पर पड़ी, नारियल का पेड़ जब छोटा–सा था, आपने देखा कि किसी ने नारियल के पत्ते पर मिट्टी डाल दी है, आप पेड़ के पास में गये और जोर–जोर से चिल्लाने लगे। मेरे नारियल के पेड़ पर किसने मिट्टी डाली है। माँ को जोर से पुकारा, माँ ने कुछ जवाब नहीं दिया, फिर पिताजी को पुकारा। पिताजी आपके पीछे आकर खड़े हो गये, आप गुस्से में चिल्लाते रहे। कोई भी मेरी बात का जवाब क्यों नहीं देता है? बताओ ? किसने मिट्टी डाली है ? जब कुछ जवाब नहीं मिला तो आप चुप हो गये, पीछे मुड़े तो देखा आपके पिताजी खड़े थे, पिताजी शांति से आपकी सब बातें सुन रहे थे। पिताजी को शांत देखा तो आपको बड़ा दुःख हुआ, मैं चिल्ला रहा हूँ। पिताजी शांति से सुन रहे हैं।

थोड़ी देर आप अपने पिताजी को देखते रहे, पिताजी ने देखा कि अब ये शांत हो चुका है तो बड़े प्यार से आपके सिर पे हाथ फेरते हुये बोले– बेटा पेड़ पर मैंने मिट्टी डाली है। पिताजी की प्यार भरी वाणी सुनकर आप पानी–पानी हो गये। मन में आपको बड़ा खेद हुआ। ये मैंने क्या किया ? बिना सोचे–समझे मैं क्यों चिल्लाया, आप रोते हुये अपने कमरे में चले गये, उस दिन आपने भोजन भी नहीं किया। आधी रात तक एक ही बात दिमाग में घूमती रही, आज मैंने पिताजी का अपमान कर दिया। पश्चात्ताप करते रहे, पिताजी के शांत स्वभाव ने आपको शांति का संदेश दिया, शांत रहना सिखा दिया। आपने उसी रात में मन में ये संकल्प कर लिया। आज के बाद बिना सोचे–समझे क्रोध नहीं करूँगा। किसी को गलत नहीं बोलूँगा। आज हमें अपने ऐसे गुरु पर गर्व होता है, आज के बच्चों को अगर माता–पिता कुछ बोल देते हैं तो बच्चे मरने की धमकी देते हैं। माता–पिता को बच्चे अपने अनुसार चलाना चाहते हैं।

आदर्श पुत्र का कर्त्तव्य आपने निभाया, बचपन तो नटखट वाला होता है। परन्तु आप बचपन से ही गंभीर थे, पिता के शांत स्वभाव ने आपके जीवन को ही बदल दिया।

सुभाषचन्द बोस

राष्ट्रभक्ति, देशभक्ति से ओत–प्रोत– देश की सेवा करने की भावना आपके रग–रग में थी। विश्व का कल्याण मेरे द्वारा हो, जन–जन की सेवा करूँ। सुभाषचंद बोस की तरह आपके विचार थे। जो क्रांति नेताजी ने की है, वैसी क्रांति मैं भी करूँ।

स्वभाव बुद्धि की परीक्षा– जब आप 4–5 साल के थे तब अपने पिताजी के साथ मामा के यहाँ गये, मामा के गाँव में बहुत बड़ी केनाल थी।

उसमें पानी बह रहा था। वापस जब केनाल के रास्ते से ही अपने घर आ रहे थे। तब एक या दो बजे होंगे। केनाल के पास बड़े–बड़े आम के तीन पेड़ थे। उन पेड़ों की छाया में एक व्यक्ति सो रहा था। उस व्यक्ति के आस–पास 10, 20, 100 के नोट बिखरे थे। आपने सारे नोट एकत्रित किये और उस व्यक्ति को जगाया, उसे पैसे दिये और अपने घर आ गये।

बच्चे पैसों को देखकर उठाने दौड़ जाते हैं, चुपचाप अपनी जेब में रख लेते हैं। पैसे देखकर चोरी करना सीख जाते हैं। परन्तु आपने जिसके पैसे थे, उसको दे दिये।

शिक्षक से माफी मँगवाई– आपको पढ़ने का बड़ा शौक था। रात को 1–2 बजे तक अध्ययन करते थे। जब आप 7वीं क्लास में थे। उस समय 7 वीं बोर्ड की परीक्षा चल रही थी। आपके टीचर उस समय नये आये थे। परीक्षा होने के कारण आप बोर्डिंग में सोते थे। वैसे भी जो बच्चा पढ़ने में होशियार होता है, उसकी सब व्यवस्था सरकार निःशुल्क करती है। आपकी सब व्यवस्था स्कूल की तरफ से ही होती थी। परीक्षा के समय 1 बजे पढ़ाई करके आप सोये थे। 3 बजे के करीब नया टीचर बच्चों को जगाने के लिये आया, उस टीचर ने बच्चों को आवाज देकर नहीं उठाया, बेंत से मार–मारकर बच्चों को उठाया। आपको भी टीचर ने बेंत से मार दिया। प्रातःकाल होते ही आपने उस टीचर की शिकायत प्रधानाध्यापक (प्रिंसिपल) से की, सारी घटना रात्रि की बताई। प्रधानाध्यापक ने आपको आश्वासन दिया। आगे ऐसी घटना नहीं होगी और उस टीचर ने आपसे माफी माँगी, उस टीचर से सभी बच्चों की सुरक्षा हुई।

आपको कभी आपके माता–पिता व बड़े भाइयों ने नहीं मारा; क्योंकि आप हर काम को सलीके से करते थे। रूचि और लगन से काम को अंजाम देते थे। आपकी कार्य कुशलता को देखकर आपके माता–पिता आपको अकेले सब जगह जाने देते थे।

सेवा की भावना– बचपन से ही आपमें सेवा की भावना थी। कहीं कोई भी रोगी, बीमार, गरीब, असहाय दिखते तो आप उसका दुःख दूर करते, जिसको जिस वस्तु की आवश्यकता होती उसके पास स्वयं जाकर देते थे। एक बार एक बुढ़िया को लकड़ी ले जाते देख उससे आपने पूछा– अम्मा तुम इतनी उम्र में इतना बोझ क्यों उठाती हो, तुम्हारे कोई बच्चा नहीं है। बुढ़ियाँ अम्मा ने अपनी तकलीफ आपको नहीं बताई, बस उसका उदास चेहरा सब कुछ आपको बता गया, ये दुःखी क्यों है ? मुझे पता करना चाहिये, यह घटना बिहार के एक गाँव की है। आप उसकी झोपड़ी में पहुँच गये। वहाँ जाकर आपने देखा उसका जवान बेटा यक्ष्मा (टी.बी.) रोग से ग्रसित है। उसका शरीर सूखता जा रहा है। आपने उसी समय निश्चय कर लिया, इन दोनों की मैं मदद करूँगा। उसको आप रोज दवाई फल ले जाकर देने लगे। थोड़े ही दिन में वह युवक स्वस्थ हो गया। आप पशु–पक्षियों की जानवरों की सेवा कर उनको भी स्वस्थ कर देते थे। पेड़–पौधों की सेवा करना, सेवा से आनंद का अनुभव करते थे। स्वयं की प्रेरणा से ही आप सारा कार्य करते थे। किसी के कहने पर अगर हम सेवा करते हैं तो वह सेवा नहीं है। जिसके अंतरंग में प्रेम, करुणा, दया व वात्सल्य का भाव होगा वही मन से सेवा करेगा। बोलने पर जो करेगा वह तो दिखावा है, ढोंग है। दिखावे की सेवा थोड़ी देर के लिये की जाती है और प्रेम की सेवा जब तक व्यक्ति स्वस्थ ना हो जाये तब तक की जाती है। अंतरंग परिणामों से की गई सेवा अधिक समय तक किसी को रोगी नहीं रहने देगी। सेवा करते समय आप कभी भी ग्लानि नहीं करते थे। सेवा करने से रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

बाल गंगाधर दवाई देते हुए

बचपन से ही बहुभाषी थे– जब आप आठवीं क्लास में थे तब एक दिन क्लास में निरीक्षण करने इन्स्पेक्टर आया। उनका सभी बच्चों ने खड़े होकर अभिवादन किया। इन्स्पेक्टर ने कहा– बच्चों ! आप लोगों को इंग्लिश तो आती ही होगी। किसी भी बच्चे ने हाँ नहीं बोला– तब आपने खड़े होकर कहा– सर मुझे इंग्लिश आती है। आपको इंग्लिश बोलने की अच्छी प्रेक्टिस थी। आठवीं क्लास से ही आप विभिन्न भाषाओं को बोलते थे, जानते थे। इतनी छोटी उम्र में आपको चार भाषा का ज्ञान था। आज तो हम बड़े लोग भी सब भाषा नहीं बोल पाते हैं। आप तो बचपन से ही अनेक भाषाओं को जानते थे और बोलते भी थे। आपकी बराबरी उस समय में भी कोई बच्चा नहीं कर सकता था। आप ऐसे मेधावी, विलक्षण छात्र थे। आज तो बच्चे नाही हिन्दी बोल पाते हैं नाही इंग्लिश।

बाल गंगाधर भाषण देते हुए

इन्स्पेक्टर ने कहा– आपको इंग्लिश में ऊँट पर भाषण देना है। सब एक दूसरे का मुँह देखने लगे, डरने लगे, भय से काँपने लगे। आप खड़े हो गये और बोले– सर मैं बोलता हूँ। आपने 10 मिनट तक इंग्लिश में बहुत ही सुन्दर भाषण दिया। जबकिआपने कभी ऊँट को देखा ही नहीं था, फिर भी ऊँट पर आपने भाषण दिया था। इन्स्पेक्टर आपसे बहुत प्रसन्न हुआ। उन्होंने आपकी बहुत तारीफ की, स्कूल के सभी अध्यापक भी बड़े खुश हुये, निरीक्षक ने आपको प्रोत्साहित किया।

सक्रियता से आप हर कार्य में भाग लेते थे– जब भी कोई वाद–विवाद प्रतियोगिता या अन्य भी कुछ कार्यक्रम होते तो आप उसमें उत्साह के साथ भाग लेते थे, ज्ञान–विज्ञान पर भाषण आदि देते थे, पर्यावरण की सुरक्षा के लिये भाषण देते थे। धार्मिक, सांस्कृतिक, श्लोक आदि के माध्यम से साहस पूर्वक भाषण देते थे और इनाम प्राप्त करते थे।

आजकल के बच्चे अगर एक छोटी सी पोयम सुना देते हैं तो माता–पिता को इतना अहंकार आ जाता है कि घर–मोहल्ले में कहते फिरते हैं, हमारा बच्चा बहुत होशियार है। बहुत इनाम प्राप्त करता है। चाहे उस बच्चे को अच्छे से कपड़े भी पहनाना नहीं आते हो, 5 साल की उम्र में कोई बच्चे अपने हाथ से स्वयं का काम नहीं करते हैं। आप तो 5 साल की उम्र में ही सब काम कर लेते थे। आप छोटे होकर भी बुद्धि से बहुत बड़े थे, आपकी तुलना किसी बच्चे से नहीं कर सकते। आप तो बचपन से ही बृहस्पति के समान थे। सरस्वती माता की विशेष अनुकम्पा आप पर थी। आपको भाषण में कोई भी सबजेक्ट मिलता, आप उस पर तत्काल भाषण दे देते थे, कभी मना नहीं करते थे। आप कभी भी डरते नहीं थे। निडर होकर कार्य करते थे। इसी कारण आपको हर क्षेत्र में सफलता मिलती रही।

गाँव शहर से श्रेष्ठ होता है– आपको एक बार पर्यावरण और ग्राम संस्कृति को जोड़ते हुये भाषण देने का अवसर मिला, उसमें आप धारा प्रवाह बोले। उस भाषण में ग्राम की विशेषता बताई, ग्राम में प्रेम, वात्सल्य रहता है। आपने ग्राम को श्रेष्ठ सिद्ध किया। ग्राम की श्रेष्ठता से प्रसन्न होकर शिक्षक ने आपको प्रथम पुरस्कार दिया। आपको वैसे तो अनेक पुरस्कार मिले थे परन्तु ये आपको प्रथम पुरस्कार मिला था, उसमें आपको सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन के द्वारा लिखी गई पुस्तक और एक दर्पण मिला।

भविष्य के सूचक : पुस्तक और दर्पण– यह पुस्तक और दर्पण हमें बता रहे हैं कि जब भी आप अपना मुँह दर्पण में निहारोगे तो अंतरंग के परिणामों को उज्ज्वल बना सकते हो। पुस्तक सूचित कर रही है, जब आप ज्ञान के साथ कदम बढ़ायेंगे तो महान ज्ञानी तार्किक चुड़ामणी बनेंगे। आपने बचपन से ही ज्ञान के साथ तन–मन को पवित्र उज्ज्वल बनाया। तन को स्वच्छ बनाता है दर्पण और मन को पवित्र बनाती है पुस्तक। आपको हर कदम पर सफलता मिलती गई, उत्थान होता गया।

जहाँ भी प्रतियोगिता होती थी वहाँ पर आपको ही अध्यक्ष बनाया जाता था। आप निष्पक्ष भाव से अपने पद का निर्वाह करते थे। किसी के साथ कभी भी अन्याय नहीं करते थे।

अन्याय कभी भी नहीं सहते– एक बार आपके घर पर सरकारी लोग आये, वो आपके पिताजी की जमीन को अपने कब्जे में करना चाहते थे, जमीन का नोटिस लेकर आये, घर के सभी लोग डर गये, आपने वह नोटिस पढ़ा, आपने सबको आश्वस्त किया, कहा–घबराने की कोई बात नहीं है, कोई चिंता मत करो, पिताजी को भी कह दिया। आप कोर्ट में मत जाना, इसमें ऐसा कुछ भी नहीं लिखा है। आप सब लोग निश्चिन्त रहो। थोड़े दिन बाद फिर से एक कर्मचारी नोटिस लेकर आया, आप दरवाजे पर खड़े होकर बोले– यह जमीन पहले से ही हमारी है, इस पर हमारा अधिकार है। हमारे यहाँ से कोई कोर्ट मे नहीं आयेगा, ना ही कोर्ट का आदेश पालन करेंगे। यह केस यही पर बन्द कर दीजिये। हमारे पास में जमीन के कागजात लिखित रूप में है। ये देख लीजिये और केश डिसमिस कर दीजिये। कर्मचारी आपकी निडरता को देखकर और लिखित दस्तावेज पढ़कर चुपचाप क्षमा माँगकर चला गया।

संगठन में रहना सिखाया– एक समय की बात है– आपके पड़ोस में रहने वाले दो भाइयों में कुछ विवाद हो रहा था। उस समय आप आठवीं क्लास में पढ़ रहे थे। विवाद इतना बढ़ गया कि उनके घर में पुलिस आ गई। आप स्कूल से आ रहे थे तब पुलिस वालों को उनके घर में बैठा हुआ देखा, आपने जल्दी से अपनी पुस्तकें रखी और उनके घर में गये। पुलिस वालों से चर्चा की। आपने पूछा– सर ये बताइये, इन दोनों भाइयों की लड़ाई के आप साक्षी हैं क्या ? एक ने आपको पैसा दे दिया तो वह निर्दोषी हो गया। अन्य के पास इतनी शक्ति नहीं कि वो भी आपको पैसे दे सके। आप पहले सच्चाई तो जानले। एक निर्दोष है और दूसरा दोषी है।

आपको प्रेम से इनको समझाना चाहिये वो तो आप नहीं कर रहे हैं। आप यह केस यही समाप्त कीजिये और जाइये वरना आपके विरुद्ध हम सब केस लड़ेंगे, आप इसी समय ये एफ.आई.आर. फाड़ दीजिये। पुलिस वाले आपकी निडरता देखकर, केश की फाईल को फाड़कर चले गये। आपने दोनों भाइयों को समझा दिया। आप बचपन से ही बड़े निडर, निर्भीक थे। किसी के साथ अन्याय होता हुआ नहीं देखते थे, हमेशा सत्य का पक्ष लेते थे, अन्याय बर्दाश्त नहीं करते थे, असत्य का कभी साथ नहीं देते थे।

आप घरवालों के लिये सुरक्षा कवच थे– आप घर में छोटे होकर भी घरवालों के लिये सुरक्षा कवच बन जाते थे। आपके पिताजी पर जब–जब भी समस्यायें आईं, आपने हर समस्या का समाधान किया। आपको साहसपूर्ण कार्य करना बहुत अच्छा लगता था। जैसे किसी पड़ोस में कोई (लीडर) दादा होता है, वह सबकी सुरक्षा करता है। वैसे ही आप अपने मोहल्ले के दादा थे। अड़ोस–पड़ोस के लिये साहसी नेता थे। आपको किसी नेता के सामने भी डर नहीं लगता था। गाँव के विधायक से काम करवाना है या पुलिस वालों से काम करवाना हो तो आप अपने बल पे सब का काम करवा लेते थे। उनसे चर्चा करना हो तो आप बड़ी सरलता से कर लेते थे। स्वयं अकेले ही संस्थाओं में जाकर चर्चा कर लेते, गलती सामने दिखाई दे तो विरोध करने में भी आप नहीं डरते थे। आपकी एक ही भावना थी। मैं देश का एक सच्चा नेता बनूँगा, कभी भी भारत और भारतीयों पर अत्याचार नहीं करूँगा, न ही होने दूँगा।

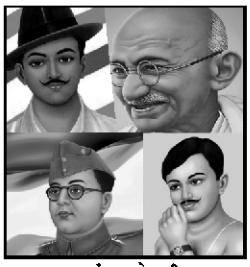
स्वतंत्रता सेनानी

संगठन में शांति स्थापित की– एक बार आपके जन्म स्थल में दो गुट बन गये, कुछ लोग बड़े गुट में तो कुछ लोग छोटे गुट में शामिल हो गये। आपस में दरार पड़ गई। कोई किसी से बात भी नहीं करते थे। लेन–देन व्यापार भी बन्द हो गया।

एक–दूसरे की दुकान से क्रय विक्रय भी बन्द हो गया। सबके मन में घृणा व ईर्ष्या की आग बढ़ गई। एक–दूसरे से मिलना भी छोड़ दिया, किसी के घर में दुःख आ जाता तो उस दुःख के समय में भी कोई किसी के घर में नहीं जाते थे। एक–दूसरे की केवल बुराई करते रहते थे। साथ में उठना–बैठना, खाना–पीना, आना–जाना सब बन्द हो गया। आपको ये सब बिल्कुल भी अच्छा नहीं लग रहा था। घरवाले आपसे बोले– इससे नहीं बोलना उससे नहीं बोलना, किसी के घर आना–जाना नहीं, जब सब तरफ से रोक लगा दी तो आपने सोचा– क्या इतने छोटे से गाँव में हम मिल–जुलकर नहीं रह सकते ? यदि हम आपस में बात नहीं कर सकते हैं तो तीसरा व्यक्ति और हमारे बीच में आकर और फूट डालेगा। आपका मन बड़ा दुःखी हुआ। अब तो सबको एक करना ही चाहिये। हम आपस में कब तक गुटबाजी बनाकर रहेंगे। आपसी फूट से हम सब लोगों का ही नुकसान होगा। कैसे भी करके सबको एक करना चाहिये। हमारे विचारों में जो मतभेद चल रहा है, उसे मिटाना चाहिये। आपने सोचा अगर मैं इतना सा काम नहीं कर सका तो आगे जाकर देश को संगठन का पाठ कैसे पढ़ाऊँगा, शुरूआत तो यहीं से करना चाहिये।

उस समय आप पाँचवीं (5वीं) क्लास में पढ़ते थे। हम विचार करें कि पाँचवीं क्लास का बच्चा कितनी बड़ी बात सोच रहा है। चिंतवन कर रहा है। जो उम्र आपके खेलने खाने की थी उस समय आप एकता और संगठन की बात सोच रहे थे। आपने निश्चित कर लिया। शुरूआत मैं अपने से करूँगा। देखता हूँ मुझे कौन रोकता है ? मैं कितने परसेन्ट इस कार्य में सफल होता हूँ। मैं आपसी दरार को मिटाकर रहूँगा। ये काम तो मैं अकेला ही कर लूँगा। इस कार्य में मुझे किसी की आवश्यकता भी नहीं है।

आपके पिताजी बड़े गुटवालों के साथ में थे, आपका एक मित्र छोटे गुट में था। उससे आपकी गहरी दोस्ती थी। आपने उसके घर पर आना–जाना शुरू कर दिया।

बड़े गुटवालों को आपका उसके घर पर आना–जाना अच्छा नहीं लग रहा था। उन सबने आपसे बोला तुम हमारे गुट के होकर उनसे बातचीत करते हो, उनके साथ रहते हो, वो हमारे शत्रु पक्ष के लोग हैं। ये तुम अच्छा नहीं कर रहे हो। अगर तुमने अपनी मनमानी करी तो तुम्हारे परिवार को इस गुट से निकाल देंगे। आप चुपचाप सुनते रहें, कुछ भी जवाब नहीं दिया। बड़े गुट वाले लोग आपके परिवार पर नाराज भी हुये; परन्तु आपके सामने किसी की नहीं चली। आपके पिताजी भी आपके आगे हार जाते थे, वो मजबूर थे, उनकी आपके सामने चलती नहीं थी। वो कुछ बोलते तो आप उनको भी प्यार से समझा देते थे। आप चिंता मत कीजिये सब ठीक हो जायेगा। आपको कोई नहीं निकालेगा, किसी में इतना दम नहीं है। वो सब तो डराने के लिये केवल धमकी देते हैं। मैं कोई बुरा या गलत काम तो नहीं कर रहा हूँ। मैं जो कुछ भी करूँगा वह समाज हित के लिये ही करूँगा। आप ही बताइये। उन लोगों ने क्या बिगाड़ा है हमारा ? हम आपस में क्यों लड़ रहे हैं ? हम एक गाँव के होकर आपस में मिलकर नहीं रहे तो, देश की एकता कैसे बचायेंगे ? पिताजी आपको कुछ भी नहीं बोले– आपने उनसे कहा जो भी मैं कर रहा हूँ, मुझे करने दीजिये। मैं बड़े लोगों से कुछ भी नहीं बोलूँगा, उनका अपमान नहीं करूँगा, उनका अनादर नहीं करूँगा। मेरी भावना है सबमें प्रेम की भावना बढ़े, हम आपस में मिल–जुलकर रहें, मन का मैल साफ हो जाये।

आप ही बताइये हम कब तक मन–मुटाव रखेंगे, ये तनाव किसके लिये ? हम क्यों लड़ रहे हैं ? हम सबमें पहले प्यार था, अब नफरत क्यों हो गई है ? हमारा प्रेम क्यों समाप्त हो गया ? हम पहले एक दूसरे की सेवा करते थे। किसी के यहाँ कोई मर जाता था तो हम दो आँसू बहाते थे। अब हमें दुःख तक नहीं होता ? पहले भी हम ही लोग थे आज भी हम ही लोग हैं। किसी के कष्ट में दुःख में हम रंचमात्र भी दुःखी नहीं होते, किसी की पीड़ा में हम सहयोगी नहीं बनते। हमें दुःख बाँटने वाला चाहिये।

हम सब तो केवल दुःख बढ़ाने का ही काम कर रहे हैं। मेरे अन्दर जो पीड़ा है मैं बस उसे ही दूर करना चाहता हूँ। मैं किसी के घर-घर जाकर तो ये नहीं कह सकता कि हम सब एक हो जायें। परन्तु जो हमसे अलग हुये हैं उनसे जाकर मिल जायें। मिलने से हमारा बड़प्पन ही लगेगा। मिलने से हम छोटे नहीं हो जायेंगे। वो हमारे शत्रु नहीं हैं। हमने उनको अपने मन से ही एक-दूसरे का शत्रु बना लिया है। शत्रु कभी बनते नहीं हैं। शत्रु तो बनाये जाते हैं। जो हमारे सगे-संबंधी थे उन्हीं को हमने अपना शत्रु मान लिया है। यह कहाँ का न्याय है ? हमारे मन में जो उनके प्रति राग, द्वेष, क्रोध, ईर्ष्या की भावना भर गई है उसे समता और शांति से बुझाना होगा।

पिताजी की सीख- जब आप अपनी बात बोलकर चुप हो गये तब आपको आपके पिताजी ने समझाया, तू कितनी बड़ी-बड़ी बातें करता है, सारी दुनियाँ की चिंता तो तुझे ही हो रही है। इस पंचायत में पढ़कर तू क्या करेगा? क्या वो लोग तेरी बात मान लेंगे, नहीं मानेंगे ? तू अभी छोटा है, छोटा ही रह, उम्र से ज्यादा बड़ा मत बन, तू किस-किस को प्रेम का पाठ पढ़ायेगा। लोग मुझे ताने देते हैं। तुम्हारा लड़का तुम्हारी बात क्यों नहीं सुनता, वो शत्रु पक्ष के लोगों के साथ क्यों रहता है। उनके साथ दिनभर क्यों रहता है ? मैं तो सुन-सुनकर थक गया हूँ। मैं किस-किस को समझाऊँ, तू आखिर करना क्या चाहता है ? अगर तू मेरी बात नहीं मानना चाहता है तो छोटे गुट में जाकर शामिल हो जा, ताकि लोग मुझे कुछ बोलेंगे तो नहीं। तेरे ये दो भाई और भी हैं। ये तो किसी पंचायत में नहीं पढ़ते, बस तुझे तो यही सब काम करना है। कभी इसकी लड़ाई मिटाना तो कभी उसकी, कभी पड़ोसी को जेल से छुड़ाता तो, कभी गाँव वालों को, मैं तो तेरे आगे हार गया रे, तू क्या चाहता है ?

आपने शांति से पिताजी को जवाब दिया, मैं तो बस सबके बीच में शांति चाहता हूँ और कुछ नहीं ? आपने देखा कि पिताजी शांत हो गये हैं।

तब आपने विचार किया– जिस कार्य का सब लोग विरोध करते हैं, उस कार्य में अवश्य ही सफलता मिलती है। अब तो मैं अवश्य ही दोनों गुट को एक करके रहूँगा।

जो बालक केवल पाँचवीं क्लास पढ़ रहा हो वह बालक इतनी बड़ी बात करता है तो अपने आप में बहुत बड़ी बात है, छोटी–सी बात नहीं। यह घटना काल्पनिक नहीं है। यह बात सत्य है। आपने जो सोचा वह आपने करके दिखाया। जो कुछ मैं यहाँ लिख रही हूँ वह हमारे आराध्य गुरुदेव आचार्यरत्न श्री कनकनंदी जी गुरुदेव की बचपन की घटना है। आप विशेष पुण्य परमाणुओं को लेकर धरती पर अवतरित हुये थे। पूर्व भव के संस्कार आपके बचपन से ही थे। आपने सोचा जो मैंने बीड़ा उठाया है, अब तो इसे पूरा करना ही है। आप घर से निकले और घर के सामने वाली गली में चले गये, उस गली में आपका विरोधी दल का एक घर था, उस घर में ही आपका प्रिय मित्र था, मित्र गली में ही मिल गया। उस मित्र के कंधे पर हाथ रखकर बोले, चलो तुम्हारे घर चलते हैं। मित्र ने भी कहा– हाँ चलो, आप उससे हँसी–मजाक करते हुए जब जा रहे थे तब बड़े गुट वाले भी आपको जाते हुये देख रहे थे। वो लोग आपस में बातें कर रहे थे। देखो इस गंगाधर को, ये अपने शत्रु के साथ कैसी बातें करते हुये जा रहा है। इसे तो किसी भी बड़े व्यक्ति का डर भी नहीं है। हम सब इन सबसे नफरत करते हैं। इनको देखना भी पसन्द नहीं करते हैं। यह तो इनसे अच्छे से बात कर रहा है। इनका परिवार हमारे गुट में है। इसके पिताजी हमारे गुट में है। ये अलग चल रहा है। जितने लोगों ने आपको जाते देखा, सबकी नजर आपके ऊपर थी। आप सबको यही बताते हुए जा रहे थे, कोई हमारा शत्रु नहीं है। हम सब एक हैं।

गंगाधर अपने मित्र के साथ जाते हुए

सब लोग आपस में बातें कर रहे थे, इसको देखो यह शत्रु के लड़के से दोस्ती कर रहा है, इनके साथ उठता–बैठता है। कंधे पर हाथ रखकर आराम से चल रहा है। यह इसका मित्र है। आप बचपन से ही ऐसे–ऐसे काम करते थे कि आपको कोई बच्चा नहीं मानता था। बड़े लोगों की तरह ही आपका हर क्षेत्र में सम्मान था। हम सब एकजुट होकर इसके पिता को बोलेंगे। ये हम लोगों से मानने वाला नहीं है।

अब तो इसके पिताजी की मीटिंग लेनी पड़ेगी, उनको ही गुट से अलग कर देते हैं। आप सबकी बातें सुनते हुये मित्र के साथ उसके घर पर गये। उनसे सारी बात करी। आप दो मित्रों की एकता देखकर अन्य बाल मित्र भी एकत्रित होने लगे। आपस में हँसते हुए खेलने लगे। बच्चों का संगठन देखकर दोनों गुटों का वैरभाव समाप्त हो गया। पूरा गाँव एक हो गया। इस तरह आपने आपस का मनमुटाव दूर किया, सबके दिल में प्रेम की ज्योति जगाई। सबके मन के मैल को अपनी वाणी से दूर किया। दोनों गुट को पुनः एक बना दिया। सब लोग पहले के समान ही मिलजुल कर प्रेम से रहने लगे। आपके पिताजी को आपके इस कार्य से अति प्रसन्नता हुई। उन्होंने कसम खा ली आगे कभी भी मैं इसके किसी भी कार्य में बाधक नहीं बनूँगा, ये स्वयं ही इतना समझदार है। ये जो कुछ भी करेगा सबके हित में ही करेगा, इसे कभी नहीं रोकूँगा।

विज्ञापन का विरोध– जब आप 11वीं क्लास में थे तब राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का एक विशाल स्तर पर शिविर लगा, उसमें आपने भी भाग लिया, आपको हर विषय में रूचि थी, जहाँ भी जिस विषय का ज्ञान मिलता आप उस क्षेत्र में आगे रहते, हर जगह बढ़–चढ़कर हिस्सा लेते। एक दिन शिविर में एक पत्रिका छपकर आई, उसमें बीड़ी का विज्ञापन देखा। विज्ञापन देखकर आपने वहाँ के प्रचारकों से पूछा सर इस पत्रिका में बीड़ी का विज्ञापन क्यों दिया है ?

प्रचारक ने कहा– इस कार्य के लिये धन की आवश्यकता है, बिना विज्ञापन के पैसे नहीं आयेंगे। आपने कहा– फिर आप संस्कार और शिक्षा कैसे देंगे ? कैसे इन बच्चों व समाज को व्यसन मुक्ति का संदेश देंगे ? इस तरह तो आप लोग ही व्यसन का प्रचार कर रहे हैं। वो प्रचारक आपके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाया। उसने कहा– आप पदाधिकारी से जाकर पूछो। आपने पदाधिकारी से पूछा– उन्होंने भी आपको वही जवाब दिया। हमें पैसा चाहिये, इसलिये विज्ञापन देना ही पड़ेगा। आपने कहा– सर आप बिना विज्ञापन के पैसे एकत्रित करेंगे तो भी आपको पैसा मिल जायेगा। इस शिविर से व्यसन मुक्ति का संदेश जाना चाहिये, न कि व्यसन का प्रचार होना चाहिए। आखिर आपकी बात मान्य हुई और बीड़ी का विज्ञापन हटा दिया गया।

आपकी तर्कणा शक्ति विशिष्ट थी– आपकी तर्कणा शक्ति बहुत अच्छी थी। आप हमेशा कुछ न कुछ पढ़ते ही रहते थे, मन में शंका आती, कभी–कभी शंका का समाधान आप स्वयं कर लेते थे। कहीं विद्वानों से आप प्रश्न पूछते, उत्तर नहीं मिलने पर भी प्रयास करते रहते थे। आपके प्रश्नों का उत्तर सामान्य व्यक्ति तो दे नहीं पाते थे, आपकी जिज्ञासा इतनी कठिन होती थी, जिसे पूरा ज्ञान ना हो वह तो आपको उत्तर ही नहीं दे पाता था।

एक प्रश्न आपको लेखक के पास ले गया– जब आप 8वीं क्लास में थे तब एक सहपाठी (मित्र) से आपकी अच्छी मित्रता हो गई थी, उस बच्चे के दादाजी एक लेखक थे। उन्होंने एक पुस्तक लिखी थी, उनकी पुस्तक आपने पढ़ी। उसमें एक विषय लिखा था। उसका सत्य तथ्य जानने के लिये मित्र से पूछा। उसने कहा– मित्र ! तुम मेरे दादाजी से पूछना। मुझे तो ये सब नहीं आता। आप उसके दादाजी के पास में गये। उनसे पूछा– इस पुस्तक में लिखा है एक भक्त की भक्ति से प्रेरित होकर पाषाण की प्रतिमा बोलती है। यह कैसे संभव है, आपने लिखा है तो क्या आपने प्रत्यक्ष में मूर्ति को बोलते हुये देखा है। स्वयं लेखक सही उत्तर नहीं दे पाये।

आत्म साक्षी से लिया ब्रह्मचर्य– आपके मन में देशभक्ति, विश्वकल्याण की भावना रग–रग में भरी थी। मैं विश्व का कल्याण करूँगा, बड़ा होकर या तो नेता बनूँगा या वैज्ञानिक नहीं तो साधु। अनेक नियम आप स्वेच्छा से ले लेते थे। जब आप 8वीं क्लास में थे तब आत्म साक्षी पूर्वक आपने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया था। मैं संसार नहीं बसाऊँगा। आपने जब ब्रह्मचर्य व्रत लिया था तब आप 14 साल के थे।

नेता

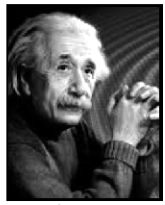
वैज्ञानिक

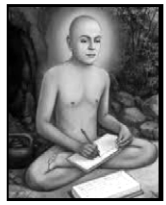
साधु

उस समय में बच्चे ये भी नहीं जानते होंगे कि ब्रह्मचर्य व्रत क्या होता है? आपने अपने अन्तरंग भावों से प्रेरित होकर अपने ज्ञान से यह व्रत ग्रहण किया था। हमारे आचार्यों ने ग्रंथों में लिखा है कि जो अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हैं वह कुछ भवावतारी होते हैं, निश्चित मोक्ष में जाते हैं।

आपका एक–एक वाक्य महान् बनाने वाला था– आप बचपन से ही बड़े–बड़े नगरों में अकेले ही चले जाते थे, बड़े लोगों से सम्पर्क भी कर लेते थे। छोटे होकर भी बड़े लोगों से बातें कर लेते थे। यह आपकी बुद्धि की परिपक्वता का परिचायक है। बड़े लोग भी आपकी बात बड़े ध्यान से सुनते थे। आपकी बातों में बड़ा रहस्य रहता था। सुनने वाले भी चिंतवन करने पर मजबूर हो जाते थे। वो भी यह कहने लगते कि ये बालक है या कोई महापुरुष जो इतनी ज्ञान की बातें करता है और समझा रहा है। इसकी बातों में सत्य तथ्य महसूस होता है। उनको भी आपकी बातें अच्छी लगती थी। अन्याय, अनीति, भ्रष्टाचार के खिलाफ आप बचपन से ही आवाज उठाते थे। सत्य को स्वीकार करने वाले व्यक्ति का आप कभी भी अपमान नहीं करते थे।

अकेले जाते बाल गंगाधर

छोटा हो या बड़ा किसी का आप अपमान नहीं करते थे। कुतर्क करने वाले को सौ तर्क देकर सत्य का बोध करा देते थे। आपकी वाणी से प्रभावित होकर हर व्यक्ति आपकी बात को स्वीकार करता था। आपका जीवन बड़ा ही आदर्शमय था। आपके विचार अति उज्ज्वल थे।

राजनीति में असत्य– आपने अपने जीवन में तीन लक्ष्य बनाये थे। नेता, वैज्ञानिक या साधु। आप सबसे पहले राजनीति की ओर अग्रसर हुये, आप देश की सेवा करना चाहते थे परन्तु राजनीति में नेताओं के साथ रहने से पता चला, यहाँ केवल असत्य है, जबकि सत्य से बड़ा कोई नहीं है। आपने सोचा मैं अकेला कुछ नहीं कर सकता इसलिये मुझे यहाँ नहीं रहना है। यहाँ भ्रष्टाचार, अन्याय, अनीति है। पग–पग पर मायाचारी हो रही है। मुझे ऐसा नेता नहीं बनना है। जहाँ सत्य होगा वही मैं जाऊँगा। सत्य का सबको दर्शन कराऊँगा। जीवन का सत्य क्या है ? बस सत्य को पाना ही मेरा लक्ष्य है।

सत्य की खोज में आपने अनेक संतों से भेंट की, अनेकों मठों में गये, परन्तु जब तक आपको मन में समाधान नहीं हुआ तब तक आप घूमते ही रहे। आपकी उम्र के साथ–साथ आपकी जिज्ञासा और अनेक प्रश्न बढ़ते गये। आप एक नहीं बहुत सारे प्रश्न पूछ लेते थे। इसलिये सामान्य विद्वान् आपको उत्तर नहीं दे पाते थे। परन्तु आपकी भावना सत्य को जानने की थी इसलिये आगे–आगे आपको समाधान देने वाले भी वैसे ही मिलते गये।

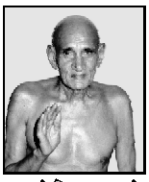
आ.श्री विमलसागर जी

आ.श्री कुन्थुसागर जी

आर्यिका श्री विजयमति जी

सत्य का अवलोकन कैसे हुआ ?– आप अकेले ही सब जगह जाते रहते थे। एक बार आप सम्मेद शिखर जी गये। वहाँ आपको इस युग के **महान् आचार्य वात्सल्य रत्नाकर श्री विमलसागर गुरुदेव एवं इनके साथ में गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव और गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी के दर्शन हुये।**

आप जिज्ञासु बनकर आचार्य श्री विमलसागर जी के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और उनसे अपने प्रश्न पूछे। तब आचार्य श्री विमलसागर जी ने कहा– तुम्हारे इन प्रश्नों का उत्तर तो हमारी शिष्या गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी ही दे देंगी। तब आप गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी के पास पहुँचे, उन्हें नमन किया व प्रश्नों का समाधान पूछा। **विजयमति माताजी इस युग की प्रथम गणिनी आर्यिका हैं।** उन्होंने आपके सभी प्रश्नों का उत्तर बड़ी सहजता से दिया। माताजी के समाधान से प्रभावित होकर आपने जिनधर्म की शरण स्वीकार की। आपको दोनों गुरुदेव का मधुर व्यवहार बड़ा ही अच्छा लगा, उनका प्रेम वात्सल्य आपको धर्म की और खींच लाया। आपने यह जान लिया, सत्य मुझे यहीं मिलेगा, अब इनको छोड़कर कही नहीं जाना है। माताजी ने बड़े ही प्रेम से आपके सभी प्रश्नों का उत्तर दिया, आपकी जो भी शंका (जिज्ञासा) थी, उन सबका समाधान माताजी ने किया।

आपने सोचा एक आर्यिका माताजी में इतना ज्ञान है तो जो इनको पढ़ाते हैं, उनको कितना ज्ञान होगा, यदि ये माताजी इतनी विदुषी हैं तब इनके गुरु तो और कितने ज्ञानी होंगे ? मैं कहाँ भटक रहा था, आज मुझे 'जैनधर्म में सत्य' मिल गया है। यहाँ पर मुझे परम सत्य की प्राप्ति होगी, अब मुझे इनके समान संत बनना है। संत बनकर ही मैं सत्य का बोध कर पाऊँगा। उस समय आप 21 वर्ष के थे। आपने 21 साल की युवा अवस्था में मोक्षमार्ग की ओर कदम बढ़ाया।

मोक्षमार्ग में बढ़ाने वाले गुरु– अब आपने दृढ़ निश्चय कर लिया, कि अब मुझे मोक्षमार्ग का नेता बनना है। 21 वर्ष ही बता रहे हैं। आप अगर मोक्षमार्ग में चलेंगे तो आपके द्वारा 19–20 ही नहीं 21वाँ श्रेष्ठ काम ही होगा और वही हो रहा है। आपको इस मार्ग में प्रेरित करने वाले, आगे बढ़ाने वाले अनेक गुरु थे।

उनमें मुख्य थे– प.पू. वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागरजी गुरुदेव, आचार्य श्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव, आचार्य श्री भरतसागर जी गुरुदेव और वात्सल्य की मूर्ति गुरु के रूप में मिली गुरु माँ गणिनी 'आर्यिका विजयमति माताजी'। गुरुओं की चुम्बकीय शक्ति बड़ी ही विशाल होती है। एक बार जो इनके पास में आ जाता है वह हमेशा के लिए इनका ही बन जाता है। आप तो केवल प्रश्न पूछने गये थे परन्तु प्रश्नों ही प्रश्नों में आप उनके परम भक्त बन गये। आपने उनकी शरण स्वीकार कर ली।

वस्त्र परिवर्तन– जब आपको पूर्ण समाधान मिल गया, तब आपके भावों में भी परिवर्तन आ गया, वैसे भी आप घर में सादगी में ही रहते थे। परन्तु वस्त्रों का भी मनुष्य की भावना पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। त्याग और सादगी दर्शाते हैं सफेद वस्त्र। हम जैसे कपड़े पहनते हैं वैसी ही हमारी भावना भी हो जाती है। जब कोई व्यक्ति धोती–दुपट्टा पहनता है तो वह व्यक्ति मंदिर जाता है तो उसके परिणाम पूजा–अभिषेक–आहारदान देने के होंगे, वह उस समय थियेटर में फिल्म देखने नहीं जायेगा या अन्य सांसारिक कार्य नहीं करेगा।

सफेद कपड़ों का बड़ा महत्त्व है। कपड़ों के साथ मनुष्य की भावना जुड़ी है। सफेद वस्त्र पर लगा हुआ छोटा सा दाग (धब्बा) भी जल्दी सबको दिख जाता है। इसलिये जो सफेद वस्त्र धारण करता है वह गंभीर, शांत, अनुशासन धारी, बन जाता है। वह सोचता है मेरे द्वारा कुछ भी गल्ती ना हो कोई मेरे ऊपर ऊँगली ना उठाये, मुझे सम्भल कर चलना है।

आपने जब अपने आपको गुरु के चरणों में समर्पित कर दिया, तब उनके समान सादगी को स्वीकार कर लिया। आपने अपने रंगीन वस्त्र त्याग कर दिये। सफेद वस्त्र धारण कर लिये, आप आचार्य श्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव के चरण–कमलों में ब्रह्मचारी बन गये।

आपके पढ़ने की लगन और परिश्रम को देखकर आचार्यश्री बड़े प्रसन्न हुए, वे स्वयं आपको पढ़ाने लगे, जैनधर्म के अनमोल मोती चुन-चुनकर गुरुदेव आपको देते थे। आचार्यश्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव का आपको बहुत वात्सल्य मिला, एक पिता जिस तरह प्रेम वात्सल्य से अपने पुत्र का पालन-पोषण करता है। उसी तरह आपको आपके गुरु से माता-पिता का व गुरु का प्रेम वात्सल्य मिला।

संघ का सोनागिर क्षेत्र पर आगमन- आप जब ब्रह्मचारी बन गये थे। तब संघ का सम्मेद शिखर जी से सोनागिर क्षेत्र की ओर विहार चल रहा था। एक समय रास्ते में एक पर्स पड़ा हुआ था। किसी ने आपको कहा- ब्रह्मचारी जी ये पर्स उठा लो, जिसका हो उसके पास पहुँचा देना। आपने मना किया, मुझे क्या पता ये पर्स किसका है, कहाँ देने जाऊँगा ? मैं नहीं उठाऊँगा। सब साधु भी आपके स्वभाव से अल्प परिचित थे, फिर वो सब आपको बार-बार बोलते रहे। आपने उनसे कहा कि मेरे को गुरुदेव ने पढ़ाया है, किसी की भूली हुई, पड़ी हुई, गिरी हुई, रखी हुई वस्तु को बिना पूछे नहीं लेना चाहिये। लेकिन बार-बार साधुओं के कहने से आपने वो पर्स उठाया, उसे खोलकर देखा। उसमें 10, 20, 50, 100 के नोट थे। वह पर्स आप एक किलोमीटर तक तो ले गये परन्तु आपकी आत्मा आपको धिक्कार रही थी। आपका मन बड़ा बैचेन हो रहा था। मन में अशांति हो रही थी। आपका मन नहीं माना, अंत में आपने चुपचाप वापस वह पर्स जहाँ से उठाया था वहीं जाकर रख दिया। तब आपको अच्छा लगा- सोनागिर सिद्धक्षेत्र के दर्शन किये, वहाँ से संघ का विहार हुआ।

पपौराजी क्षेत्र की ओर विहार- संघ का सोनागिर से विहार हुआ। अब आप संघ के साथ विहार करते, गुरु की सेवा करते, समय मिलते ही पढ़ने बैठ जाते थे। कभी खाली नहीं रहते थे, आपका ज्ञान के साथ वैराग्य भी बढ़ता जा रहा था।

आपने अपने गुरुदेव से प्रार्थना की– हे प्रभु ! हे पूज्यवर ! मुझे दीक्षा देकर मेरा कल्याण कीजिये। आचार्यश्री ने आपके ज्ञान, वैराग्य को देखकर आपको दीक्षा का आशीर्वाद दिया।

क्षुल्लक दीक्षा पपौराजी में हुई– संघ जब अतिशय क्षेत्र 'पपौराजी' में पहुँचा। तब आपकी प्रार्थना को देखते हुये आचार्यश्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव ने आपको 1978 में 24 वर्ष की उम्र में क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की और आपको **ब्रह्मचारी गंगाधर से क्षुल्लक कनकनंदी जी** बना दिया। आपको अपने गुरु का प्रथम शिष्य बनने का गौरव मिला। अब आप निरन्तर ज्ञान, ध्यान, तप में तल्लीन रहते थे। आप इतनी पढ़ाई करते थे, जब आहार का समय होता था तब ही आप अपने स्थान से उठते थे, एकांत स्थान में मौन रहकर स्वाध्याय करते थे। 18, 20 घंटे तक आप पढ़ाई करते रहते थे। आपकी आँखें सूज जाती थी; लाल–लाल हो जाती थी परन्तु आप किताब नहीं छोड़ते थे। आप जब पढ़ने में रत रहते थे तब आचार्यश्री आपके पास में किसी भी श्रावक को नहीं जाने देते थे। उनसे कहते उसको कोई डिस्टर्ब मत करो, वो पढ़ रहा है। ये वाक्य आपके गुरुदेव के हैं। आपके श्रीमुख से आपने मुझे बताया था।

दीक्षा गुरु आपको 'हीरा' कहते थे– आपकी पढ़ने की लगन देखकर आचार्यश्री बहुत ही प्रसन्न होते थे। जब कोई उनके सामने आपकी तारीफ करते थे तब आचार्यश्री कहते थे– ये मेरा सुयोग्य शिष्य है। मुझे इस शिष्य पर गौरव है। **यह मेरा 'हीरा' है।** आपने जब गुरुदेव के मुख से ऐसा सुना तो आपने मन में प्रतिज्ञा कर ली– मैं अपने गुरु का हीरा हूँ और हीरा बनकर ही रहूँगा। सब रत्नों में हीरा सर्वश्रेष्ठ उत्तम रत्न होता है। आपने यह संकल्प कर लिया, मैं अपने गुरु की बात को कभी असत्य नहीं होने दूँगा। जिसने मेरी पहचान हीरे के रूप में की है।

मुझे तरासा है, मुझे जौहरी बनकर परखा है, उन्हें उसी रूप में बनकर दिखाऊँगा। उनकी अपेक्षा पर हमेशा खरा उतरूँगा, यह मेरा नियम और प्रतिज्ञा है। इस संकल्प के साथ आप क्षुल्लक अवस्था में और अधिक पढ़ने लगे।

आप हीरे के रूप में अपनी चमक–दमक से आगे ज्ञान की रोशनी फैलाने लगे। आप स्वयं आपके गुरुदेव के हीरा हो और आपसे पढ़ने वाले सब साधु–साध्वी एक से बढ़कर एक अनमोल रत्न हैं। जो नंदी संघ के शिष्य आदि हैं वे सब आर्षमार्ग का डंका बजा रहे हैं।

मध्यप्रदेश से कर्नाटक की ओर विहार– आपकी दीक्षा होने के बाद मध्यप्रदेश में धर्म प्रभावना करते हुये आचार्यश्री के ससंघ का विहार कर्नाटक की ओर हुआ। कर्नाटक में प्रसिद्ध क्षेत्र भगवान बाहुबली के पावन चरणों में संघ पहुँचा। श्रवणबेलगोला में संघ का प्रवेश हुआ। उस समय वहाँ पर 200 साधु विराजमान थे। अनेक बड़े–बड़े आचार्य वहाँ पर थे। आपका ज्ञान सूरज की तरह पूरे भारत में फैल गया था। उस समय में आपके समान कोई ज्ञानी नहीं था। आपके ज्ञान की चर्चा हर संघ में थी। आप सबको पढ़ाते थे परन्तु किसी का अपमान, अविनय नहीं करते थे। ये कभी नहीं सोचते थे कि मेरे पास इतना ज्ञान है, सब साधु मेरे से पढ़ते हैं, इस बात का कभी अहंकार नहीं करते थे। सबको विनयपूर्वक पढ़ाते थे, इस कारण आप के अन्दर ज्ञान बढ़ता ही गया। कोई मुनिराज आदि आपसे कुछ प्रश्न पूछते थे तो आप उनका सविनय समाधान करते थे।

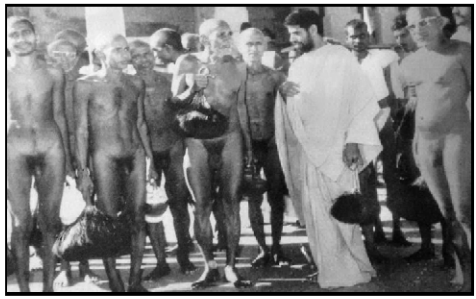

आचार्य संघ का फोटो

बड़े–बड़े आचार्य भी आपसे प्रश्नों का उत्तर पूछते थे और उत्तर पाकर संतुष्ट होते थे। आप कभी भी मन में यह भावना नहीं लाते थे कि मैं कितना बड़ा ज्ञानी हूँ। जो मुझसे उम्र में बड़े होकर भी मुझसे पढ़ रहे हैं, पूछ रहे हैं ऐसा घमंड आपको कभी भी नहीं आया। घमंड करने से ज्ञान घट जाता है तथा ज्ञान और ज्ञानी का विनय करने से ज्ञान बढ़ता है। आज इंसान में थोड़ा सा ज्ञान हो जाता है तो दुगुना घमंड, अहंकार बढ़ जाता है एवं अहंकार करने से जीव का पतन हो जाता है।

श्रवणबेलगोला में हुई मुनि दीक्षा– अब आपकी आगे बढ़ने की भावना जागृत हुई। आपने आचार्यश्री के समक्ष भावना रखी। गुरुदेव मुझे इस पावन भूमि पर मुनि दीक्षा देकर मेरा उत्थान कीजिये।

आचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव ने आपकी भावना को सुना 200 पिच्छी की साक्षी में 5 फरवरी 1981 के शुभ मुहूर्त में बाहुबली भगवान के सहस्राब्दी महोत्सव में आपकी प्रथम दीक्षा हुई। इस अवसर पर अनेक साधक भी क्षुल्लक आदि बने। क्षुल्लक से आपकी मुनि दीक्षा हुई। आपका नाम परम पूज्य **'मुनि श्री कनकनंदी'** जी रखा गया।

सहस्त्राब्दी महोत्सव में एवं दीक्षा में अनेक साधुओं के संघ–

श्रवणबेलगोला में जब आपकी दीक्षा हुई तब चारों तरफ से बड़े–बड़े संघ सहस्त्राब्दी महोत्सव में सम्मिलित हुये। उसी महोत्सव में आपकी मुनि दीक्षा भी हुई। वह महोत्सव मुख्य रूप से राष्ट्रसंत आचार्य श्री विद्यानंदी जी के पावन सानिध्य में चल रहा था। उनके दीक्षा गुरु आचार्य श्री देशभूषण जी भी ससंघ यहाँ पर विराजमान थे। इनके दूसरे शिष्य आचार्य सुबलसागर जी भी अपने संघ के साथ यहाँ विराजमान थे। आचार्य श्री विमलसागर जी भी ससंघ यहाँ पर विराजमान थे। मुनि दयासागर जी व मुनि अभिनन्दनसागर जी भी ससंघ विराजमान थे।

आपकी प्रथम गुरु माँ गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी भी ससंघ यहाँ पर ही थी। इन सभी साधुओं की उपस्थिति व मंगल सान्निध्य में आपकी मुनि दीक्षा हुई। इस तरह 11 महीने तक आचार्य श्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव का संघ श्रवणबेलगोला में रहा। आप स्वयं बड़े साधुओं से धर्म का व पं. प्रभाकर से संस्कृत व्याकरण का अध्ययन करते थे।

हर धर्म का ज्ञान था– आपका ज्ञान विशेष है, आपने एक विषय पर नहीं बल्कि सब धर्म का (ज्ञान) अध्ययन किया है। अन्य धर्म के ग्रंथ में प्रमुख रूप से हिन्दुओं की गीता, मुस्लिम ग्रंथों का, सिक्खों के गुरु ग्रन्थ साहिब, बौद्धों में धम्मपद का, आयुर्वेद, वेदपुराण आदि ग्रंथों का, लौकिक–अलौकिक गणित का, विज्ञान से संबंधित हर विषय का, शोधकर्त्ता वैज्ञानिकों के विषय का आपको जोड़ रूप बेजोड़ ज्ञान है। आपके सामने किसी भी धर्म, सम्प्रदाय का व्यक्ति प्रश्न पूछने आता तो आप घबराते नहीं हैं। उसे पूर्ण संतुष्ट करके ही विदा करते हैं। इसलिये हरएक साधु को हर धर्म का ज्ञान भी होना चाहिये। आप आर्षमार्ग की बात को व सत्य धर्म को प्रकाशित करके ही दम लेते थे। आप कहते– ज्ञान नहीं होगा तो कोई भी व्यक्ति हमें हरा सकता है। आपका नारा है **''अज्ञानता ही महापाप है।''** अज्ञानी व्यक्ति कहीं भी अपना गौरव नहीं बढ़ा सकता और जिसके पास ज्ञान है वह कहीं भी रहे हर क्षेत्र में पूज्यता को प्राप्त कर लेता है। यशख्याति को प्राप्त कर लेता है। अनेक लोगों को ज्ञानी, महाज्ञानी, विद्वान् बना देता है। ज्ञानी व्यक्ति जहाँ रहेगा, जहाँ जायेगा वहाँ ज्ञान के सुमन खिलायेगा। ज्ञान के कारण अपनी अलग पहचान बना लेगा।

आपके नाम का अर्थ– आपका नाम आचार्यश्री ने सोच समझकर ही रखा है। उस समय आपकी 200 साधुओं में अलग ही पहचान थी। कैसा भी व्यक्ति आपके सामने आये आपका ज्ञान देखकर वह नतमस्तक हो ही जाता था। आपने अपने नाम को पूर्णरूप से सार्थक किया।

आपका गुरुदेव ने बहुत अच्छा नाम रखा। कनक+नंदी=कनकनंदी कनक यानि सोना-स्वर्ण। सोने को सब पसन्द करते हैं तिजोरी में बंद करके रखते हैं। स्वर्ण के आभूषण बनाकर सब लोग अपने तन पे धारण करते हैं। सोना सभी चाहते हैं। आप भी सबके लिये स्वर्ण के समान हैं। आपको सब चाहते हैं। आप अपने ज्ञान को सोने के आभूषण बनाकर प्राणीमात्र को पहना रहे हैं। आप क्षुल्लक थे तब भी आपका नाम कनकनंदी ही था और मुनि दीक्षा हुई तब भी आपका नाम कनकनंदी ही रखा।

आपके दीक्षा गुरु आपको हीरा कहते थे। इसलिए हीरा की अंगुठी जब बनती है तो वह स्वर्ण (सोने) में ही बनती है। सोने की अंगुठी में जब हीरे का नग लग जाता है वह अंगुठी अपनी रश्मियों से सबको आकर्षित करती है। आप भी सोने की अंगुठी बनकर अपने हीरे की ज्ञान रश्मियाँ सब ओर फैला रहे हैं, आप इस युग के ज्ञान के हीरा हैं, मुझे कुछ ज्ञान की बूँदें अवश्य आशीर्वाद रूप में दे दीजिये।

प्रश्न पूछने पर प्रश्न पूरा ना हो, उससे पहले आप उत्तर दे देते थे-

जब श्रवणबेलगोला में दोपहर की क्लास आप लेते थे तब कोई साधु कुछ प्रश्न पूछते तो पूछने वाले का प्रश्न भी पूरा नहीं होता उसके पहले ही आप बोल देते थे। ठहरो-ठहरो, आपका प्रश्न मुझे समझ आ गया है। आप क्या पूछना चाहते हैं, मैं समझ गया हूँ। आप उनको आगम सम्मत्त उत्तर दे देते थे। आपकी प्रज्ञा बुद्धि इतनी प्रखर थी, उसकी तुलना मैं किसी से नहीं कर सकती, आपके ज्ञान के सामने सारी तुलना फीकी पड़ जाती है।

आपसे पढ़ने वालों को गौरव होता था-

उस समय जो भी साधु आपसे पढ़े, उनको हमेशा गौरव होता था। हम मुनि कनकनंदी जी से पढ़ रहे हैं। आपकी क्लास में आपके आने के कुछ मिनिट पहले ही साधुगण पहुँच जाते थे। आपके आने की प्रतीक्षा करते थे।

हमारे आगम में **'विनयमोक्खदारो'** बताया है यानि कि विनय मोक्ष का द्वार है और ज्ञान पाने के लिये विनय जरूरी है। हमें तो सत्य का आगम का ज्ञान पाना है। इसी भावना से साधु आपके पास स्वाध्याय करने आते थे।

उम्र से ज्ञान का कोई महत्व नहीं है–

ज्ञान पाने की कोई उम्र नहीं होती, जब जहाँ ज्ञान मिले वहाँ सत्य ज्ञान पाने की इच्छा रखना चाहिये। हमेशा विद्यार्थी बनकर ज्ञान प्राप्त करते रहना चाहिये। जो उम्र से बड़ा होकर भी बालक की तरह सहज सरल भाव से ज्ञानी गुरु के पास पढ़ता है, वही ज्ञानी बनता है। विनयभाव से जो पढ़ता है वही आगे जाकर मोक्ष को प्राप्त करता है।

बड़े आचार्य या बड़े मुनि आपकी विनय या सम्मान करने नहीं आते थे, बल्कि आपके अन्दर जो ज्ञानगुण है, समता है, शांति है उसकी विनय करते थे। वही प्राप्त करने आते थे इसलिये ज्ञान पाने में छोटे–बड़े का कभी भेदभाव नहीं करना चाहिये, अहंकार नहीं करना चाहिये। मैं बड़ा हूँ,छोटे के पास क्यों पढ़ूँ या उसकी बात क्यों सुनूँ। हमारे आगम में कहा है– 8 साल अन्तर्मुहूर्त के बाद कोई भी भव्य जीव मुनि बनकर कर्म काटके अरहंत सिद्ध बन सकता है। जब वे अरहंत बनेंगे तो 12 सभा लगेगी, तीन गति के जीव वहाँ पर आयेंगे। प्रभु की पूजा, भक्ति, स्तुति, अर्चना आदि सब करते हैं। उनका गुणगान करते हैं। इसलिये जहाँ ज्ञान मिले वहाँ अपने पद का अभिमान छोड़कर पढ़ना चाहिये।

आपके पास छोटे–बड़े सभी साधु वहाँ पढ़ते थे। ज्ञानी साधु के पास पढ़कर हम अपने भव–भव के मिथ्यात्व को नष्ट कर सकते हैं। सम्यक्त्व को प्राप्त कर सकते हैं। विनय से पढ़ा हुआ एक अक्षर भी अगले भव में केवलज्ञान का कारण बन सकता है। आप मुनियों को ही नहीं श्रावकों को भी पढ़ाते थे।

घंटों क्लास लेते थे। आप कभी भी मान-सम्मान की इच्छा नहीं करते थे, मैं इतने लोगों को पढ़ा रहा हूँ, ये सब मेरी भक्ति करें, पूजा करें ऐसी ख्याति-प्रसिद्धि की भावना से आप हमेशा दूर रहते थे। आपको ज्ञान देकर और आनंद आता था।

आपका हर वाक्य आगमसम्मत होता था-

आपके मुख से निकलने वाला हर वाक्य आगम सम्मत होता था। आपको कोई प्रश्न पूछते तो आप उसको सही उत्तर देते थे, उत्तर नहीं आता तो आप मना कर देते थे। अभी भी आप ऐसा ही कहते हैं। आप यह नहीं सोचते कि सामने वाला मुझे क्या कहेगा, जब तक आपको पूरा उत्तर नहीं मिलता है तब तक आप किसी को भी गलत उत्तर नहीं देते थे। आपने अपने ज्ञान का कभी दुरुपयोग नहीं किया। आपके भाव बड़े ही उज्ज्वल और पवित्र हैं। वहाँ आप एक प्रामाणिक साधु थे, आपकी बात पर सबको पूर्ण विश्वास रहता था कि आप कभी गलत नहीं बोलेंगे, आप किसी को भटकाना नहीं चाहते थे। आज हमें ऐसे भटकाने वाले कई विद्वान् मिल जायेंगे, अपनी बात सिद्ध करने के लिये असत्य को भी सत्य सिद्ध करके अपने आपको ज्ञानी सिद्ध कर देते हैं। यह नहीं सोचते कि हमारे एक असत्य वाक्य से हमें कितना पाप का बंध हो रहा है और जीव मिथ्यात्व में फंस जायेंगे। ऐसे लोगों को केवल अपना नाम और ख्याति ही चाहिये। वे मान कषाय के कारण आगम को भी झूठा सिद्ध कर देते हैं। स्वयं दुर्गति में जाते हैं और दूसरों को भी भटकाने का काम करते हैं। लेकिन आप कभी ऐसा नहीं करते हैं, कोई मेरा भक्त बने या ना बने, कोई मुझे अच्छा बोले या बुरा बोले, आप हमेशा आगम की ही बात करते हैं, वही बात बताते हैं। आपने जिनको गमक गुरु माना है वो जो बोलते थे वहीं आप बोलते हैं।

गमक गुरु वीरसेन स्वामी–

आप **'वीरसेन स्वामी'** को गमक गुरु मानते हैं। जैसे वीरसेन स्वामी के सामने अनेक आचार्यों के अलग–अलग मत सामने आते थे। वीरसेन स्वामी कहते थे– अलग–अलग मत है। इनमें से कौनसा सत्य है। यह मैं नहीं बता सकता। जाकर गौतम स्वामी से पूछो। **''एलार्य सिस्सस जिह्वा ना हिलेज्ज गोयम पुच्छ।''** वीरसेन की जिह्वा नहीं हिलेगी, जाकर गौतम स्वामी से पूछो। आप भी वीरसेन स्वामी का ही वाक्य बोलते हैं। आप सोचते हैं लोग मुझ पर विश्वास करते हैं मैं इनका विश्वास नहीं तोडूँगा इनको गलत कभी नहीं बताऊँगा चाहे पीठ पीछे लोग मेरी निन्दा क्यों ना करें। जितना पढ़ाऊँगा सत्य और जिनवाणी के सूत्र ही दूँगा। जिनवाणी में कभी निजवाणी नहीं मिलाऊँगा।

जिनवाणी

आपके माता–पिता– आपकी माँ है 'जिनवाणी', आपको आपकी माँ से बहुत प्यार है। आपने अपनी माँ से ही सत्य, साम्य और समता का दर्शन पाया है। वही सत्य आपने सबको दिखलाया है। 'सत्य' आपके पिता हैं। यही आपका सबसे बड़ा मंत्र है। आप हमेशा इसका ही जाप करते हैं और सबको यही मंत्र देते हैं। वह मंत्र है– **''ॐ ह्रीं सत्य साम्य सुखाय नमो नमः''**। आपको जन्म देने वाले माता–पिता बड़े पुण्यात्मा है, जिनके कुल में ऐसा दीपक आया। जो पूरे भारत में ही नहीं वरन् विदेश में व पूरे विश्व में, जिनधर्म का डंका बजा रहा है।

आपके पास साधु जब पढ़ने आते हैं, तो आपको भगवान् मानकर आते हैं। इसलिए आपकी प्रतिज्ञा सिद्ध हो गई। आप भोले–भाले साधु–संतों के साथ कभी विश्वासघात नहीं करते हैं।

आपका प्रण है चाहे मेरे प्राण चले जायें पर आने–वाले साधुओं को हमेशा सत्य का दिग्दर्शन कराऊँगा। आपके ज्ञान ने ही इतने साधु संतों के दिल में आपका विशेष स्थान बनाया है। बड़े से बड़े आचार्य आपको ही सर्वश्रेष्ठ ज्ञानी मानते हैं।

श्रवणबेलगोला से विहार व 'हासन' में उपाध्याय पद–

श्रवणबेलगोला में संघ 11 महीने तक रहा, फिर वहाँ से चतुर्विध संघ का विहार हुआ। धर्म प्रभावना करते हुए संघ का कर्नाटक प्रांत के 'हासन' शहर में प्रवेश हुआ। 1982 का चातुर्मास 'हासन' में ही हुआ। आपकी विद्वत्ता देखते हुये आचार्यश्री ने आपको 25–1–1982 को 'हासन' में। मुनि से उपाध्याय बना दिया।

हमारे पंच परमेष्ठी, पूज्यनीय, वंदनीय, भजनीय है। साधु से उपाध्याय पद बड़ा होता है। उपाध्याय परमेष्ठी स्वयं पढ़ते हैं और गुरु से दीक्षित शिष्यों को पढ़ाते हैं। आपकी योग्यता के अनुसार आपको पद प्रदान किया गया।

उपाध्यायश्री का पूर्ण अनुशासन–

आचार्यश्री ने संघ की वागड़ोर आपके हाथ में दे दी, संघ में अनुशासन आदि का काम आपके हाथ में था। संघ में और भी साधु थे, 5–6 साधु–साध्वी हो चुके थे। सब आपके कठोर अनुशासन से प्रसन्न थे, आपकी आज्ञा का सभी साधु पालन करते थे। आप संघ का संचालन बड़ा ही अच्छा करते थे। आपके हरएक आदेश का पालन हर साधु करते थे। कोई आपकी अवज्ञा, अविनय तो स्वप्न में भी नहीं करते थे।

कभी साधु लोग आपस में बातचीत कर रहे हों और अगर आपको वहाँ से आता–जाता देख लेते तो सब साधु अपने–अपने काम में लग जाते थे। शांति से सब साधु मिलजुल कर रहते थे।

आचार्यश्री का नंदी संघ उस समय पूरे भारत में छा गया था। सब के मुख पर आपका और आचार्य श्री कुंथुसागर जी का नाम रहता था। जहाँ–जहाँ भी संघ का विहार हुआ, चाहे वो शहर या छोटा कस्बा या फिर कोई गाँव ही क्यों ना हो हर जगह नंदी संघ के द्वारा महती धर्म प्रभावना हुई।

श्रेष्ठगुरु ज्ञानी गुरु– आपसे पढ़ने वाले हर साधु अपने आपको बड़े ही भाग्यशाली मानते हैं कि हमें ऐसे ज्ञानी गुरु मिले हैं जो हमें हर छोटे से छोटे विषय का और बड़े से बड़े विषय का ज्ञान दे रहे हैं। आपसे पढ़ने वाले सभी साधु बड़े ही सरल स्वभावी व विनयवान होते हैं। आप उनको समय पर हर काम करना सिखाते हैं। अनुशासन का पाठ पढ़ाते हैं, स्वावलम्बी बनाते हैं। उठना–बैठना, बोलना–चलना सबके बीच में कैसे रहना चाहिये, गुरु का विनय कैसे करना चाहिये इत्यादि। प्रत्येक साधु–साध्वियों को पहली क्लास से लेकर यानि कि प्रथम भाग से धवला आदि ग्रन्थों का अध्ययन कराते हैं।

उपाध्यायश्री की पढ़ाने की शैली–

आपकी शैली हर क्षेत्र में अलौकिक है। आपसे प्रभावित होकर हर व्यक्ति खिंचा चला आता है। आपकी भावना इतनी विशाल है कि जो साधु–साध्वी मुझे गुरु मानकर पढ़ रहे हैं वे सब महान ज्ञानी बने। समता, शांति और परम सत्य को प्राप्त करें। आप सबको एक समान निष्पक्ष भाव से पढ़ाते हैं। आपकी पढ़ाने की शैली बड़ी अनूठी है, उसकी चर्चा दूर–दूर तक फैल चुकी थी। बहुत सारे ब्रह्मचारी–ब्रह्मचारिणी केवल पढ़ते ही नहीं परन्तु आपके ज्ञान के सूत्र सुनकर, कितनों ने दीक्षा ग्रहण करली, आपके संघ को छोड़कर फिर कहीं नहीं गये। प्रेम, वात्सल्य और अनुशासन देखकर किसी ने दीक्षा ली। कितने ही साधु तो आपके संघ में केवल संघ का नाम सुनकर आये जहाँ आचार्यश्री गये ही नहीं वहाँ के त्यागी जीव स्वयं चले आये।

पढ़ाई करी और दीक्षा ली। आपका संघ एक चलता–फिरता विद्यालय है। आपका आदर्श संघ पूरे भारत में प्रसिद्ध है। आप आचार्य कुंथुसागर जी गुरुदेव के महान् ज्ञानी रत्न हैं।

आप देते थे हर विषय का ज्ञान–

आप केवल ग्रंथ ही नहीं पढ़ाते है, अपितु साधुओं को जीवन्त चर्या में उनको धार्मिक, सामाजिक, लौकिक, राजनैतिक, आध्यात्मिक विषयों का अध्ययन करवाते है। इसके अलावा साधुओं का स्वास्थ्य कैसे अच्छा हो, वो अधिक से अधिक ज्ञानार्जन किस प्रकार कर सके, स्वाध्याय कर सकें, इसके लिये उनको स्वास्थ्य संबंधी विषयों का भी ज्ञान देते हैं। उन्हें कहते हैं– प्रातःकाल हर रोज सभी साधु को कम से कम 3–4 किलो मीटर जंगल में भ्रमण करने के लिये जाना चाहिए। खुले आकाश में ठण्डी हवा में योगासन, प्राणायाम करें। आप पढ़ाते ही नहीं हैं बल्कि पढ़ाने के साथ आप स्वयं रोज प्रेक्टिकल में ये सब करते हैं, करके सिखाते हैं। प्रातःकाल का घूमना और योगासन आदि करने से शरीर हृष्ट–पुष्ट रहता है, शरीर अच्छा रहता है। शरीर में स्फूर्ति आती है और शुद्ध प्राणवायु ऑक्सीजन भरपूर मात्रा में मिलती है, इससे स्मरण शक्ति बढ़ती है। बुद्धि का विकास होता है। आप स्वयं हर तरह के आसन करके साधुओं को स्वस्थ रहने का मार्ग बताते हैं।

एक बार जो आपके पास में पढ़ने आता, वह दूसरे दिन नियम से आता ही है। आप हर विषय को सरल बनाकर, उदाहरण देकर पढ़ाते हैं। पढ़ने वाले की योग्यता और पात्रता देखते हुए आप हँसते–हँसाते हुए पढ़ाते हैं। कई बालक–बालिकायें आपको पढ़ाते हुये देखकर घर छोड़कर संघ में आ गये और दीक्षा लेकर आज धर्म का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। आपका नाम लेकर ही सब अपने धर्म का प्रचार कर रहे हैं। आपका आशीर्वाद उन सब साधुओं पर सदा रहे।

आप में वैयावृत्ति और सेवा के भाव–

कभी स्वाध्याय शुरू हो जाता और अगर आपको पता चलता कि संघ में किसी साधु का स्वास्थ्य खराब है तो उसी समय स्वाध्याय बन्द हो जाता था। सबको कहते– पहले बीमार साधु की सेवा करो, फिर स्वाध्याय करेंगे। स्वाध्याय अंतरंग तप है, सोलहकारण भावना में भी वैयावृत्ति भावना है। स्वाध्याय कौनसे समय करना और कौन से समय में नहीं करना चाहिये। यह सब बताते हैं और सिखाते हैं। आप स्वयं बीमार साधु की वैयावृत्ति करते हैं, अपने हाथों से तेल आदि लगाते हैं। आहार आदि भी कराने जाते हैं। आपने अपने संघ के साधुओं में वैयावृत्ति की भावना कूट–कूट कर भरी है। किसी क्षुल्लक, ऐलक, मुनि, आर्यिका, क्षुल्लिका यहाँ तक कि पशु–पक्षी आदि को तकलीफ होती तो उसका भी उपचार करते कराते हैं। अपने हाथों से सेवा करते हैं। कभी भी सेवा करने में ग्लानि नहीं करते हैं। आपके अन्दर बचपन से ही सेवा की भावना थी, आज भी है। **जब हम गुरुदेव के पास 18 साल के बाद आये। तब आसपुर में आचार्य श्री गुप्तिनंदी जी गुरुदेव के पैरों में दर्द था। आप स्वयं उनके कक्ष में गये और अपने हाथों से दोनों पैरों पर तेल लगाया, कैसे मालिश करना चाहिये यह आपने वात्सल्यमय भाव से करके दिखाया।** बड़े होकर छोटे साधुओं की सेवा करना, यह आपकी महानता है, आप महान हो गुरुदेव ! आपकी सेवा में लिखने के लिये मेरे पास शब्द नहीं है।

कानजी मत का सटीक विरोध किया–

आपके ज्ञान और गहन चिंतन से 'स्वमत का मंडन और परमत का खंडन' पूरे भारत में हुआ। आपकी अमृत वाणी का रसास्वादन समय–समय पर अनेक विद्वानों ने किया। आपने स्वमत का डंका पूरे भारत में जमकर बजाया, पूरे देश में कानजी पंथियों का विरोध किया था।

कर्नाटक से लेकर महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, राजस्थान आदि छोटे–बड़े गाँव, नगर, शहर आदि जहाँ भी गये वहाँ के मंदिर से उनके ग्रंथ हटवाये, लोगों में नई चेतना जगाई। आपने आगम प्रमाण से बताया कानजी पंथ हमारा धर्म नहीं है। ये मुनि विरोधी है। इनके शास्त्र नहीं पढ़ना इत्यादि डटकर विरोध किया। पूरे सात साल तक कानजीपंथियों से लोहा लिया। उनको परास्त किया। आप एक विशेष क्रांति पूरे भारत में लाये, लोगों को सत्य का दिग्दर्शन कराया। हजारों लोग आपका प्रवचन सुनने हर गाँव, हर नगर में एकत्रित होते थे। वहाँ आपने श्रावकों को आगम से अवगत कराया। नागपुर महाराष्ट्र की धरती पर तो आपने आमने–सामने शास्त्रार्थ किया। वहाँ के हर मंदिर से उनके ग्रंथ ट्रक भर भरके हटवा दिये। आज भी वहाँ के भक्तगण आपको और आपके सानिध्य में हुई क्रांति को याद करते हैं। हजारों लोगों ने आपका क्रांतिकारी प्रवचन प्रत्यक्ष सुना था। वहाँ के लोग आज भी आर्षमार्ग को ही मानते हैं। नागपुर विदर्भ में आपने बहुत बड़ी क्रांति की जिसकी यशोगाथा युगों–युगों तक याद की जायेगी।

सोनागिर प्रवास–

जब आपका संघ पुनः सोनागिर जी क्षेत्र पर आया तब वहाँ 50–60 साधु विराजमान थे। आचार्य श्री विमलसागर जी का संघ और आचार्य श्री कुंथुसागर जी का संघ इसके अलावा और अन्य छोटे–बड़े संघ वहाँ पर थे। मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक और क्षुल्लिका मिलाकर 50–60 पिच्छी वहाँ मौजूद थी। वहाँ पर दोपहर में आप ही सब संघों के साधुओं को पढ़ाते थे। स्वाध्याय होता था। दोपहर की क्लास में स्वयं आचार्य विमलसागर जी, आचार्य भरतसागर जी एवं आचार्य कुंथुसागर जी आदि सर्व संघ स्वाध्याय में सम्मिलित होते थे। उस समय आचार्य विमलसागर जी संघ में समयसार पढ़ा रहे थे। आप जब आने लगे तो आचार्यश्री ने कहा आप ही सब साधुओं को समयसार पढ़ाइये।

हम सब पढ़ेंगे। बड़े होकर भी आचार्यश्री बैठते थे। जो-जो बड़े आचार्य साधु आदि थे वे सब भी आप से ही वहाँ पढ़ते थे। आप बड़े साधुओं का विनय करते हुये सबको पढ़ाते थे। वह स्वाध्याय करीब डेढ महीने चला।

बड़ेगाँव वाले सिंहरथ से प्रख्यात आचार्य सन्मतिसागर जी उस समय सोनागिर में क्षुल्लक थे। ये भी आपसे ही पढ़ते थे। जब हम इनके दर्शन करने दिल्ली धर्मपूरा में गये। आपका नाम इनको बताया तो, ये बहुत प्रसन्न हुए। इन्होंने कहा- उनके (आचार्य कनकनन्दी) मुकाबले कोई ज्ञानी साधु अभी वर्तमान में नहीं है। सुनकर मन को बड़ा आनंद हुआ। हमारे गुरुदेव इतने ज्ञानी हैं। इस कारण सब साधु, आचार्य आदि आपका नाम लेते हैं।

आपने कब से ग्रन्थ लिखना प्रारम्भ किया-

आपको ग्रंथ लिखने की प्रेरणा भी सबसे पहले आचार्य श्री विमलसागर जी एवं आचार्य भरतसागर जी और क्षुल्लक श्री सन्मतिसागर, ज्ञानानंद (आचार्य सन्मतिसागर जी समाधिस्थ) जी ने ही दी। सबने कहा- आप ग्रंथ लिखो, आप ही यह कार्य कर सकते हो, आपने कहा- अभी मैं छोटा हूँ। अभी तो मुझे बहुत अध्ययन करना है। अभी मेरे पास समय नहीं है। मैं लिखने का काम नहीं करूँगा। आपके दीक्षा गुरु आचार्य श्री कुन्थुसागर जी गुरुदेव ने भी आपसे कहा तो भी आप पुस्तक लिखने के लिए तैयार नहीं हुये। सबका कहना टालते रहे। आपने कहा- मैं अभी स्वयं पढूँगा और साधुओं को पढ़ाऊँगा।

लेकिन बार-बार साधुओं के आग्रह पर आपने पुस्तकें लिखना प्रारम्भ किया। अब आपने तीव्र गति से पुस्तकें लिखना शुरू किया। एक दिन में चार-चार पुस्तकों का मैटर तैयार करवाते थे। हर पुस्तक का विषय अलग-अलग रहता था।

उन सबके डिक्टेशन आप एक साथ बताते जाते थे। फिर भी एक पुस्तक का विषय दूसरी पुस्तक में मिक्स नहीं होता था। आपके तीन तरफ पुस्तक लिखने वाले बैठते थे। आप सबको बोल-बोलकर विषय नोट करवाते थे। यह आपका जिनवाणी के प्रति जो विनय भाव था, उसी का अतिशय था कि आप एक साथ इतने विषयों को लिखवा देते थे। 'गुरु का विनय और जिनवाणी का विनय' करने से आपका ज्ञान बढ़ता ही गया।

आज श्रावक हो या साधु आपके द्वारा लिखी हुई जिनवाणी का उपयोग कर रहे हैं। हम बड़े-बड़े ग्रंथ नहीं पढ़ पाते हैं। अगर हर विषय को पढ़ना है तो आचार्यश्री की एक पुस्तक में भी अनेक ग्रंथों के प्रमाण पढ़ने को मिल जाते हैं। एक पुस्तक को पढ़कर भी हम अपनी कई शंकाओं का समाधान कर सकते हैं। अवश्य आचार्यश्री के द्वारा लिखी पुस्तक पढ़ें।

आपने सोचा मैं पूरे भारत में, विदेश में तो जा नहीं पाऊँगा, परन्तु मेरे द्वारा लिखी ये पुस्तकें अवश्य पहुँच जायेगी। लोग इनको पढ़ेंगे, समझेंगे, जिनको विशेष रूचि होगी वो मेरे पास मैं आकर के सर्व विषय को जान लेंगे। 1000 में से 10 लोग भी जैन धर्म की वैज्ञानिकता समझ लेंगे तो मेरा ग्रंथ लिखना सार्थक हो जायेगा।

आपकी भावना वंदनीय है, आपने विचार किया जितना ज्ञान मैंने प्राप्त किया है, वह ज्ञान मैं सबको दे नहीं पाऊँगा; क्योंकि सबका क्षयोपशम तीव्र नहीं है। आपने इतना पढ़ाया लेकिन आपके समान ज्ञानी अभी तक कोई नहीं बन पाया। आपने जो ज्ञान प्राप्त करने के लिए परिश्रम किया है, कर रहे हैं, आपके जैसी पढ़ने की लगन किसी के अंदर नहीं है। आज अनेक विश्वविद्यालयों में आपके साहित्य चल रहे हैं।

आप हमेशा कहते रहते हैं **''णाणा जीवा णाणा कम्मा णाणा विहो हवे लध्दी''** सबका क्षयोपशम अलग-अलग है। परन्तु वो ही विषय मैं पुस्तकों में लिख दूँगा तो युगों-युगों तक काम आता रहेगा। ऐसे वात्सल्यमयी भाव से आपने गुरुओं के कहने पर उनका आदेश पालन करते हुए ग्रंथ लिखे। किसी ने कोई प्रश्न पूछा तो आपने उस प्रश्न पर ही पूरी पुस्तक लिख डाली। ऐसे पूछने वाले उनमें कभी साधु तो कभी श्रावक और कभी कोई विद्वान् थे। जब-जब जिसने कुछ भी प्रश्न किया तो आपने पुस्तक लिखी। आप उस व्यक्ति का नाम भी पुस्तक में लिखते हैं कि यह पुस्तक इस साधु की प्रेरणा से लिखी है। आपने एक से बढ़कर एक पुस्तकें लिखी हैं। किस धर्म में क्या सत्य बताया है, हर धर्म की पुस्तकों से आप सत्य का रहस्य खोजकर लाये। हर भाषा में पुस्तकें लिखी है। सबसे बड़ी बात तो हर पुस्तक में यह मिलेगी कि आप एक वैज्ञानिक संत हैं, आपने जिनधर्म को विज्ञान से जोड़ा है। आपकी पुस्तकों के विषय को कोई काट नहीं सकता। आचार्य, उपाध्याय, साधु, वैज्ञानिक, कुलपति, प्रोफेसर, लेक्चरार आदि कोई विद्वान आपकी पुस्तक में कुछ भी गलती नहीं निकाल सकते। यही आपकी प्रामाणिकता प्रसिद्ध है। आपने जो भी लिखा है आगम (जिनवाणी) पूर्वाचार्यों की वाणी को ही लिखा है। आपको 14 भाषाओं का ज्ञान है।

आप एक वैज्ञानिक संत हैं-

आप जो भी विषय पढ़ाते हैं, वह सब विज्ञान से सिद्ध करके बताते हैं। आपको बचपन से ही विज्ञान में विशेष रुचि थी। आज के बच्चों को कोई भी विषय यदि हम ऐसे ही बताते हैं तो समझ में नहीं आता है परन्तु विज्ञान से बताने पर शीघ्र ही समझ में आ जाता है। आपके पास देश-विदेश के अनेक वैज्ञानिक पढ़ने आते हैं। आप बहुत से विषय पुस्तकों में पहले ही लिख चुके हैं।

आज वैज्ञानिक लोग जब कभी कोई बात सिद्ध करते हैं तो आपको बहुत खुशी होती है कि मैंने कितना अच्छा काम किया जो यह विषय वर्षों पूर्व अपनी पुस्तक में लिख दिया।

आपके पास वैज्ञानिक लोग विशेष रूप से विज्ञान का और धर्म का लाभ उठा रहे हैं। वैज्ञानिकों को आप जैनधर्म से पढ़ाते हैं तो उन्हें बड़ा ही आनंद आता है। वो आपके साहित्य को अमेरिका आदि कई देशों में ले जाकर धर्मदर्शन विज्ञान का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। कई संस्थायें विदेश में चल रही हैं। आपका साहित्य अनेक देशों में विविध भाषाओं में छप चुका है।

आप आचार्य श्री धरसेन, पुष्पदंत, भूतबली की तरह जिनवाणी की सेवा कर रहे हैं। आगे भी करते रहेंगे।

आपका वास्तविक परिचय-

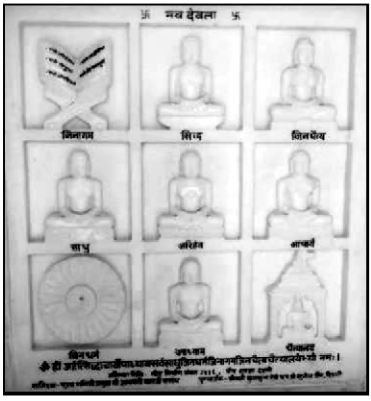

गुरुदेव के परिवार बन्धु जन

आपकी माता जिनवाणी है। आपके पिता सिद्ध भगवान हैं। आपके भाई बाँधव पंचपरमेष्ठी है। मोक्ष ही आपका घर है। उसी को पाने का एक लक्ष्य आपका है। उसके लिये ही आप साधना कर रहे हैं। सत्य, साम्य और सुख को पाने के लिये हरपल प्रयास कर रहे हैं। आपकी समतामयी साधना को मैं प्रणाम करती हूँ। आपका यही वास्तविक परिचय है।

आपके दीक्षा गुरु के साथ आपके चातुर्मास- आप ने अपने दीक्षा गुरु के साथ 17 (अठारह) चातुर्मास किये।

प्रथम चातुर्मास शाश्वत तीर्थ

1. सम्मेद शिखर जी (1975) 2. चम्पापुरी (1976)
3. आरा (बिहार) (1977) 4. सोनागिर (1978)
5. शाहगढ़ (म.प्र.) (1979) 6. अकलूज (महाराष्ट्र) (1980)
7. श्रवणबेलगोला (1981) 8. हासन (1982)
9. तुमकुर (1983) 10. बेलगाँव (1984)
11. शमनेवाड़ी (1985) 12. शेड़वाल (कर्नाटक) (1986)
13. अकलूज (महा.) (1987) 14. आरा (बिहार) (1988)
15. बड़ौत (1989) 16. मुजफ्फर नगर (उ.प्र.) (1990)
17. रोहतक (हरियाणा) (1991)

आपके स्वतंत्र चातुर्मास कहाँ–कहाँ पर हुये–

1. निवाई (1992) 2. लावा (1993)
3. बिजौलिया (1994) 4. कोटा (1995)
5. केशरियाजी (1996) 6. सागवाड़ा (1997)
7. सलूम्बर (1998) 8. झाड़ौल (1999)
9. आयड़ (2000) 10. गींगला (2001)
11. प्रतापगढ़ (2002) 12. मुंगाणा (2003)
13. गनोड़ा (2004) 14. उदयपुर (2005)
15. सागवाड़ा (2006) 16. सागवाड़ा कॉलोनी (2007)
17. पाड़वा (2008) 18. रामगढ़ (2009)
19. सीपुर (2010) 20. सेमारी (2011)
21. विजयनगर (2012) 22. हल्दी घाटी (2013)
23. उदयपुर (2014) 24. नन्दौड़ (2015)
25. सीपुर (2016) 26. चीतरी (2017)

इस प्रकार आपके जीवन के अभी तक सबसे अधिक चातुर्मास राजस्थान की पावन भूमि पर सानंद सम्पन्न हुये। राजस्थान में भी मेवाड–बागड़ प्रांत में सबसे अधिक चातुर्मास हुये।

आपने अभी तक बच्चों के लिये सबसे अधिक शिविर लगाये–

आप बच्चों से बहुत प्यार करते हैं, बच्चों को आगे बढ़ाते हैं। जब भी कोई बच्चा नया काम करता तो आप उसे बहुत ही प्रोत्साहित करते हैं। उसकी बहुत तारीफ करते हैं। उसको ईनाम देते हैं। प्रोत्साहन पाकर बच्चे और अच्छे से अच्छा काम करने में लग जाते हैं। आप बोलते हैं, बच्चे कल का भविष्य हैं। इनको संस्कार देना जरूरी है। आपका एक नारा है आप मुझे सहयोग दो मैं आपको संस्कारित बच्चे दूँगा, वैज्ञानिक धर्म दूँगा। इसलिये बच्चों को पढ़ाने के लिये आप धर्म–दर्शन–विज्ञान शिविर लगाते हैं। उसमें हजारों बच्चे आपसे पढ़ते हैं। धर्म का महत्व और गुरु का विनय आदि देखकर सच्चे धर्मात्मा श्रावक बनते हैं। आप जीवन्त प्रतिमाओं का पंचकल्याणक करते हैं। उनको धर्म के संस्कार देते हैं। आपने छोटे–छोटे गाँव में और बड़े–बड़े शहरों में अभी तक सैंकड़ों शिविर अवश्य लगाये हैं। शिविर में जो संस्कार आप देते हैं वो बात बच्चे–बच्चे जीवनभर याद रखते हैं और आगे जब कोई भी गुरु आते हैं तो वो बालक–बालिका उनकी भक्ति सेवा करने में तत्पर रहते हैं और गर्व से कहते हैं हमें यह संस्कार आचार्य श्री कनकनन्दी गुरुदेव ने दिये हैं।

आपको पढ़ने की विशेष रुचि–

आपको बचपन से ही पढ़ने में विशेष रुचि है। आप कितना ही विहार करके जाते, वहाँ सब साधु तो सामायिक आदि करके विश्राम करते थे। परन्तु आपको किसी कॉलेज, स्कूल में अगर लाइब्रेरी दिख जाती तो आप रातभर पुस्तकें पढ़ने में ही निकाल देते थे। उस रात आप सोते ही नहीं थे।

पुस्तकें देखकर आपकी सारी थकान उतर जाती थी। जब आप घर में थे तब आपके बड़े भाई आपको किताबी कीड़ा कहते थे। पुस्तकों में अगर आपको किसी वैज्ञानिक के द्वारा लिखी हुई पुस्तक मिल जाती तो आप खोज पूर्ण विषय का अध्ययन करने में इतने तल्लीन हो जाते कि कब रात पूरी हो जाती, आपको पता भी नहीं चलता था। आप कहते हैं, भोजन करने पर भूख मिट जाती है, पानी पीने पर प्यास बुझ जाती है। भूख क्यों मिटी, प्यास क्यों बुझी, जैसे इन प्रश्नों का उत्तर हम जैसे सामान्य जीवों के पास नहीं है ? ऐसे ही अनेक प्रश्नों के उत्तर आप खोजते रहते और पुस्तकों में आपने कई प्रश्नों के उत्तर लिखे हैं। यह कैसे हुआ, क्यों हुआ, इस क्यों का उत्तर आप ही दे सकते हैं।

आपका प्रिय विषय है विज्ञान–

आप कहते हैं हम जितना विज्ञान के नजदीक जायेंगे उतना ही विज्ञान को समझ पायेंगे, विज्ञान को समझने के लिए विज्ञान में डूबना पड़ेगा। विज्ञान पढ़ने से हमारी बौद्धिक क्षमता बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है। हमारे मन में पवित्रता आती है, अहंकार नष्ट होता है। सरल परिणाम बनते हैं। हमारे विचारों में विशालता झलकने लगती है। इसलिये हर विद्या को विज्ञान की दृष्टि से पढ़ना चाहिये। हर दर्शन का ज्ञान होना चाहिये। जो व्यक्ति जितना अधिक धर्म को विज्ञान से जोड़ता है वह उतना ही सरल परिणामी बनता है। नम्रता और विनय के कारण ज्ञान का क्षयोपशम और बढ़ता है।

आपको जैनधर्म का ही नहीं हर धर्म का ज्ञान है–

आप कहते हैं, हम केवल जैनधर्म का ही ज्ञान करेंगे तो केवल रूढ़िवादी धर्मात्मा बनकर रह जायेंगे। यही आज हमारे धर्म में हो रहा है। पूजा करली तो धर्म हो गया, आहार दे दिया तो धर्म हो गया, सेवा करली तो धर्म हो गया, स्वाध्याय कर लिया तो धर्मात्मा बन गये या कोई व्रत उपवास कर लिये तो धर्म का टिकिट ही मिल गया।

मन में राग, द्वेष, संक्लेश, ईर्ष्या, घृणा, कलह, कपट, क्लेश, भेदभाव, कषाय, तेरा-मेरा, पक्षपात, दुर्भाव, ख्याति, पूजा, प्रतिष्ठा प्रसिद्धि के लिये केवल दिखावा कर रहे हैं। इन सबमें फंसकर धर्म नहीं होता। सरलता, समता और सत्य जहाँ है वही वास्तविक धर्म है। ऐसे धर्म से जीव का उत्थान होता है और इसके सिवा कोरा पाखण्ड तो पतन में कारण है।

उपवास करने वाले से भी भोजन करने वाला श्रेष्ठ है-

आप हमेशा आपके पास पढ़ने वाले छोटी उम्र के साधुओं को यही सिखाते हैं। छोटी उम्र (कम उम्र) वाले साधुओं को पहले अच्छे से समता के साथ ज्ञानार्जन करना चाहिये। छोटी उम्र में जो अधिक व्रत, उपवास, त्याग आदि करते हैं उनका ज्ञान नहीं बढ़ता, वो अधिक स्वाध्याय आदि नहीं कर पाते हैं, पढ़ नहीं पाते हैं। याद भी नहीं हो पाता है, स्मरण शक्ति घटती जाती है। पित्त बढ़ जाता है। उपवास आदि अधिक करने से शरीर में कमजोरी आने लगती है जिसके कारण क्रोध आना और चिड़चिड़ापन बढ़ता जाता है। हीमोग्लोबिन कम हो जाता है। कुछ भी याद करना चाहें तो याद नहीं हो पाता है। ज्ञान नहीं होने से हीन भावना बढ़ती है। आपके पास पढ़ने वाले साधु लोग आपके कहे अनुसार व्रत आदि करते हैं। आप कहते हैं- हमें अपनी शक्ति के अनुसार व्रत, उपवास करना चाहिये। भोजन करके जो समता और शांति में रहता है, क्लेश नहीं करता है, क्रोधादि भाव से दूर रहता है भोजन करने वाला वह व्यक्ति उपवास करने से भी श्रेष्ठ है।

आचार्य श्री कुंथुसागर जी के साथ अनेक नगरों में विहार-

आपने कदम से कदम मिलाकर अपने दीक्षा गुरु के साथ 18 वर्षों तक विहार किया।

आ. कुंथुसागर जी एवं कनकनंदी जी ससंघ विहार करते हुए

अनेक बड़े–बड़े नगरों में बड़े–बड़े कार्यक्रमों का आयोजन हुआ। कहीं पर विधान तो कहीं पर पंचकल्याणक, कहीं पर बच्चों का शिविर और कही–कहीं पर संघों का मिलन हुआ तो वहाँ आपने साधुओं को स्वाध्याय, क्लास आदि लेकर पढ़ाया। जिस समय जहाँ भी जिस ग्रन्थ को पढ़ने की साधुओं ने, आचार्यों ने माँग की, वही ग्रंथ आपने सामुहिक रूप में सबको पढ़ाया।

आरा से हस्तिनापुर में आगमन यहाँ विद्वानों को पढ़ाया–

जब संघ आरा में विराजमान था तब गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी ने आपके संघ को निमंत्रण भेजा। माताजी ने हस्तिनापुर में विद्वानों (पंडितों) का शिविर लगाया। उस शिविर के निमित्त से संघ को लेने के लिये भेजा। माताजी के बुलाने पर आचार्यश्री ने पूरे संघ के साथ आरा से हस्तिनापुर की ओर विहार किया। माताजी ने पूरे संघ की आगम विधि से समाचार विधि की और हस्तिनापुर में भव्य स्वागत किया। आपके ज्ञान की खुशबू चारों ओर फैल चुकी थी। माताजी शिविर में विद्वानों को 'समयसार' पढ़ाना चाहती थी। आप जब वहाँ पहुँचे माताजी ने स्वयं आपसे निवेदन किया, आप यहाँ आये हैं। इसलिए इन विद्वानों को आप समयसार पढ़ाइये। आपने मना भी किया परन्तु माताजी ने बार–बार निवेदन किया। फिर आपने 250 विद्वानों को 7 दिन और साधुओं को डेढ़ महीने तक पढ़ाया। सबको सत्य का बोध कराया। 35 पिच्छी उस समय आपके संघ की थी। आचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव संघ सहित हस्तिनागपुर में डेढ़ महीने रहे।

हस्तिनागपुर से उत्तर प्रदेश की धरम नगरी बड़ौत में प्रवेश–

हस्तिनापुर से संघ का विहार हुआ। वहाँ से विहार करते हुए बड़ौत धर्म नगरी में प्रवेश हुआ। बड़ौत में तीन आर्यिका दीक्षा हुई।

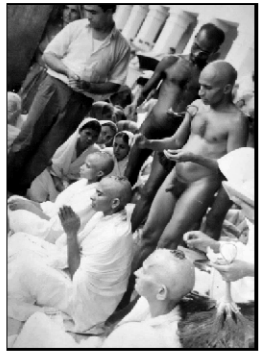

बड़ौत में तीन आर्यिका दीक्षा हुई

चातुर्मास के पूर्व यहाँ पर 1989 का चातुर्मास हुआ। यहाँ पर आ. विमलसागर जी के आदेश से आगमोक्त पंचामृत अभिषेक का धार्मिक वैज्ञानिक कारण बताने वाली 'जिनार्चना'' पुस्तक का प्रकाशन हुआ। जिसको पढ़कर सब लोग पंचामृत अभिषेक का विषय जान सकते हैं। उस पुस्तक में अनेक ग्रंथों का प्रमाण आपने विस्तार से (आ.कनकनन्दी) दिया है। आपकी भक्ति सबसे अधिक जिनवाणी की सेवा में समर्पित है। कोई प्रश्न पूछता है तो तुरन्त आप पुस्तक के प्रमाण के साथ लिख देते हैं। यह आपकी बहुत बड़ी अनुकम्पा है।

आपने अभी तक कितने ग्रंथ लिखे–

आपने हरएक विषय पर, चारों अनुयोग पर धार्मिक, वैज्ञानिक, सामाजिक, आध्यात्मिक अनेक ग्रंथ लिखे हैं। करीब 250 ग्रंथ छोटे बड़े रूप में आप लिख चुके हैं और दिन–रात आप लिखते ही रहते हैं। आप ''गद्य और पद्य'' दोनों विषय को अपनी कलम से लिखते रहते हैं। आपके द्वारा लिखे गये कई विषय तो ऐसे हैं जिनकी खोज अभी वैज्ञानिक लोग करने में लगे हैं। अगर वैज्ञानिक लोग उस विषय को खोजते हैं, वह विषय जब पेपर में छपकर आता है तो आपको इतना आनंद आता है कि मैंने कितना अच्छा काम किया। जो पहले ही लिख दिया। आप अपने आपको धन्यवाद देते हैं। अपनी पीठ थपथपाते हैं। सबको बताते हैं। जो विषय मैंने कई वर्षों पूर्व लिख दिया। आज वही बात वैज्ञानिक लोग भी सिद्ध कर रहे हैं। आप तो सुपर साइंटिस्ट हैं। वैज्ञानिकों के भी बड़े वैज्ञानिक है। जो कुछ होने वाला है, वह सब आप अपनी वैज्ञानिक दृष्टि से आप लिख चुके हैं। वैज्ञानिक लोगों से भी आप परे जा चुके हैं। वो तो आपके सामने बिन्दु हैं आप तो सिंधु के बराबर है। आपसे वो भी समझने आते हैं, क्योंकि उनके पास में जैनधर्म के मूलभूत तत्व नहीं है। इन आगम के सिद्धान्तों का ज्ञान नहीं है।

इसलिए आपने जैनधर्म को एक वैज्ञानिक धर्म सिद्ध किया है। जैनधर्म के सिद्धांत को 24 प्रभु की वाणी को कोई काट नहीं सकता। वही काम आप छोटी-बड़ी पुस्तकों में लिखकर कर रहे हैं। ये बात अलग है, जनसाधारण व्यक्ति आपको और आपके द्वारा लिखी हुई पुस्तकों को नहीं समझ सकता। आपके द्वारा लिखी हुई एक-एक पुस्तक को समझने के लिए आपके जैसी बुद्धि चाहिये। वो अभी बहुत ही कम लोगों में है। लोग इतने बिजी हो चुके हैं कि उन्हें पुस्तक पढ़ने का समय ही नहीं मिलता है। फिर भी आपकी पुस्तकों का उपयोग विद्वान् एवं वैज्ञानिक प्रोफेसर, कुलपति, लेक्चरार आदि अधिक संख्या में कर रहे हैं। आपकी भाषा भी हर व्यक्ति नहीं समझ पाता है। आपकी भावना और आपकी सरलता को बहुत कम लोग समझते हैं। लेकिन जो भक्त एक बार समझते हैं, फिर वो आपके दिवाने हो जाते हैं। वास्तव में आप आचार्य श्री कुंथुसागर जी यानि की भोले बाबा के भोले शिष्य हो, सरल स्वभावी सत्यनिष्ठ शिष्य हो।

मुजफ्फरपुर नगर में हुई विशेष क्रांति-

बड़ौत चातुर्मास में बहुत ही धर्म प्रभावना हुई। यहाँ से संघ का प्रभावना के साथ मुजफ्फर नगर की ओर विहार हुआ। मुजफ्फर नगर में 1990 का चातुर्मास हुआ। इस चातुर्मास के दौरान नगर में दंगा हो गया और शहर के हालात देखते हुए वहाँ कर्फ्यू लगा दिया गया।

उस समय संघ में पूरे 40-45 साधु थे। संघ बड़ा था। इतने बड़े संघ का आहार कहाँ पर होगा, कैसे होगा, समाज चिंता करने लगी। साधु बाहर आहार लेने कैसे जायेंगे। कहीं किसी साधु के साथ कोई अप्रिय घटना घट गई तो क्या करेंगे। कौन मुनियों को सुरक्षित लायेगा, वापस पहुँचायेगा। समाज के वरिष्ठ लोग आचार्य श्री कुंथुसागर जी के पास में आये।

आचार्यश्री से वो सब कहने लगे। हम लोग यहीं औषधालय में चौका लगालें ? शहर में कर्फ्यू लगा हुआ है। हम आपको और माताजी महाराज को कैसे यहाँ से लेकर जायेंगे। हम आपसे विनती करने आये हैं। हमें यहाँ चौका लगाने की आज्ञा दें।

आचार्यश्री ने सब भक्तों की बात सुनी और उनसे कहा– आप सब जानते ही होंगे मेरे संघ का पूरा संचालन उपाध्यायश्री कनकनंदी जी करते हैं। आप सब लोग उनके पास जाइये। वो जैसा कहें वैसा करना। सब लोग आपके पास में आये, आपको सारा विषय बताया, सभी अंदर से बड़े भयभीत हो रहे थे। पता नहीं हमारी समस्या का समाधान क्या देंगे। आपने उनसे कहा, आप डरिये मत मुझे सारी बात विस्तार से बताइए। सब ने विस्तृत जानकारी आपको दे दी। आपने कहा–चिंता मत करिये, हम भारत के संत हैं, कोई आतंकवादी नहीं।

आप घरों में चौका लगाइये। मैं देखता हूँ, सरकार हमारा क्या करती है। हम सरकार का कानून मानने वाले भी नहीं है। हम किसी सरकार के आधीन चलने वाले नहीं है। हम कोई कायर नहीं है। हमने कोई अपराध तो नहीं किया है। जो हम उनसे डरे।

हम महावीर भगवान के वंशज हैं। हम दंगा करने वाले देशद्रोही नहीं हैं और दूर भी चौका लगाओ। मैं स्वयं सबसे दूर रहने वाले चौके में आऊँगा। मैं भी सरकार को देख लूँगा। वो मुझे देख लेंगे। तब देखूँगा ये मेरा क्या करते हैं ? कानून के रखवालों को भी कानून सिखा दूँगा। क्या होता है कानून ? आपको राजनीति, अर्थशास्त्र, कानून व्यवस्था, दण्ड व्यवस्था आदि का भी ज्ञान है। कौन सा अपराध करने पर क्या दण्ड देना चाहिये आदि ?

प्रवचन में अच्छी संख्या भक्तों की–

ऐसे तो लोग बहुत आते थे परन्तु जब वहाँ दंगा हुआ तो सभी लोग घरों से निकलकर प्रवचन सुनने और अच्छी संख्या में आने लगे। बड़े–बड़े विद्वान गुरुवाणी का लाभ लेते थे। वैसे भी मुजफ्फर नगर विद्वानों की नगरी है। आपकी प्रेरणा से सब लोगों ने दंगे के समय भी चौके लगाये। चौके में छोड़ने के लिये भी अच्छी संख्या में भक्त लोग जाते थे। जब आप आहार करके आ रहे थे तब पुलिस को आपने बोला– ये सब जैन बांधव हमारे भक्त हैं। ये हमें आहार देते हैं, जब ये लोग आहार देने आये या जायें तो इनको रोकना मत। ये सब हमारे पास औषधालय में भी आयेंगे, इनको कुछ कहना मत, कभी भी ये लोग आ–जा सकते हैं। सुबह, दोपहर, शाम के समय अब सब लोग निडर होकर आहार देने आने लगे। दिन में स्वाध्याय में आते थे। शाम को गुरुओं की सेवा वैयावृत्तिआदि करने भी आते थे। कोई भी पुलिस वाला जैन बन्धुओं को रोकता नहीं था। एक महीने तक वहाँ कर्फ्यू रहा और बाद में और भयंकर उपद्रव लड़ाई–झगड़ा फैल गया। गोलियाँ चली, बन्दूकें, तलवारों से कितने ही लोग घायल हुए, कुछ मर गये। जहाँ देखो पुलिस ही पुलिस दिख रही थी। सुरक्षा और बढ़ा दी, लड़ाई बन्द होने का नाम ही नहीं ले रही थी। सरकार ने मार्शल 'लॉ' लगा दिया। दंगा करने वालों को देखते ही गोली मारने का आदेश दे दिया था। सभी लोग घर में बंद हो गये। साधु, भक्त लोग विचार करने लगे, अब क्या होगा, इतने बड़े संघ का आहार कैसे होगा। अब साधुओं को चौके में कैसे लायेंगे। सभी लोग आचार्यश्री पास आये। गुरुदेव ने पुनः सब भक्तों को आपके पास में भेज दिया। सब भक्त बोले– उपाध्यायश्री अब मार्शल लॉ लग गया है। देखते ही गोली मारने का आदेश दे दिया है। आप हमें यहीं पर चौका लगाने की अनुमति दीजिये। हम साधुओं को अब बाहर कैसे ले जायेंगे।

आपने कहा– नहीं। चौका घर में ही लगाओ, हम लोग आयेंगे, किसी में मेरे से लोहा लेने की ताकत नहीं है। क्या कभी सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र, पेड़, पौधे, जानवर, मनुष्यों का कानून मानते हैं ? इनके अनुसार चलते हैं? नहीं चलते। उसी तरह हम भी प्रकृति में जीने वाले, सबके कल्याण की भावना करने वाले क्या सरकार के अनुसार चलेंगे ? आप लोग चौका लगाइये। मैं सब देख लूँगा।

दूसरे दिन सबसे पहले आप आहार के लिये बाहर निकले। आपको देखते ही 10–12 पुलिस की गाड़ियाँ खटाखट सामने आकर रुक गई, खड़ी हो गई। आपको सब पुलिसवाले देखते रहे और आप आगे बढ़ते रहे। आपने किसी को कुछ भी नहीं बोला। आपके बाद में एक–एक करके सारे साधु बाहर आते गये, जहाँ–जहाँ चौके लगे थे वहाँ सभी साधु शांति से आहार करके आये।

एक दिन आपको अशोक जैन ने दूरबीन में शहर का शांत नजारा दिखाया। आपने देखा– कहीं किसी का आवागमन नहीं हो रहा है। आपने देखा दो पुलिसवाले एक दूध वाले को बुरी तरह से पीट रहे थे। आपको बहुत दुःख हुआ। आप नीचे उतर कर आये। बाहर निकले और पुलिस वाले को अपने पास में बुलाया।

आपने पुलिस वाले से कहा– आप लोगों को निर्दोष, निरपराध व्यक्तियों को मारने का कोई अधिकार नहीं है। दंगा करने वालों को तो आप लोग कुछ नहीं बोल रहे हो। ये एक गरीब व्यक्ति है। यह दूध बेचकर अपने परिवार का पालन–पोषण करता है और इसे आप मार रहे हो, यह कहाँ का न्याय है। एक महीने से मार्शल लॉ लगा है। लोगों के पास राशन नहीं, खाने का सामान नहीं, दूध के बिना बच्चे बड़े बिलख रहे हैं। उनका दुःख तुम्हें दिखाई नहीं दे रहा है। इन गरीब लोगों का पेट सरकार भर देगी क्या ? प्रशासन उनकी क्या सहायता कर रहा है ?

नेताओं की तो तुम सुरक्षा करते हो और निर्दोष जनता को सताते हो। यह कानून नहीं अपराध है। उस दूध वाले को छोड़ो गलती करने वालों को सजा दो, बिना कारण किसी को दंडित मत करो।

पुलिस वाले ने अपनी गलती स्वीकार की, आपसे क्षमा माँगी, हाथ जोड़कर प्रणाम किया। उसने दूध वाले को शांति से जाने दिया। आप पुलिसवाले को अपने कक्ष में ले गये, उसको स्व द्वारा लिखी ''क्षमा वीरस्य भूषणम्'' यह पुस्तक आपने पढ़ने के लिये दी।

आपने जो उस समय क्रांति की वह क्रांति सब भक्तों के लिये बहुत काम आई। जहाँ चातुर्मास हो रहा था वह औषधालय पूरी समाज के लिये कवच बन गया। जब आप इस तरह के कोई भी कार्य करते थे तब आपको हमेशा सफलता मिलती थी। सफलता की सीढ़ी पर आप चढ़ते गये। कभी आपने क्रांतिमय कार्यों को नहीं छोड़ा, कुछ न कुछ कार्य तो करते ही रहते थे।

आप जब नया कार्य करने के लिए कदम बढ़ाते थे, तब शुरूआत में साधु वर्ग और समाज दोनों ही साथ नहीं देते थे। फिर भी आप हार नहीं मानते थे। जब आपकी विजय हो जाती तो सब लोग आपकी जय–जयकार करने आ जाते थे। साधु वर्ग भी खुश हो जाते थे परन्तु पहले साथ नहीं देते थे। यही स्वार्थी संसार है।

मुजफ्फर नगर का चातुर्मास सानंद सम्पन्न हुआ। वहाँ पर संघ का चातुर्मास होने के बाद संघ दिल्ली में आया। एक दिन आहार में जाते समय एक मुनिराज जो कि अभी आचार्य कुशाग्रनंदी उनका नाम है। उनके ऊपर किसी अजैन व्यक्ति ने पत्थर फेंक दिया था। आपको जैसे ही इस घटना का पता चला तो आपने धर्म एवं संघ की रक्षा के लिये धर्म की एक क्रांति की और दिल्ली प्रशासन को हिलाकर रख दिया। आपने अपने ओजस्वी प्रवचन में कहा–

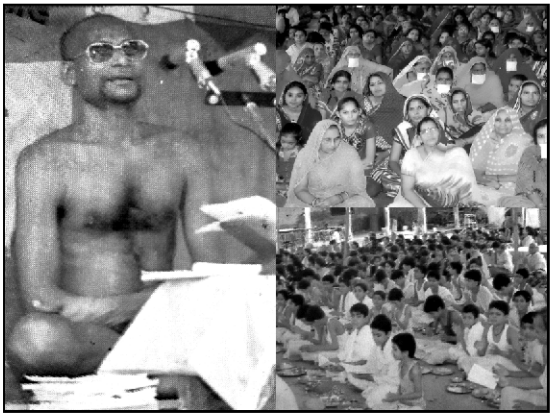

आचार्य कनकनन्दी जी गुरुदेव
प्रवचन देते हुए

''हम भारत के संत हैं। भारत देश हमारा है। सरकार, शासन, प्रशासन, राजनेता आदि सब वहाँ एकत्रित हुए। आपने सबको न्याय नीति का पाठ पढ़ाया। हजारों की संख्या में उपस्थित जन समुदाय को आपने सम्बोधित किया। ''जैन साधु केवल जैनियों के ही साधु नहीं होते हैं। जन–जन के होते हैं। हम पूरे भारत में निर्विवाद रूप से गमन कर सकते हैं। हमें कोई रोक नहीं सकता'', आपने धर्म का बिगुल बजाया था। जिस प्रकार दक्षिण वाले आचार्य शांतिसागर जी ने अंग्रेज सरकार के सामने जो क्रांति का कार्य किया था। भारत के जैन साधु–साध्वी पूरे भारत में विहार कर सकते हैं। ऐसा संविधान भारत सरकार से पास करवाया, सरकार ने पास किया। वैसी ही क्रांति आपने भी की, दिल्ली को हिलाकर रख दिया। आप संघ सहित कुतुबमीनार देखने गये तब भी आपने उसका बड़ी बारीकी से अध्ययन किया और दिल्ली की जैन समाज से कहा– आप लोग मेरा साथ दो। ये कुतुबमीनार हमारा 'मानस्तम्भ' है। पर समाज ने आपका साथ नहीं दिया। उसमें प्रतिमायें और देवी–देवता व यक्ष–यक्षिणी सबको बताये, इस मानस्तम्भ में 24 जिन प्रतिमायें हैं। हम सरकार के सामने ये साबित कर सकते हैं। ये जैन धर्म की धरोहर है। यह हमें मिलना चाहिये। आपने बहुत लोगों को बोला व समझाया परन्तु समाज के नेता लोग आपके साथ में नहीं हुये।

अगर लोग थोड़ा आपका साथ देते थे तो आज कुतुबमीनार जैन मान-स्तम्भ के नाम से जाना-पहचाना जाता। आपने उसके कई फोटो भी खिंचवाये। यह देखकर आपको धीरे-धीरे और अधिक अनुभव हो गया कि हम समाज के लिये कितना ही परिश्रम करें परन्तु यही समाज हमारा वक्त पर साथ नहीं देती है। फिर आपने ऐसे सामाजिक कार्य करना बंद कर दिया। आपने संकल्प कर लिया जब तक समाज आगे नहीं बढ़ेगी तब तक मैं उनके लिये आगे बढ़कर कोई काम नहीं करूँगा। आपका यह कटु अनुभव हर साधु के लिये ब्रह्मास्त्र बन सकता है।

दिल्ली के अनेक चौराहों पर आपके प्रवचन-

आपके दिल्ली, चाँदनी चौक में और भी स्कूल, कॉलेज और बड़े-बड़े चौराहों पर मार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक प्रवचन हुये। आपके प्रवचन में हर समाज के प्रबुद्ध वर्ग भी आते थे। श्वेताम्बर, हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख आदि हर समाज के लोग आपका प्रवचन सुनने आते थे। भारत के विरुद्ध कानून, राजनीति, भ्रष्टाचार राष्ट्र में फैली अनेक कुरीतियों पर आप जमकर प्रहार करते थे, बोलते थे। नेता लोग पुलिस प्रशासन भी वहाँ मौजूद रहता था परन्तु कोई आपका सामना नहीं कर सकते थे। किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि वो आपकी बात को काट दे। आपको कुछ कह दे। कोई भी नेता यह नहीं बोलता था कि आप जो कुछ बोल रहे हैं वो गलत है। बल्कि वो सब आपकी वाणी सुनकर आपके पक्ष में हो गये। आपकी बात को स्वीकार करते थे, सत्य को जानते थे।

आप एक क्रांतिकारी संत हैं। आपने अपने गुरु के साथ में महती धर्म प्रभावना दिल्ली में की। वहाँ दो पंचकल्याणक भी सानंद सम्पन्न हुये। दिल्ली में आपने बड़े लोगों को विशेष रूप से जगाया और धर्म से जोड़ा।

दिल्ली से रोहतक की ओर विहार–

दिल्ली से पूरे संघ का प्रवेश हरियाणा प्रांत धर्मनगरी रोहतक में हुआ। वहाँ पर चातुर्मास के पूर्व ही भव्य मुनि दीक्षाएँ (आ. गुणनंदी जी व आ. गुप्तिनंदी जी की) सम्पन्न हुई। बहुत धर्म प्रभावना उस मुनि दीक्षा में

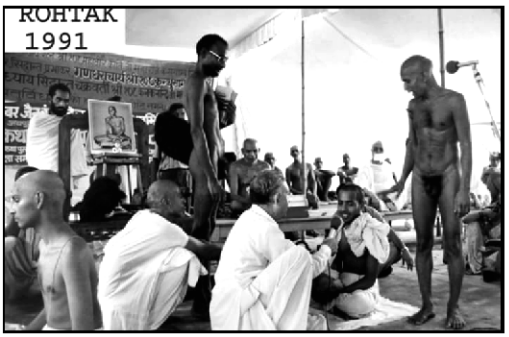

आ. कुन्थुसागर जी, आ. कनकनन्दी जी ससंघ मुनि श्री गुप्तिनंदी जी को दीक्षा देते हुए

हुई। श्वेताम्बर संत भी उस दीक्षा में सम्मिलित हुये। रोहतक समाज में जो धर्म की क्रांति आपके चातुर्मास में आई, आज तक उस चातुर्मास को बच्चा–बच्चा याद करता है। ऐतिहासिक चातुर्मास प्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ। पूरा रोहतक धर्ममय बन गया। बच्चे बूड्ढे, महिला, पुरुष, बालक, बालिका हर वर्ग के लोग आप लोगों से जुड़े। आहारदान आदि देना सीखें, मंदिर जाना, भगवान का अभिषेक करना, यह सब जैनत्व के कर्त्तव्य आपके द्वारा लगाई गई क्लास से उनको मिले, जिन्हें जैनधर्म का अ आ नहीं आता था, ऐसे रोहतक में हरएक व्यक्ति संस्कारों से सुसज्जित बना है। पीढ़ी–दर–पीढ़ी नंदी संघ के संस्कार रोहतक में चलते रहेंगे।

रोहतक समाज को और वहाँ के हरेक व्यक्ति को आचार्यश्री व उनके पूरे संघ पर अटूट श्रद्धा (आस्था) है। पहली बार जो संस्कार आपने दिये हैं और बच्चों से आहार आदि लिया है। वो कभी नहीं भूल सकते। आज भी वहाँ पर जब भी कोई संघ आता है तो सबसे पहले दोनों आचार्यों का नाम सबके मुँह से निकलता है। बहुत ही धर्म साधना और समता के साथ रोहतक का चातुर्मास हुआ।

रोहतक से विहार जयपुर में प्रवेश–

राजस्थान की राजधानी गुलाबी नगरी जयपुर में बड़े ही धूमधाम से संतप्रकाश जी खंडाका आदि परिवार ने बड़ी भक्ति भाव से आपके संघ का भव्य प्रवेश कराया। यहाँ श्रद्धालु जन लाखों की संख्या में पूरे संघ का ऐतिहासिक प्रवेश देखने व दर्शन करने को भक्त बनकर आये। यहाँ पर आपके सानिध्य में बच्चों का शिविर लगा। बड़े और बच्चे महिलायें, पुरुष, बालक–बालिकाओं ने शिविर में भाग लिया। जयपुर के केन्द्रीय कारागार में आपका विशेष प्रवचन हुआ। जयपुर प्रवास के दौरान बहुत ही धर्म प्रभावना हुई। जयपुर से विहार हुआ और पूरा संघ चूलगिरी खानियांजी व अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी के दर्शन करते हुए पदमपुरा अतिशय क्षेत्र पर पहुँचा।

पदमपुरा से गुरुदेव (आचार्यश्री) का संघ विभाग–

उस समय संघ में 40 पिच्छी हो गई थी। आचार्यश्री ने संघ की व्यवस्था को और अपने शिष्यों की योग्यता को देखते हुए संघ के विभाग कर दिये। अधिक बड़े संघ की समुचित व्यवस्था गाँव में जल्दी से नहीं हो पाती है, इसलिए छोटे–छोटे तीन संघ बना दिये। गुरु की आज्ञा शिरोधार्य करके आप वहाँ से धर्म प्रभावना करने के लिये निकल गये। दो मुनि और दो आर्यिका माताजी आपके साथ में थी। मुनिश्री कुमार विद्यानंदीजी और मुनि श्री गुप्तिनंदीजी। अभी वर्तमान में वे दोनों ही मुनि आचार्य बनकर अपने संघ का संचालन कर रहे हैं। दो आर्यिकाओं में बड़ी माताजी का नाम आर्यिका राजश्री माताजी और छोटी आर्यिका क्षमाश्री माताजी थी। उनमें आर्यिका राजश्री माताजी ने आपके शास्त्र लेखन में बहुत कार्य किया, उनकी समाधि हो चुकी है।

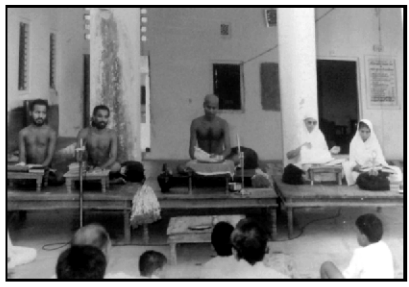

आचार्य श्री कनकनन्दी गुरुदेव संघ के साथ

आर्यिका क्षमाश्री माताजी ने भी शास्त्र आदि लिखने में सहयोग दिया है। दोनों मुनियों ने भी हर कदम पर आपका साथ दिया एवं सेवा, भक्ति शास्त्र लेखन आदि काम किया है।

संघ से अलग होने पर प्रथम पंचकल्याणक–

आपने जब अपने दीक्षा गुरु से अलग विहार किया तब आपके पास निवाई चातुर्मास में पदमपुरा के ट्रस्टी पंचकल्याणक का निमंत्रण देने के लिये आये। आपने अतिशय क्षेत्र पदमपुरा में खडगासन पदमप्रभु भगवान का भव्य पंचकल्याणक करवाया। उस समय और भी साधु उस पंचकल्याणक में थे पर मुख्य रूप में आपका सानिध्य उस पंचकल्याणक में था।

संघ से अलग होने के बाद प्रथम चातुर्मास–

संघ से निकलने के बाद आपका प्रथम चातुर्मास निवाई राजस्थान में हुआ। इस चातुर्मास में आपने गर्मियों की छुट्टी में एवं दीवाली पर बड़े–बड़े शिविर लगाये। जिसमें हजारों लोगों ने संस्कार प्राप्त किये। इस चातुर्मास में आपने साधुओं को पदम पुराण, हरिवंश पुराण आदि अनेक प्रथमानुयोग ग्रन्थ एवं द्रव्यानुयोग, करणानुयोग के विषयों का स्वाध्याय कराया। यहाँ आपका 9 महीने प्रवास रहा। जिसमें स्वतंत्रता के सूत्र, विश्व द्रव्य विज्ञान, अयोध्या का पौराणिक राजनैतिक विश्लेषण आदि अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ। इसमें 'अयोध्या' पुस्तक का प्रकाशन आर.एस.एस. ने करवाया। आपने राजस्थान से अलग चातुर्मास की शुरूवात की है। तब से अभी तक आपके अधिक संख्या में चातुर्मास राजस्थान की धरती पर सम्पन्न हुये हैं। एक चातुर्मास आपने गुजरात की धरती विजयनगर में किया है।

वैसे तो आपको पूजा, पाठ, विधान, पंचकल्याणक आदि में विशेष रुचि नहीं है। परन्तु जहाँ समता, शांति से कार्य होता है वहाँ पर आप जरूर जाते हैं। जहाँ क्लेश, अशांति, क्रोध, लड़ाई, झगड़ा होता है, वहाँ आप कभी भी जाना पसन्द नहीं करते हैं।

आपका कहना है, लोग साधुओं को केवल बुला लेते हैं। उनसे बोलियाँ लगवाते हैं, पैसे की अपेक्षा करते हैं, परन्तु साधुओं के रहने की, आहार आदि की, कोई व्यवस्था अच्छे से नहीं करते हैं। इसलिये आप हमेशा बाह्य आडम्बर से दूर रहना चाहते हैं। क्योंकि भीड़भाड़ शोरगुल में ध्यान, साधना में बाधा आती है। स्वाध्याय आदि कुछ भी नहीं हो पाता है।

आपकी सबसे बड़ी शिक्षा–

आपका यह अनुभव है और आप कहते भी हैं। इस समाज के लिये हम चातुर्मास में कितना भी करते हैं, परन्तु समाज अपना स्वार्थसिद्ध होने के बाद मुँह फेर लेती है। आप पुस्तक यानि की जितना ज्ञान स्वाध्याय शास्त्र पढ़ाकर देते हैं उससे कई गुणा ज्ञान आप अपने अनुभव से देते हैं। आपका कटु अनुभव कभी असत्य साबित नहीं हो सकता। जो आपके अनुभव पर चलता है वो हर क्षेत्र में विजय प्राप्त कर लेता है। आप जो अनुभव के मोती देते हैं वो संसार में किसी के पास में नहीं मिलते हैं।

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव स्वाध्याय करते हुए

आपके पास कोई प्रश्न पूछता है तो शीघ्र उत्तर नहीं देते–

आपके पास कोई साधु या श्रावक कुछ भी प्रश्न पूछने आ जाये तो आप उसे कभी भी जल्दी से उत्तर नहीं देते हैं। आप कहते हैं, समय आने पर उत्तर दूँगा। बिना समय के कभी भी उत्तर नहीं दूँगा। पूछने वाला तो प्रश्न पूछकर भूल जाता है, परन्तु आप बरसों तक उसका प्रश्न याद रखते हैं। प्रसंग आने पर जिस किसी ने भी जो प्रश्न पूछा होगा तो आप उनका उत्तर दे देते हैं।

आप कहते हैं– आधा उत्तर देकर मैं किसी के साथ धोखा नहीं करना चाहता। उत्तर पूरा दूँगा तो ही बोलूँगा। आगे–पीछे का सारा विषय बताऊँगा। आधा उत्तर देने से मेरे मन में अशांति लगती है। किसी को ज्ञान देना है तो पूरा देना वरना नहीं देना। समय पर देने से सामने वाले को भी अच्छे से समझ में आ जाता है। प्रश्न चाहे छोटा सा हो या बड़ा लेकिन आप उत्तर आगमोक्त प्रमाण के साथ देते हैं।

कोई अधिक बोले तो आप कह देते हैं– मैंने इस पुस्तक में यह विषय लिखा है वहाँ से पढ़ लो। परन्तु जो बात, जो ज्ञान आपके समक्ष बैठकर आपसे सुनकर मिलता है, समझ में आता है वह आपकी पुस्तक से नहीं आता। हम आपके सामने बैठकर जो विषय सुनते हैं वह हम पुस्तक में हजार बार पढ़ लेंगे तो भी समझ में नहीं आयेगा। आप जब पढ़ाते हैं तो बहुत ही सुन्दर ढंग से हँसते–हँसाते, पढ़ाते हैं, उदाहरण देकर समझाते हैं और उदाहरण से बात एकदम दिमाग में फीट हो जाती है। आपसे सुना हुआ विषय व कहानी कभी भूलते नहीं और आपके कहने पर पुस्तक वैसे तो पढ़ते ही कम है और पढ़ भी लेते हैं तो याद नहीं रखते हैं। जो विषय सुनकर याद होता है, वह पढ़कर नहीं होता है। जो आपके अनुभव से मिलता है, वह पुस्तक से नहीं मिलता है।

आप किसी के उपकार को नहीं भूलते–

आप कहीं भी जाते हैं तो वहाँ की भाषा आप छोटे–छोटे बच्चों से सीख लेते हैं। आपकी सेवा में किसी ने एक काड़ी भी लाकर दी होगी तो आप उस व्यक्ति का नाम कई बार अपने मुँह से बोलते हैं। छोटे से छोटे प्राणी के द्वारा किया हुआ उपकार भी आप हमेशा याद रखते हैं। कभी भूलते नहीं हैं। आप को किसी ने दो अक्षर का भी ज्ञान दिया है तो आप उसका समय–समय पर उपकार स्मरण करते रहते हैं। यही कारण आपके ज्ञान बढ़ाने में निमित्त है। नीति शास्त्रों में कहा है– **''नहि कृतं उपकारं साधवो विस्मरन्ति''** किये हुये उपकार को साधु कभी नहीं भूलते हैं।

कोई श्रावक आपकी सेवा करता है तो उसे हर कार्य में सम्मानित करते हैं। छोटा सा कार्य आपकी नजर में बहुत बड़ा होता है। आप कहते हैं काम छोटा या बड़ा नहीं होता, इंसान भावना से ही छोटा–बड़ा होता है। जो कार्य प्रशंसनीय होता है, उसके कार्य की आप बार–बार प्रशंसा करते हैं। प्रशंसा सुनकर व्यक्ति और आगे बढ़ता है। कभी–कभी छोटे–छोटे कार्य ही बड़े–बड़े हो जाते हैं। वैसे भी आप कहते हैं– जो छोटे काम को तुच्छ समझता है वह कभी भी बड़ा काम नहीं कर सकता है। छोटा काम बहुत ही महत्वपूर्ण है। छोटे काम को हम जितना मन लगाकर करेंगे, उतनी ही हमें सफलता मिलेगी। छोटा कार्य ही एक दिन बड़े काम कराने में सहायक होता है। आपको हम अभी भी देखते हैं, आप छोटा सा काम भी स्वयं करने के लिये तत्पर रहते हैं, स्वयं करते हैं। आपके अंदर कार्य करने की जो स्फूर्ति है वो बहुत कम देखने मिलती है।

आपके द्वारा लिखे ग्रंथों में एक विशेष बात–

आपने अभी तक जितने भी ग्रंथ लिखे हैं, उनमें आप जिस किसी ग्रंथ से अगर दो लाईन, दो अक्षर भी लिखते हैं तो उसके नीचे पृष्ठ संख्या, ग्रंथ का नाम, लेखक का नाम अवश्य देते हैं। किसी की बात को अपने नाम से आप कभी भी नहीं छापते। कोई भी समाज का ग्रंथ हो या अखबार का लेख ही क्यों ना हो; परन्तु कभी राईटर (रचनाकार) का नाम नहीं हटाते हैं। उसका नाम नहीं छुपाते बल्कि पुस्तक में खुशी–खुशी छपाते हैं। आज इस युग में बहुत सारे विद्वान, साधु–संत, माताजी आदि दूसरों की रचना को अपना नाम देकर छपवा लेते हैं। बनाने वाला का नाम तक हटा देते हैं। रचनाकार का नाम काट देते हैं।

इससे और तीव्र रूप में ज्ञानावरणी कर्म का बंध होता है, ज्ञान घटता है बढ़ता नहीं। जो चोरी करते हैं वो लाइनों को ऊपर-नीचे कर देते हैं। यह छोटा-सा पाप भी तीव्र रूप में बँधता है। यह बात आपकी पुस्तक में कहीं नहीं मिलेगी। आप तो जितने बच्चे, बालिकायें, साधु-साध्वी लिखने में सहयोगी बनते हैं, उनका नाम भी पुस्तक में छपवाते हैं। चाहे किसी ने आधा कागज ही आपको लिखकर दिया हो तो वह इंसान आपके लिये बहुत महान है। उसने जिनवाणी की सेवा की, आपकी आज्ञा का पालन किया है। यह बात ध्यान में रखते हुये उसका नाम आपकी पुस्तक में अवश्य छपवाते हैं। जब मैं आपके पास में घर से आई थी। मुझे लिखने में उस समय प्रमाद आता था, आप बार-बार बोलते थे। पुस्तक में तुम्हारा नाम देना है। इसलिये आधा कागज लिखकर दो, तुम संघ की ब्रह्मचारिणी हो और तुम्हारा नाम नहीं आयेगा तो फिर लोग पूछेंगे। तुम कर्त्तव्य करो, फिर मैं तुम्हारा नाम पुस्तक में दे दूँगा। कर्त्तव्य किये बिना आप किसी को अधिकार नहीं देते हैं। आपने एक नारा बनाया है **''अधिकार से महान् कर्त्तव्य पालन''।**

यह आपकी महानता है जो आप हर समय इस बात का ध्यान रखते हैं कि मेरे साहित्य सृजन में कौन-कौन सहयोगी बन रहा है। उसका नाम अवश्य देना है और आप देते हैं, छपवाते हैं।

विपरीत परिस्थिति में भी समता रखते हैं-

आपकी समता देखने के लायक है। कभी-कभी बड़ी भयानक परिस्थिति आपके सामने उपस्थित हो जाती है, परन्तु बाहर से आप ऐसे बन जाते हैं जैसे आपको कुछ भी पता नहीं है। कभी नये स्थान में आप जाते हैं। समाज रहने की पर्याप्त व्यवस्था नहीं कर रही हो, आहार की अव्यवस्था हो, सामाजिक परेशानी हो, आप उस समय मौन धारण कर लेते हैं। समता से सबको वश में कर लेते हैं। संघ में रहने वाले साधु आपको कुछ भी बोलें परन्तु जब तक आपको सत्य तथ्य प्रमाण (सबूत) नहीं मिलता है, तब तक आप कुछ भी प्रतिक्रिया नहीं करते हैं।

कोई संघ में आ रहा हो, कोई आपको छोड़कर जा रहा हो, आपको किसी से कुछ फरक नहीं पड़ता है। आप कहते हैं कि समता की साधना करो, यही हमारी सामायिक है। ना किसी से राग करो और ना किसी से द्वेष। समाज में रहते हैं वहाँ पर समता को छोड़कर जब हम विषमता में आते हैं, मन में ख्याति, पूजा-पाठ, प्रसिद्धि, मंच-माईक, फोटो, नाम की जब भावना बढ़ जाती है तभी विषमता उत्पन्न होती है।

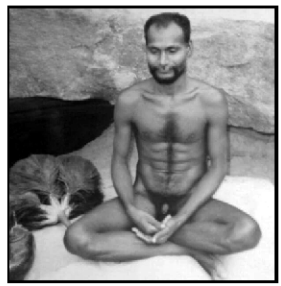
आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव बैठे हुए

आप इन सब विषयों से दूर रहते हैं। आप विहार करते हैं रास्ते में कहीं पर विश्राम करते या गाँव के जिन मंदिर धर्मशाला में भी ठहरते हैं उस समय कोई आपको पाटा चटाई दे तो ठीक, नहीं तो जमीन पर आराम से बैठ जाते हैं। सोना-बैठना, सहज-सरल कर लेते हैं। धर्म तो आत्मा का स्वभाव है और स्वभाव समता में रहने पर ही मिलेगा। आप दिखावा, ढ़ोंग, पाखण्ड, आडम्बर से दूर रहते हैं।

आपका दूसरा चातुर्मास लावा में हुआ- आप जिस गाँव में भी जाते हैं तो लम्बे समय तक वहाँ प्रवास करके बच्चों को धर्म करना सिखा देते हैं। छोटे से छोटे गाँव में भी आप एक दो महीने रह जाते हैं। 8-10 घर भी जहाँ मिल जाये, एक दो चौके लग रहे हो वहाँ भी एक-दो महीने तक प्रवास कर लेते हैं और जब किसी स्थान पर चातुर्मास होता है वहाँ तो आप कभी-कभी 8-9 महीने भी रहकर श्रावकों को भक्ति करने का शुभ अवसर प्रदान कर देते हैं। आपने निवाई से विहार किया, चुरू, चकवाड़ा, फागी होते हुए, पचेवर में शिविर लगाया और लावा में आये, यहाँ 40 घर की जैन समाज है। यहाँ पर गर्मी की छुट्टियों में बच्चों का शिविर लगाया छोटे से गाँव में यहाँ 500 से अधिक शिक्षार्थी शामिल हुए व यहीं पर आपका चातुर्मास सम्पन्न हुआ। इस चातुर्मास में आपने प्रवचन सार महाग्रन्थ का वैज्ञानिक अध्ययन कराया।

बिजौलिया तीर्थ क्षेत्र

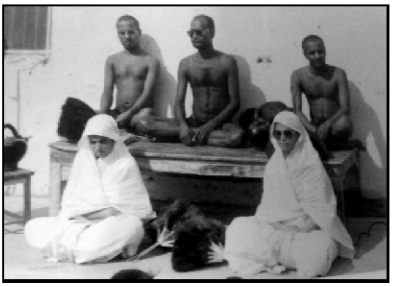

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव ससंघ

पारसनाथ भगवान की केवलज्ञान भूमि बिजौलिया–

लावा से विहार करके आप मदनगंज–किशनगढ़ आदि ग्राम में विहार करते हुए श्री चंवलेश्वर अतिशय क्षेत्र का दर्शन करते हुए बिजौलिया क्षेत्र पर आये। यह भूमि बड़ी ही पावन पवित्र है। शहर से दो किलोमीटर दूरी पर यह क्षेत्र पारसनाथ जी नाम से जाना जाता है। इस भूमि पर पारसनाथ भगवान पर कमठ ने 7 दिन तक लगातार घोर उपसर्ग किया था। भगवान को यहीं पर केवलज्ञान हुआ। इस पवित्र भू पर आपका आगमन हुआ। आपने महावीर जयन्ति के दो दिन बाद में इस नगर में प्रवेश किया था। आपके सानिध्य में यहाँ अनेक मन भावन कार्यक्रम हुये। ये कार्यक्रम ही मुझे भी आप तक लाने में कारण बने। आपके सानिध्य में यहाँ पर श्रुत पंचमी पर्व को भव्य रूप में मनाया गया और भी कार्यक्रम वहाँ पर होते रहे।

आप जहाँ भी जाते वहाँ बच्चों की क्लास लेते हैं–

आपका जहाँ–जहाँ भी विहार हुआ, अधिक समय जिस किसी गाँव में आप रहे या शहर में भी रहे तो आप प्रवचन से भी अधिक बच्चों की क्लास लगाते थे, प्रवचन हो चाहे ना हो परन्तु बच्चों को संस्कार देने के लिये क्लास या शिविर अवश्य लगाते हैं। उस क्लास में आप बच्चों को कैसे सोना, उठना, मंदिर जाना, साधुओं को आहार कराना सिखाते हैं। आप प्रायः बच्चों से ही आहार लेते हैं। छोटे–छोटे बच्चे आपको आराम से आहार करवा देते हैं। यह सब संस्कार आप बच्चों को क्लास में देते हैं।

संस्कार बहुत काम आते हैं। बचपन में जो संस्कार गुरु से मिलते हैं वो संस्कार जिन्दगी भर काम आते हैं। आप बच्चों को पूजा करना सिखाते हैं। इंग्लिश में पड़गाहन विधि सिखाते हैं। आपके द्वारा बच्चे जिन संस्कारों को प्राप्त करते हैं वे बच्चे कभी भी नहीं भूलते हैं। हम इसी वर्ष (2015) बिजौलिया, निवाई, रोहतक, बड़ौत आदि जहाँ–जहाँ भी गये वहाँ के आबाल वृद्ध सभी आपको याद करते थे। हमें बहुत खुशी हुई जब गुरुदेव को बच्चे याद करते थे। जो उस समय बच्चे थे, उनके आज बच्चे बड़े–बड़े हो गये हैं लेकिन पीढ़ी–दर–पीढ़ी वे अपने बच्चों को संस्कार जरूर देते रहेंगे। आप बच्चों को बड़ी ही सरल भाषा में पढ़ाते हैं। आपकी पढ़ाने की शैली देखकर ही आपके पास समय से पहले बालक–बालिकायें पढ़ने आ जाते हैं।

आपकी पढ़ाई की शैली देखकर ही मैं संघ में आई– जब मैंने सिंगोली में सुना कि उपाध्यायश्री कनकनंदी जी संघ के साथ बिजौलिया आये हैं। तब मेरी भावना गुरु दर्शन की हुई। मैं अपनी तीसरे नम्बर की बहन को लेकर आपके दर्शन करने आई। सुबह आहार देखा, छोटा सा संघ मुझे बहुत अच्छा लगा, दिन में प्रवचन सुना, आप शाम को वहाँ पर बच्चों को पढ़ाते थे। बहुत सारे लड़के–लड़कियाँ पढ़ने आये थे। मैं भी थोड़ी देर उस क्लास में बैठ गई। मुझे क्लास में बैठने के बाद बहुत आनंद का अनुभव हुआ। उसी दिन भगवान् पारसनाथ से मैंने बहुत प्रार्थना की। मुझे इसी संघ में आना है, यहाँ पर कोई भी ब्रह्मचारी ब्रह्मचारिणी नहीं है। यहाँ पर कोई साधु संघ में आने के लिये भी नहीं बोलते हैं। मैंने यह नियम ले रखा था जिस संघ में मुझे कोई बुलायेगा हमारे संघ में आ जाओ, उस संघ में मैं नहीं जाऊँगी। जहाँ कोई नहीं बोलेगा वहीं जाऊँगी।

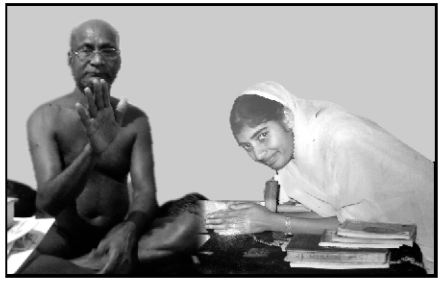

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव को नमन करते हुए ब्र. लीला

जहाँ कोई भी ब्रह्मचारिणी नहीं होगी उसी संघ में जाऊँगी और संघ भी छोटा होगा वहीं जाऊँगी। जैसा मैं चाहती थी वैसा ही 5 पिच्छियों का ये संघ मुझे बिजौलियाँ में देखने को मिला।

उस दिन आपने बच्चों को आदर्श जीवन का पाठ पढ़ाया था वैसे मैंने ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया था, मैं सफेद वस्त्र ही पहनती थी। परन्तु घर में ही रहती थी। उस दिन की क्लास पढ़कर घर आ गई थी। घर आकर बस आपकी पढ़ाने की छवि मेरी आँखों के सामने दिख रही थी। मुझे भी पढ़ना था, पढ़ने की इच्छा जागृत हो गई। मैं फिर से बिजौलिया में आई 22–23 दिन तक मैंने आपकी हर क्लास में भाग लिया। स्वाध्याय में बैठती थी। प्रवचन सुनना, आहार देने जाना, ये सब बहुत अच्छा लगा। फिर मैं घर पर आ गई। घर में दिन–रात आपकी बातें करती रहती थी। मैंने आपके संघ में आने का लक्ष्य बनाया। घर में मेरा मन ही नहीं लगता था। दिन–रात बस संघ में जाने को ही सोचती रहती थी। आपका बिजौलिया से कोटा की तरफ विहार हो गया। फिर मैंने अपने पिताजी के सामने अपने मन की भावना रखी,उनको आपके पास भेजा, आपके पास पिताजी ने मेरी इच्छा जाहिर की– मेरी लड़की आपके पास आना चाहती है, वो आपसे पढ़ना चाहती है। आपका हर चतुर्दशी को मौन रहता है। उस दिन भी 14 (चतुर्दशी) थी आपने लिखकर उनसे बात की और आपने उनसे कहा– आप अपनी लड़की को संघ में ले आइये। पिताजी भी बड़े खुश हुये जैसा वो संघ चाहती है आज उसके भाग्य से वैसा संघ मिल गया है। उन्होंने घर आकर मुझे खुश खबर सुनाई। गुरुदेव ने आज्ञा दे दी है।

मेरा सबसे बड़ा सपना था प्रथम शिष्या बनने का–

आपके चरणों में 18–12–1994 को विज्ञान नगर, कोटा (राजस्थान) में आई। आपके पास आकर मुझे जो खुशी उस समय मिली, मैं उसका वर्णन अपनी कलम से नहीं कर सकती।

कोटा में भी आपने बच्चों का शिविर लगाया था। उस शिविर में मैंने भी भाग लिया था। आपने मौखिक परीक्षा ली, उस परीक्षा में मेरा द्वितीय स्थान रहा। उस शिविर में बिजौलिया की बहुत सी लड़कियाँ और लड़के भी बैठे थे। 7 दिन का शिविर लगा था। आपका उस वर्ष का चातुर्मास विज्ञान नगर, कोटा में हुआ। इस चातुर्मास में आपको पीलिया (पाण्डु रोग) हो गया था। मुझे आपकी सेवा करने का अवसर मिला। मुझे चौका लगाना नहीं आता था परन्तु आपके आशीर्वाद से और आप जल्दी स्वस्थ हो जायें इस भावना से मुझे चौका लगाना आ गया। उस समय आप एक माह से अधिक अस्वस्थ रहे। धीरे-धीरे आपका स्वास्थ्य ठीक हुआ। चातुर्मास के बाद आपने उदयपुर के लिये विहार किया। संघ जब काकरिया तलाई में पहुँचा तो मुझे मेरे पिताजी पंचकल्याणक में ले जाने के लिये आ गये। आप से आशीर्वाद लेकर आपकी आज्ञा से मैं पंचकल्याणक के लिये आ गई।

आचार्य कुंथुसागर जी के सानिध्य में अणिन्दा पंचकल्याणक-

आपके दीक्षा गुरु गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव की जन्म भूमि के पास अणिन्दा क्षेत्र में भव्य पंचकल्याणक का आयोजन हुआ। उस समय आचार्यश्री ने उनके सभी शिष्यों को बुलवाया था। उनमें से केवल आचार्य पद्मनंदी जी वहाँ पर संघ सहित पहुँचे थे। आप भी अणिन्दा से ज्यादा दूर नहीं थे परन्तु मेले आदि में भीड़-भाड़ में जाना आपको अच्छा नहीं लगता है इसलिये गुरुदेव के बार-बार बुलाने पर भी आप नहीं गये। आप अणिन्दा से 35 किलोमीटर दूर एक गाँव में रुके हुये थे।

आचार्यश्री ने मेरे से पूछा बेटा ! तेरा बाप नहीं आया-

मैं जब अणिन्दा पहुँची तो आचार्यश्री के दर्शन करके मेरा रोम-रोम पुलकित हो गया। आचार्य भगवन् ने आशीर्वाद दिया।

मुझे पूछा– बेटा ! तू आ गई और तेरा बाप नहीं आया।'' मैंने कहा– मेरा बाप तो बाद में है, आपका बेटा पहले है। मैंने कहा– गुरुदेव आपको पूरे संघ ने त्रय भक्तिपूर्वक नमोस्तु कहा है।

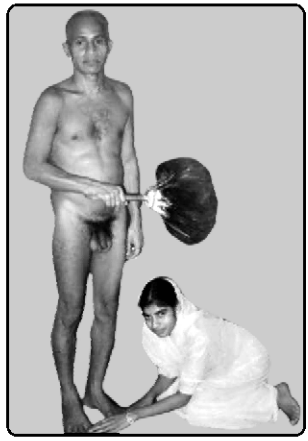
आ. कुन्थुसागर जी गुरुदेव को नमन करते हुए ब्र. लीला

आचार्यश्री बोले– मैंने सबको बुलाया था, फिर साधु लोग क्यों नहीं आये। आपके लिये गुरुदेव बोले– उसे तो केवल किताबों के अलावा कुछ नहीं दिखता। ''मैं भला और मेरी किताब भली'' मैंने कहा– ऐसी बात नहीं है, आपका नाम तो इतना लेते रहते हैं। आचार्यश्री बोले– उसे मैं कहाँ दिखता हूँ। मैं दिखता तो वो यहाँ आ जाता। कौनसा ज्यादा दूर है। खुद भी नहीं आया और 4 साधुओं को भी नहीं भेजा। मैंने कहा– गुरुदेव आप तो जानते ही हैं वो भीड़भाड़ में जाना पसन्द नहीं करते हैं। आचार्यश्री बोले– कोई बात नहीं, आता तो मुझे खुशी होती।

पंचकल्याणक में दो शिष्यों पर आचार्य पद के संस्कार–

पंचकल्याणक में ही आचार्य श्री कुंथुसागर जी ने अपने दो शिष्यों को आचार्य पद प्रदान किया। जो अभी आचार्य श्री पद्मनंदी जी एवं आचार्य श्री गुणधरनंदी जी के नाम से जाने जाते हैं। जब एक ही सिंहासन पर दोनों मुनियों को बिठाया और आचार्यश्री ने अपने हाथों से संस्कार किये। उस समय मुझे आपकी बहुत याद आई कि इसीलिये आचार्यश्री आपको अणिन्दा बुलवा रहे हैं। आप वहाँ आते तो सबसे पहले आपके मस्तक पर संस्कार होते। बहुत सारे साधु–साध्वी वहाँ पर आये थे। आचार्य अभिनंदनसागर जी भी ससंघ अणिन्दा में आये थे। वह नजारा देखने लायक था। दोनों के मस्तक पर मंत्रों के साथ आचार्य पद के संस्कार किये। संस्कार होने के बाद आचार्यश्री ने आचार्य परम्परा का पत्र पढ़ा।

यह आचार्य भगवन् का वात्सल्य है कि उन्होंने जितने मुनियों को दीक्षा दी और उनकी योग्यता देखते हुये उन्होंने सबको धर्म प्रभावना के लिये सबको अलग-अलग भेज दिया।

जब सब शिष्य अच्छी प्रभावना कर रहे थे तब गुरुदेव ने विचार किया। ये सब आचार्य बनने के योग्य है। यही सोचकर आचार्यश्री ने सब योग्य शिष्यों को आचार्य पद दे दिया।

आचार्यश्री ने परम्परा का पत्र पढ़ा- मुझसे दीक्षित जो भी शिष्य हैं। जो अलग-अलग जगह धर्म की अच्छी प्रभावना कर रहे हैं मैं उनके पास आचार्य पद का पत्र भेज चुका हूँ। आज मैंने इन दो शिष्यों पर आचार्य पद के संस्कार किये हैं परन्तु दीक्षा का जो क्रम है वही क्रम आचार्य बनने के बाद भी रहेगा।

जिनकी दीक्षा सबसे पहले हुई है ऐसे मेरे प्रथम शिष्य हैं उपाध्याय कनकनंदी जी। प्रथम आचार्य भी वही रहेंगे उसके बाद पद्मनंदी, देवनंदी आदि दीक्षा क्रम से ही चलते रहेंगे, चाहे वो आगे-पीछे कभी भी आचार्य बने। परन्तु दीक्षा के क्रम से आचार्य क्रम चलता रहेगा। आज मैंने पद्मनंदी और गुणधरनंदी को सबसे पहले आचार्य बनाया है। परन्तु बड़े कनकनंदी ही रहेंगे, वो चाहे कभी आचार्य बने। जो छोटा है वह छोटा ही रहेगा, जो बड़ा है वह बड़ा ही रहेगा। नमोऽस्तु प्रति नमोऽस्तु दीक्षा के क्रम से ही एक-दूसरे को करना है।

पंचकल्याणक में आचार्यश्री समय-समय पर आपको याद करते रहे। मुझे बड़ा दुःख होता था। आचार्यश्री के अंदर कितना वात्सल्य है। जो इतना मेरे गुरुदेव को याद कर रहे हैं। मन में मेरे एक ही विचार बार-बार आ रहा था। गुरुदेव ने अच्छा नहीं किया, इतने पास होकर भी यहाँ पर नहीं आये, अपने गुरु के वात्सल्य से वंचित रह गये।

आप कभी–कभी बोलते हैं– मैं कनकनंदी नहीं 'कड़कनंदी' हूँ। वास्तव में कभी–कभी आप बहुत कठोर बन जाते हैं। आप कठोर क्यों बनते हैं इसका कारण समझ में नहीं आता, वो तो आप ही बता सकते हैं। बाद में आचार्य कनकनन्दी जी से ज्ञात हुआ कि मैं (आ. कनकनन्दी) आचार्य नहीं बनना चाहता था, वैसे आचार्य श्री (कुन्थुसागर जी) मुझे आचार्य बनने हेतु 1992 से आदेश दे रहे थे एवं पृथक् विहार के बाद अनेक बार पत्र लेकर भक्तों को भेजते रहे। पर मैंने स्वीकार नहीं किया और इसी कारण पंचकल्याणक समारोह में नहीं गया।

एक वर्ष का मौन–

आपने कोटा से विहार किया तब एक साल का मौन रहने का नियम ले लिया था। जब आप मौन रहते थे तो सबको डर लगता था। आपके पास कुछ भी बोलने की किसी की हिम्मत नहीं होती थी। परन्तु जब आप बोलते हैं तो फिर आपकी छवि देखकर सब अपने मन की बात बोलने में भी डरते नहीं थे। गुरु कभी भी किसी को डराते नहीं है। परन्तु बड़े गुरु जब भी मौन लेकर साधना में बैठे हो तब सब व्यक्ति दूर से ही डरकर भाग जाते हैं। गुरु की मुद्रा ही गंभीर होती है। जब तक बोलते नहीं हैं। तब तक सबको भय लगता है और लगना ही चाहिये।

आप जब बोलते हैं तो एक बच्चे की तरह सहज सरल बोलते हैं। एक ही बात को सभी साधुओं को बता देते हैं। यह आपकी सरलता है। आपके मन में छल, कपट, मायाचारी का रंचमात्र भी भाव नहीं है। सामने वाला आपको कुछ भी बोले उसकी कोई परवाह नहीं है। आपकी एक ही बात को तीन चार बार सुनकर ऐसा लगता है। गुरुदेव कितने भोले हैं। हर बात को सभी को बता देते हैं। किसी साधु को बता देंगे, कोई बच्चा बैठा होगा तो उसे भी बता देंगे। यही आपकी सरलता है।

किसी की बुराई नहीं अच्छाई देखते हैं–

आप जहाँ भी जाते हैं और वहाँ पर संघ के किसी साधु को अगर वो गाँव अच्छा नहीं लगता है और वह आगे जाने के लिये बोलता है तो उसे भी समझा देते हैं। आप कभी भी किसी भी गाँव या नगर में जाते हैं तो वहाँ की अच्छाई का वर्णन जमकर करते हैं, कभी बुराई नहीं करते। वहाँ जो कुछ भी होगा उसकी बार–बार प्रशंसा करते हैं। आपकी बुराई की तरफ दृष्टि नहीं जाती है। लोगों की, स्थान की, व्यवस्था की, बच्चों की, महिलाओं की सबकी प्रशंसा करते रहते हैं। यदि किसी गाँव में आप रुके हुये हैं और एक–दो छोटे बच्चे भी आपको आकर निवेदन कर दे कि गुरुदेव आपको यही रहना, आप यही रहना, आप अभी विहार नहीं करें तो उन नन्हें मुन्ने बच्चों के आग्रह पर भी आप गाँव वालों को समय देते हैं। आप के सामने कभी कोई किसी गाँव या शहर की बुराई नहीं कर सकता। आप चाहते हैं, सब लोग गुणग्राही बने, अपनी दृष्टि से अच्छाई देखे, अच्छाई देखेंगे तो और अच्छाई बढ़ा सकते हैं और बुराई करके बुराई फैला सकते हैं। इसलिये कहीं भी रहो अच्छाई देखने की कोशिश करो, बुराई से बचो, ना बुराई करो और ना सुनो ?

उदयपुर में आचार्य अभिनंदनसागर जी से मिलन– कोटा चातुर्मास होने के बाद आपने वहाँ से विहार किया। गाँव और शहर में धर्म प्रभावना करते हुये उदयपुर में अपने संघ के साथ में प्रवेश किया। यहाँ पर आपके गुरु भाई आचार्य श्री पद्मनंदी जी से मिलन हुआ और थोड़े दिन के बाद आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी भी उदयपुर में आ गये। उनसे आपका मिलन हुआ। उस समय हुमड़ों के नोहरे में संघ रुका हुआ था। आप साधु भवन में रुके थे। 60–65 साधु–साध्वी यहाँ पर थे। आप प्रातःकाल की क्लास नोहरे में लगाते थे। सभी साधु उस क्लास में उपस्थित रहते थे। दोपहर में आप 'गोम्मटसार' कर्मकांड पढ़ाते थे। उसमें भी अनेक मुनिराज, आर्यिका माताजी आदि प्रायः 500 श्रावक, श्राविका, विद्वान्, लेखक, प्रोफेसर्स आदि आपकी क्लास में आते थे।

आचार्य पद्मनंदी जी की विनय भक्ति आपके प्रति–

आचार्य पद्मनंदी जी ने आपके पास रहकर बहुत अध्ययन किया है। वो आपकी बहुत विनय भक्ति करते हैं। उनके संघस्थ ब्रह्मचारी सुरेश भैय्या (वर्तमान मुनि रविनंदी) की मुनि दीक्षा होना निश्चित हुई। इतने संघ के सानिध्य में उनकी जैनेश्वरी दीक्षा का कार्यक्रम निश्चित हो गया। तीन संघ उस समय वहाँ पर मौजूद थे। आचार्य श्री कुंथुसागर जी ने आपको निवाई (1992) में ही आचार्य पद का पत्र भेज दिया था परन्तु आप टालते रहे। जब अणिन्दा में आचार्यश्री ने दो मुनियों को आचार्य बना दिया तो सबने आपसे प्रार्थना की। हे उपाध्यायश्री! हमारी प्रार्थना स्वीकार कीजिये। दीक्षा समारोह के समय हम आपको आचार्य पद देना चाहते हैं। आचार्य श्री कुंथुसागर जी ने पुनः पत्र भेजा, आप मेरी आज्ञा का पालन करें। आप आचार्य पद स्वीकार करें। आचार्य श्री कुंथुसागरजी गुरुदेव ने आचार्य द्वय के पास भी समाचार भेजा कि आप लोग उपाध्याय कनकनंदी जी को आचार्य पद मेरी तरफ से दे दीजिये। आचार्यश्री अभिनंदनसागर जी मेरी तरफ से आचार्य पद के संस्कार करें।

आचार्य पद की तारीख पक्की हो गई। मुनि दीक्षा में ही आचार्य पद के संस्कार की तारीख निश्चित हुई। उदयपुर में भक्ति भावना बहुत अच्छी है। हुमड़ों के नोहरे में दीक्षा के निमित्त प्रातःकाल पंचामृत अभिषेक होता था और दोपहर में विधान होता था।

आचार्य पद हुआ 25–4–1996 उदयपुर में–

वह मंगल घड़ी आई जिसका सबको इंतजार था। मेरी भावना भी जागृत हो गई। मैंने सोचा– जिस दिन गुरुदेव का आचार्य पद होगा, उस दिन मैं भी दीक्षा का श्रीफल चढ़ाऊँगी। प्रातःकाल के शुभ मुहूर्त में दिनांक 25–4–1996 को अपार जन समुदाय के बीच में आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी ने अपने कर–कमलों से आपके मस्तक पर मंत्रों के साथ उत्तम भावों से आचार्य पद के संस्कार किये।

उन्होंने साथ में आपको रत्न की पदवी प्रदान की। 'आचार्यरत्न श्री कनकनंदी जी गुरुदेव की जय हो' आप उपाध्याय से आचार्य बन गये। उस समारोह में

आचार्य कुन्थुसागर जी गुरुदेव कनकनन्दी जी को आचार्य पद प्रदान करते हुए आ. अभिनंदनसागर जी

अनेक श्वेताम्बर साधु-साध्वी व 50-60 दिगम्बर मुनि, आर्यिका, चतुर्विध संघ मौजूद था। आपका आचार्य पद होने के बाद मैंने दीक्षा का नारियल चढ़ाया। नियम लिया कि एक वर्ष के अंदर-अंदर मुझे आर्यिका दीक्षा लेना है। आपका आशीर्वाद मिला। मेरी दीक्षा 10 महीने के अंदर ही हो गई।

हिरणमगरी में आचार्य वर्द्धमानसागर जी से मिलन-

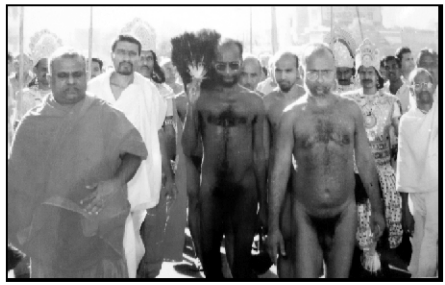

आ. वर्द्धमानसागर जी एवं आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव ससंघ विहार करते हुए

आचार्य बनने के बाद हिरणमगरी सेक्टर-11, उदयपुर में पंचकल्याणक होने वाला था। वहाँ का समाज आपको निवेदन करने आया। आप वहाँ पर गये, उस पंचकल्याणक में आचार्य श्री वर्द्धमानसागर जी बहुत दूर कर्नाटक प्रांत से विहार करते हुये आये। उस पंचकल्याणक में मुख्य सानिध्य आचार्य वर्द्धमानसागर जी का था। आपने उनकी भव्य अगवानी की। संघ सहित पूरी समाचार विधि की। आचार्य श्री वर्धमानसागर जी और आपके सान्निध्य में आदिनाथ भगवान् का भव्य पंचकल्याणक सेक्टर-11 में सम्पन्न हुआ।

1996 का चातुर्मास केशरिया जी में हुआ–

उदयपुर से केशरियाजी के लिये विहार हुआ। इस वर्ष का चातुर्मास केशरियाजी (ऋषभदेव) में हुआ। वहाँ की समाज को मेरी दीक्षा का पता चला तो पूरी समाज ने आपसे बहुत आग्रह किया। लेकिन आपने मना कर दिया। आपने संघ के साधुओं और समाज को बताया कि ''ये मेरी पहली शिष्या'' है इसलिये इसकी दीक्षा मैं अपने दीक्षा गुरु से ही करवाऊँगा। मूलाचार आदिग्रंथों में लिखा है कि किसी भी आचार्य को अगर योग्य वस्तु उत्तम शिष्य, चटाई, पाटा, उत्तम ग्रन्थ आदि मिलती है तो वह पहले अपने गुरु को भेंट करना चाहिये। इसलिये जहाँ मेरे गुरुदेव हैं वहाँ हम जायेंगे। इसकी दीक्षा उनसे करवायेंगे। मैं मूलाचार का पालन करूँगा। जब आपने समाज को समझा दिया तो समाज ने इस बात की सराहना की, सबने कहा– गुरुदेव ! हम तो अज्ञानी हैं। आप जैसा कहेंगे, हम वैसा करेंगे। केशरियाजी के चातुर्मास में 'त्रिलोक मंडल विधान' हुआ था। उसके समापन पर आपके द्वारा लिखा हुआ सर्वोत्कृष्ट ग्रंथ 'प्रवचन सार' जिसके मूल रचनाकार आचार्य श्री कुंदकुंद स्वामी हैं। उस ग्रंथ पर आपने वैज्ञानिक विश्लेषण किया है। यह ग्रंथ आपको बहुत प्रिय है। आपने उसका नया नाम दिया है 'सत्यसाम्यसुखामृतम्''। उसका भव्य जुलूस निकाला गया। आप जिनवाणी का भगवान् की तरह बहुमान करते हैं। केशरियाजी में ही ग्रंथ का लोकार्पण हुआ था। 'प्रवचनसार' को हाथी पर लेकर मुझे बिठाया गया। मेरा सौभाग्य है वह ग्रंथ सबसे पहले मेरे हाथ में आया। इस ग्रंथ का अतिशय देखिये उस जुलूस में तीन हाथी थे। एक हाथी पर मैं बैठी थी, दूसरे पर सौधर्म इन्द्र, तीसरे पर धनपति कुबेर का परिवार था। जब ग्रंथ हाथी पर बैठे हुये सौधर्म इन्द्र को दिया जा रहा था तब जमीन पर गिरने के पहले ही किसी आदमी ने झेल लिया। तब आपने कहा पहले ग्रंथ 'ब्रह्मचारिणी लीला' को दो वह ग्रंथ आपके कहने पर मुझे दिया गया। मैंने हाथी पर बैठे–बैठे ही झुककर ग्रंथ ले लिया।

मैं गुरुदेव से एवं माँ जिनवाणी से यही आशीर्वाद चाहती हूँ जो ज्ञान उस प्रवचनसार में भरा है। वैसा ज्ञान मुझे भी प्राप्त हो। केशरियाजी में बच्चों का शिविर भी लगा था। प्रातःकाल में आप बच्चों को योगासन करना सिखाते थे। आप स्वयं करके दिखाते थे। आप बोलकर नहीं प्रेक्टिकल करना सिखाते हैं और स्वयं भी हर रोज करते हैं। यहाँ के शिविर में मैंने भी भाग लिया था। परीक्षा में मुझे प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। मुझे 100 में से 95 नम्बर मिले थे। केशरियाजी में दशलक्षण के बाद बहुत बड़े रथ निकलते हैं। तीन दिन का यह कार्यक्रम भी अतिभव्य होता है। जैसे रथ इस मेवाड़ बागड़ प्रांत में है। वैसे अन्य किसी प्रदेश में देखने को नहीं मिलते हैं। बड़े-बड़े चाँदी के छत्र हैं। एक रथ पर बड़े-बड़े पाँच छत्र लगे हुये हैं। इस वर्ष की रथयात्रा आपके ससंघ सान्निध्य में सम्पन्न हुई।

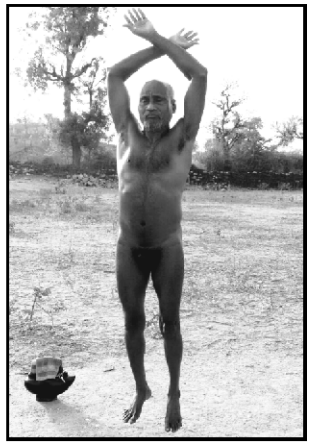

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव योगासन करते हुए

केशरियाजी से अहमदाबाद की ओर विहार-

चातुर्मास पूरा होने के बाद केशरियाजी से आपने संघ सहित अहमदाबाद की ओर विहार किया। आपके दीक्षा गुरु के पास आप 300 कि.मी. गये। चिन्तन किया जाये तो बहुत बड़ी बात है। ऐसे तो आप जब अणिन्दा से मात्र 35 कि.मी. दूर थे तब वहाँ के पंचकल्याणक में नहीं गये परन्तु आगम की आज्ञापालन करने तीन सौ कि.मी. भी चले गये। गुरुदेव ने जब आपको आचार्य पद लेने बुलाया था तब आप नहीं गये। परन्तु अपनी शिष्या की दीक्षा करवाने इतने दूर भी चले गये। यह आपकी 'गुरु भक्ति' का उत्कृष्ट उदाहरण है। शायद ही आपके जैसा कोई शिष्य होगा जो ऐसा उल्लेखनीय कार्य करेगा।

आपने एक आदर्श प्रस्तुत किया है। शिष्य का गुरु के प्रति क्या कर्त्तव्य होता है वह प्रेक्टिकल में करके बताया है। आप स्वयं आचार्य हैं, इतने ज्ञानी हैं। अनेक साधु-संतों को आपने पढ़ाया है, आप चाहते तो आप ही मुझे दीक्षा दे देते। परन्तु आपने आचार्य होकर भी और आपके पास अधिकार होने के बाद भी दीक्षा नहीं दी। जबकि आचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव के पास जब भी दीक्षा हुई चाहे मुनि की, चाहे आर्यिका माताजी की, आपने पूरा काम किया। गुरुदेव आपसे संस्कार भी करवाते थे, लेकिन गुरुदेव से अलग होने के बाद पहली दीक्षा देने का जब अवसर आया तो आपने नहीं दी। आप अपने दीक्षा गुरु के पास संघ को लेकर गये। आपने जो काम किया है वह बहुत अनुकरणीय है।

पारसनाथ भगवान के पंचकल्याणक में हुई मेरी दीक्षा-

आप विहार करते हुए अहमदाबाद पहुँचे वहाँ अपने दीक्षा गुरु से अलग होने के बाद पहली बार पुनः मिलन हुआ। वह बड़ा ही सुनहरा दृश्य था। जैसे गाय को आता हुआ देखकर उसका बछड़ा प्रसन्न होता है वह माँ-माँ चिल्लाता है, रम्भाता है। गाय पास में आती है उसे चाटने लगती है। वैसे ही गुरु शिष्य का मिलन 5 वर्षों के बाद हुआ। आपने आचार्यश्री का वात्सल्य पाया। एक पिता को पुत्र मिल गया और पुत्र को पिता। जब आपको आपके गुरुदेव ने गले से लगाया तो देखने वालों की आँखों में अश्रुधार बह निकली। गुरु शिष्य का बड़ा अनोखा रिश्ता होता है। उस मिलन के दृश्य को जिसने देखा वो धन्य हो गया। आपका ये भव्य मिलन खोखरा अहमदाबाद में हुआ। खोखरा में भगवान् पारसनाथ का पंचकल्याणक होने वाला था। उसी में आप मेरी दीक्षा कराने गये थे।

पंचकल्याणक दिनांक 15-2-1997 से प्रारम्भ हुआ था। मेरा बड़ा सौभाग्य है कि ऐसे उपसर्गजयी भगवान् के पंचकल्याणक में मेरी दीक्षा हुई।

आपकी उदारता और महानता है कि आप जैसे महान् ज्ञानी निस्पृही गुरु मुझे मिले। आपने अपने गुरु से निवेदन कर दिया आप ही दीक्षा देंगे, सारी क्रिया विधि सम्पन्न करेंगे। आपकी भावना एवं भक्ति से प्रसन्न होकर आचार्यश्री ने आपकी भावना का मान रखा।

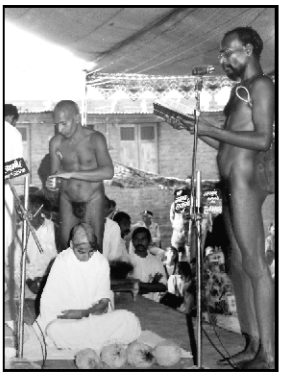

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव दीक्षा प्रदान करते हुए

मेरा परम सौभाग्य है जो आपके दीक्षा गुरु व आपके के कर-कमलों से 17-2-1997 को खोखरा के पंचकल्याणक में मेरी दीक्षा हुई उसी दिन दीक्षा के बाद आर्यिका राजश्री माताजी को आचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव ने गणिनी पद भी प्रदान किया। मेरा सौभाग्य ही नहीं, परम सौभाग्य है जो कौन से जन्म के पुण्य से आपकी शरण मिली, ''मुझे प्रथम शिष्या'' बनने का सौभाग्य मिला।

आपके चरण पाकर मैं धन्य हो गई-

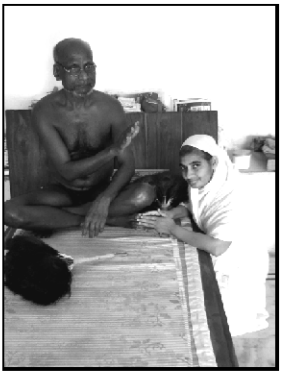

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव को नमन करते हुए आर्यिका आस्थाश्री

आपकी सरलता देखकर मुझे गौरव होता है आपके समतामय परिणाम देखकर आपके अन्दर अनेक ऐसे-ऐसे गुण हैं जो जन साधारण व्यक्ति को दिखाई नहीं पड़ते हैं। **आपके पूरे गुणों को, आपके स्वभाव को आपके पास दिन-रात रहने वाले भी कभी-कभी नहीं जान पाते हैं।** मैं तो धन्य हो गई आपको पाकर, मेरा जीवन सफल हो गया आपके चरणों में आकर। भगवान् पारसनाथ की केवलज्ञान स्थली से मेरी भावना आपके संघ में आने की हुई। इसलिये ऐसा योग संयोग मुझे प्राप्त हुआ।

जिस स्थान (गाँव) में मैंने जन्म लिया वहाँ के मूलनायक पारसनाथ हैं, आपके संघ के प्रथम दर्शन जहाँ किये संघ में रहने की इच्छा हुई। उस नगर बिजौलिया के मूलनायक भगवान् पारसनाथ हैं और पारसनाथ भगवान् के पंचकल्याणक में ही मेरी दीक्षा हुई। मुझे पारसनाथ भगवान् पर बहुत श्रद्धा है। देव-शास्त्र और गुरु के प्रति मेरी श्रद्धा देखते हुये दोनों गुरुदेव ने मेरा नाम श्रद्धाश्री रखा। बाद में बार-बार स्वास्थ्य खराब होने के कारण दोनों गुरुदेव की आज्ञा से आचार्य श्री गुप्तिनंदी जी गुरुदेव ने एवं गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी और आर्यिका क्षमाश्री माताजी तीनों ने विचार-विमर्श करके मेरा नाम श्रद्धाश्री से आस्थाश्री रख दिया। श्रद्धा का पर्यायवाची आस्था है। मेरी आस्था सदा आपमें बनी रहे।

आप बड़े निर्मोही हैं-

आपको किसी से कोई राग-द्वेष नहीं है। आपके पास कितने साधु, कितनी ही माताजी आदि पढ़ने आये और चले गये। साधु पढ़ने आते हैं और चले जाते हैं। उनसे आप कभी राग-द्वेष नहीं करते हैं। उल्टा जब आते हैं तो आप उनको लेने जाते हैं और संघ से जाते हैं तब उनको छोड़ने भी जाते हैं। चाहे मुनि हो या आर्यिका आप सबके प्रति निष्पक्ष भाव रखते हैं। आप अपनी समता में रहते हैं, जाने वाला खुशी-खुशी जाता है। जब आना चाहे आ सकता है, योग्य शिष्य को संघ में रखते हैं। अयोग्य को आप नहीं रखते हैं। आने वाले के अंगोपांग देखकर ही संघ में लेते हैं। अंगोपांग से आप सब कुछ बता देते हैं ये व्यक्ति कैसा है, कैसा निकलेगा। यह मोक्षमार्ग में चलने के लायक है या नहीं ? सामुद्रिक लक्षण, स्वप्न विज्ञान, भविष्यज्ञान, अंग स्फुरण आदि का आपको अच्छा ज्ञान है।

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव अध्ययन कराते हुए

आप जब भी कुछ बोलते या बताते हैं उसमें से 100 प्रतिशत भविष्यवाणी अभी तक सत्य सिद्ध हो चुकी है। ऐसा ही स्वप्न के विषय में भी कहते हैं। जब भी आपको अच्छा या बुरा स्वप्न आता है तो संघ के सभी साधुओं को अवश्य बताते हैं और ये भी साथ में बता देते हैं कि ये स्वप्न अच्छा फल देगा या बुरा।

आचार्यश्री स्वयं चलकर तीर्थों में नहीं जाते मिल जाये तो दर्शन कर लेते हैं–

आप किसी भी तीर्थ पर अलग से विहार करके नहीं जाते। हाँ, अगर विहार चल रहा है और रास्ते में कोई सहज, सरल तीर्थ मिल जाये तो दर्शन कर लेते हैं। आप कहते हैं तीर्थों में जाने से केवल संक्लेश होता है और मुझे वो करना नहीं है इसलिये मुझे किसी तीर्थ में जाने की इच्छा नहीं है। मेरी दीक्षा होने के बाद आप वापस राजस्थान के डूंगरपुर जिले में आ गये। 1997 का चातुर्मास आपने धर्मनगरी सागवाड़ा में किया। इस नगर में विशाल बड़े–बड़े 7 जिनालय हैं। बड़े धूमधाम से यहाँ पर चातुर्मास हुआ। चातुर्मास में 'कल्पद्रुम विधान' का आयोजन हुआ। इस विधान में रोज अलग–अलग परिवार की तरफ से शांतिधारा होती थी। पहले पंचामृत अभिषेक होता था, सैंकड़ों महिला पुरुष इस विधान में बैठे थे। शांतिधारा के समय लास्ट में रोज नारियल ह्रूँ फट् किया जाता था। रोज नारियल के अन्दर अंकुर निकल कर आते थे। आप रोज उन अंकुरों को देखकर बोलते थे। इस सागवाड़ा में बहुत बड़ा काम होने वाला है। भविष्य में इसका बहुत नाम होगा, यहाँ के लोगों की बहुत तरक्की होगी।

एक दिन तो नारियल के अन्दर पूरा नारियल निकला तब भी आपने बोला, यहाँ कुछ न कुछ बड़ा चमत्कार होगा। आपकी भविष्यवाणी सत्य हुई जो कुछ आप विधान में बताते थे वो सब सत्य हुआ। समाज की तरक्की हुई।

नारियल के अन्दर नारियल का चित्र

सबके विशाल बड़े–बड़े मकान बन गये। सब भक्तों के व्यापार में वृद्धि हो गई। हर व्यक्ति का विकास हुआ। समाज में समृद्धि हुई है। सागवाड़ा का नाम चारों ओर हो गया। सबने बड़ी भक्ति से वह विधान किया था। सबको बहुत ही लाभ हुआ है।

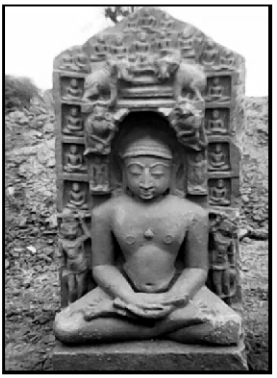

जिन प्रतिमा

सबसे बड़ा चमत्कार आपकी वाणी का हुआ–

आपकी वाणी का साक्षात् चमत्कार हर भक्त ने देखा और अनुभव किया है। वैसे आप कभी भी भविष्यवाणी नहीं करते हैं परन्तु नारियल को देखकर आप रोज बोलते थे। आपकी वाणी का चमत्कार एक वर्ष में सामने आ गया। अगले साल सागवाड़ा में बालाचार्य योगीन्द्रसागर जी का चातुर्मास हुआ। उस चातुर्मास में सेठों के मंदिर से एक दिन 72 सफेद पाषाण (मार्बल) की प्रतिमायें भू–गर्भ से निकली। सभी मंदिर बड़े ही सुन्दर बन गये। यह आपकी भविष्यवाणी का चमत्कार सबने देखा।

वैज्ञानिक संगोष्टी

सागवाड़ा में प्रथम वैज्ञानिक संगोष्टी–

सागवाड़ा में हुई आपके सानिध्य में तीन दिन की प्रथम संगोष्ठी हुई सबने पहली बार ये संगोष्ठी देखी और सुनी थी। इसलिए इस संगोष्ठी में आस–पास के और बाहर के भी काफी लोग आये थे। इसके बाद आपके सानिध्य में 13 संगोष्ठियाँ हो चुकी हैं।

सागवाड़ा का चातुर्मास बड़ा ही खट्टा–मीठा रहा है। कार्यक्रम भी सब अच्छे–अच्छे हुये। चातुर्मास के बाद आपकी आज्ञा लेकर आपके संघ में रहने वाले 4 साधु धर्म प्रभावना हेतु यहीं से निकल गये। उनमें तीन माताजी और एक मुनिराज बाहर जाकर बहुत ही धर्म की प्रभावना कर रहे हैं।

आपसे तन से जरूर दूर गये परन्तु मन से नहीं–

आपसे हम लोग धर्म प्रभावना करने के लिये राजस्थान से विहार करके मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड आदि सब शहरों में गये। बहुत सारे आचार्यों के हमने दर्शन किये लेकिन आपके जैसे सरल स्वभावी साधु हमें आज तक कहीं नहीं मिले। जब भी हम किसी आचार्य के दर्शन करते थे तो आपकी बहुत याद आती थी और आपके प्रति हमारी भक्ति और बढ़ जाती थी। कोई दिन ऐसा नहीं जाता था जब हम लोग आपका नाम ना लेते हो। हम जहाँ भी गये हर जगह हमने अपने गुरुओं का नाम सबके दिल में बिठाया है। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, भारत की राजधानी दिल्ली में हर शहर में और हर भक्त के दिल में, **यह कार्य आचार्य श्री गुप्तिनंदी जी गुरुदेव ने** बहुत भक्ति भावना के साथ किया है।

18 साल के बाद आपके पुनः दर्शन हुये–

आपके दर्शन की बहुत ही प्यास सबके मन में जाग उठी थी। हमेशा आपसे यही आशीर्वाद माँगते थे। गुरुदेव ऐसा आशीर्वाद दीजिये, आपके हमें शीघ्र दर्शन हो। आपका आशीर्वाद मिला। आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव का 2014 का चातुर्मास दिल्ली में था।

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव एवं
आचार्य श्री गुप्तिनंदी जी का मिलन

यहाँ गुरुदेव ने चातुर्मास में ही निर्णय कर लिया था और दिल्ली में घोषणा कर दी थी कि, हम लोग यहाँ से विहार करके सीधे हमारे शिक्षा गुरु आचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव के पास दर्शन करने के लिये जायेंगे। 18 वर्षों के बाद हमारा महान् पुण्य का उदय आया। इतने वर्षों के बाद आपके दर्शन किये। आपका असीम प्रेम, वात्सल्य सभी साधुओं को मिला। हम आपके दर्शन करके धन्य हो गये।

आपका 5वाँ अनुयोग है 'अनुभव'–

आपकी उदारता और विशालता हमारी नजरों में आई, हमें 18 वर्षों के बाद आप में बहुत परिवर्तन देखने को मिला। आपका वात्सल्य बहुत बढ़ गया है। आपने अपनी सरलता और समता को और बढ़ा लिया है। वैसे तो जिनवाणी के चार अनुयोग होते हैं। लेकिन हम सबके लिये आपका 'अनुभव' पाँचवाँ अनुयोग है। आपके द्वारा दिये गये अनुभव पग–पग पर बहुत ही काम आते हैं। कभी–कभी आपके अनुभव हमारे लिये सुरक्षा कवच बन जाते है। जो अनुभव आज तक आपने दिये हैं और दे रहे हैं शायद ही कोई देने वाला आगे मिलेगा। अनुभव हर मनुष्य की सबसे बड़ी पूँजी है। अनुभव करना अलग बात है और उसको सबके बीच में शेयर करना अलग है। कोई अनुभव करता है तो बोल नहीं पाता, परन्तु आप तो साधुओं को चलते–फिरते, क्लास में, विहार में, वैयावृत्ति में, कहीं भी जाते हैं तो सबसे पूछते हैं ताकि बोलने से सामने वाले और अनुभव करना सीखें और साथ में बोलना सीखें।

आचार्य श्री कुन्थुसागर जी संघ

एक बार भी जो आपके पास में आ जाता है, फिर उसे पता चल जाता है कि गुरुदेव सबसे अनुभव पूछेंगे इसलिये पहले से ही सब अपनी तैयारी कर लेते हैं। अनुभव में अपना उपयोग लगाते हैं। फिर उन्हें फालतू समय नहीं मिलता है। वो राग-द्वेष, ईर्ष्या, क्रोध, मान, माया, छल-कपट से बच जाते हैं। शुभोपयोग में लगे रहते हैं। तेरी मेरी निंदा चुगली नहीं करते हैं। आपके अनुभव पूछने के कारण सभी साधु भी समता में रहना सीख जाते हैं। प्रसन्न मन रहते हैं।

आपका लक्ष्य है 'मैं' को प्राप्त करना, ये मैं क्या है ?-

आपके मुख से सब लोगों ने 'मैं' बहुत सुना है। आप 'मैं' शब्द का प्रयोग बहुत करते हैं। मैंने ऐसा करा हूँ, मैं ये लिखा हूँ, मैं ये करता हूँ, मैं ऐसा करूँगा। आपके मुँह से ये मैं सुनकर सब लोग आपको अहंकारी कहते हैं। यहाँ तक कि साधु-संत भी आपको अहंकारी मानते हैं। आचार्य कनकनंदी जी दिनभर मैं-मैं करते रहते हैं।

मैं जब ब्रह्मचारिणी थी तब किसी भी संघ में दर्शन करने जाती थी तब साधु लोग ये जरूर मुझे बोलते थे कि तुम्हारे गुरुदेव तो केवल मैं-मैं ही करते रहते हैं। परन्तु मैं उस समय इस मैं शब्द का अर्थ नहीं समझती थी इसलिये चुप रह जाती थी। आपके सामने मैं शब्द का अर्थ पूछने की किसी में हिम्मत नहीं होती थी। केवल आपके पीछे ही बोलते रहते थे। जो इस 'मैं' शब्द का अर्थ नहीं समझते हैं, वो बहुत बड़ी भूल कर रहे हैं। अपने लक्ष्य से भटक रहे हैं। सम्यक्त्व से च्युत हो रहे हैं। देव-गुरु और जिनवाणी का अवर्णवाद कर रहे हैं।

प्रवचनसार में 'मैं' के विषय में कई गाथायें आई हैं-

आपके पास हम 18 वर्ष के बाद में आये। देवपुरा में आपके दर्शन किये। आप संघ के साधुओं को प्रवचनसार पढ़ा रहे थे।

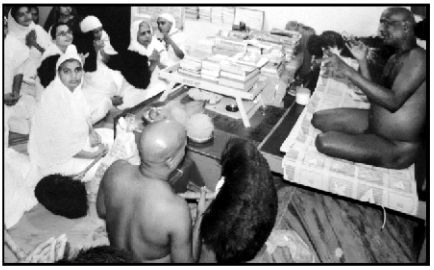

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव क्लास लेते हुए

उसमें एक विषय आपने मैं वाला लिया। उसका अर्थ समझ कर हम अति गद्‌गद् हो गये। जिस शब्द का हम लोगों को अर्थ नहीं मालुम था, हमारी भ्रांति उस दिन समाप्त हो गई, गलत धारणा छूट गई। मन की ग्रंथि खुल गई। बहुत ही सुन्दर यह विषय लगा, तीन–चार दिन तक आपने यही समझाया। **''मैं'' यानि स्व को पाना ''अहमेक्को खलु शुद्धो'' आज हम जो कुछ पुण्य क्रियायें कर रहे हैं, धर्म कर रहे हैं वह सब एक मैं के लिये कर रहे हैं, मैं को पाने के लिये कर रहे हैं।** मैं यानि स्वात्म उपलब्धि, समता, शांति, सत्य ही मेरा स्वभाव है। राग, द्वेष, क्रोध, कषाय, घृणा, ईर्ष्या, संक्लेश, मायाचारी, छल–कपट, लोभ आदि ये आत्मा के स्वभाव नहीं हैं। ये सब विभाव परिणाम हैं। आप कहते हैं, हम शब्द में, मैं भी आ जाता हूँ। लेकिन दूसरों के अच्छे काम या बुरे काम में भी हम सबका ग्रहण हो जाता है। इसलिये आप मैं कहते हैं। मैं कहने में स्वयं ही का नाम किया जाता है। स्वयं का कार्य उसमें आता है तो शेष लोग उसमें छूट जाते हैं। पुण्य–पाप, अच्छा–बुरा सभी लोग अपने–अपने कर्मों के अनुसार करते रहते हैं। इसलिये हम शब्द के स्थान पर मैं शब्द का ही प्रयोग करना चाहिये। मैं यानि अर्हं सोऽहं को पाना, स्व स्वभाव को प्राप्त करना, मैं की सिद्धि ही सिद्ध पद दिलायेगी, मोक्ष की यात्रा करायेगी।

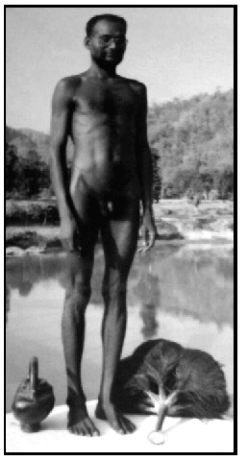

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव 'मैं' का ध्यान करते हुए

आप एक महाकवि हैं–

पहले आप छोटे–बड़े ग्रंथों का लेखन कार्य गद्य में करते थे। इस प्रकार आपने 250 (ढाई सौ) से ऊपर पुस्तकें लिख दी हैं। जब आपका सीपुर अतिशय क्षेत्र पर चातुर्मास हुआ। उस समय आपकी सुप्त कवित्व शक्ति जागृत हो गई। आपने गूढ़ सैद्धान्तिक विषयों पर अनेक कवितायें बना डाली, आप पहले गद्य रूप लिखते थे, अब आप पद्य रूप में लिखने लगे। हर विषय की कवितायें आपने बनाई हैं। चारों अनुयोगों का विषय कविताओं में भर दिया। कोई विषय आपसे अछूता नहीं है। 6 द्रव्य, 7 तत्त्व, 9 पदार्थ, त्रस और स्थावर, पुण्य–पाप, संसार में होने वाले सुख–दुःख, चेतन–अचेतन पदार्थ, माता–पिता, भाई–बहन, बुजुर्ग आदि।

फल–फूल, पत्ते, नदी, तालाब, सागर, अणु, घास, मिट्टी, लकड़ी, गुरु–शिष्य, बच्चे, धूली, वृक्ष, पहाड़, चट्टान, पत्थर, एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक पशु, पक्षी, गाय, विज्ञान आदि हरएक वस्तु में क्या गुण है, उनके गुणों को आपने कविता में उजागर किया है। बुरी से बुरी वस्तु व्यसन, जर्दा, नेलपेंट, लिपिस्टिक, होटल का भोजन आदि किसी को भी आपने नहीं छोड़ा। हर विषय पर आपने कवितायें बनाई हैं। कोई भी साधु कुछ पूछते हैं तो आप दूसरे दिन तो एक कविता उनके प्रश्न पर बना लेते हैं।

आपने कई कविताओं में तो अपने सभी गुरुओं का गुणगान भी किया। कौनसे गुरु से आपको घर छोड़ने की प्रेरणा मिली। किन–किन गुरुओं के साथ आप रहे। कौन से आचार्य ने आपको कौन–कौन सा पद प्रदान किया, कहाँ पर किया।

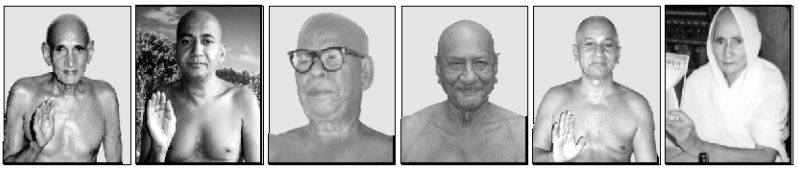

आ. विमलसागर जी आ. भरतसागर जी आ. देशभूषण जी आ. विद्यानंदी जी आ. कुन्थुसागर जी आर्यिका विजयमति माताजी

आपके जितने भी नियम हैं, प्रतिज्ञा हैं, उन पर भी आपने कवितायें लिखी हैं। आपने राष्ट्रभक्ति पर, नेताओं के आदर्शों पर, हमारे प्राचीन आचार्यों पर भी कविताओं की रचना की है। भारत एक विश्व गुरु है। आपने इन सब विषयों पर कविताओं की रचना की है। आपकी कवितायें ऐसे ही कोई पढ़ेगा तो कुछ समझ नहीं पायेगा। आपके सामने आपके मुखारविंद से उन कविताओं का अर्थ समझेगा तभी कोई समझ पाता है। आपकी क्या भावना है वो कविता पढ़कर नहीं समझ सकते। आपकी कविता में विशेष बात यह है कि जिस चीज को हम तुच्छ समझते हैं। जिसकी कीमत हमारी नजरों में कुछ भी नहीं है, ऐसी घास–मिट्टी और धुली को आपने क्या बताया है ? उनके गुणों को आपने सबके सामने कविता में लिख दिया है। घास, मिट्टी और धुली ये हमारे लिये कितनी उपयोगी है। कितना हमारा उपकार करती है। यह आपने बताया है और कविता में सिद्ध किया है। कभी–कभी तो आप आधी रात को भी कविता बनाते हैं। कितनी ही आपको थकान हो लेकिन आपका कवि मन ना जाने किस विषय पर कब कविता रच डाले। आपने अपने स्वयं के गुणों पर भी कविता बनाई है। आप राग–द्वेष, लंद–फंद, माईक–मंच, ख्याति पूजा से हमेशा दूर रहना चाहते हैं। आप स्वावलम्बी, अनुशासनप्रिय, समयानुबद्धता से कार्य करना चाहते हैं। स्वास्थ्य संबंधी विषय पर भी कवितायें बनाई। मिर्ची, मसाला, नमक, हल्दी, जीरा, धनियाँ, दूध, सब्जी, दाल–भात, अनाज आदि पर भी कवितायें बनाई हैं। आपकी कविताओं को समझना कोई बच्चों का खेल नहीं है। धार्मिक जितने भी पर्व हैं उन पर भी आपकी कई कवितायें हैं। आपने एक 12 भावना पर कविता लिखी है। हम केवल 12 भावना ही बोलते हैं परन्तु उन 12 भावनाओं में आप 24 भावना बोलते हैं और उसमें भी एकत्व भावना (मैं) को मुख्य बताया है। एकत्व यानि एक मैं अहं की सिद्धि की, स्व को पाने की भावना, एकत्व भावना से ही सारी भावना उपजी है, इस तरह आप कहते हैं 12 भावना ही नहीं है 24 भावना होती है वो कैसे होती है। वह आपने 24 भावना की कविता में सिद्ध किया है।

अभी तक आपने हजारों कवितायें बना दी हैं। आपने उन कविताओं को गीतांजलि नाम दिया है। इस तरह आपके द्वारा अभी तक 55 के करीब गीतांजलि छप चुकी है। आपकी कविताओं में आचार्यों के द्वारा बताई हुई रची हुई गाथायें भी आती हैं। आप जब जीवादि तत्त्वों की कविता लिखते हैं तो उन कविताओं में शास्त्र की गाथा भी देते हैं। आपकी कविता भी आगम प्रमाण से युक्त है। उनको भी कोई काट नहीं सकता। अणु से लेकर परमाणु तक और संसारी से लेकर सिद्ध तक, सब विषय कविताओं में भर दिया है। आपकी कविताओं ने गागर में सागर की उक्ति को चरितार्थ किया है। पृथ्वी से लेकर आकाश को छूने का काम आपने किया है। आपकी दिन-रात लेखनी चलती रहती है। आपको कोई श्रावक कुछ भी पूछे कोई माताजी या कोई मुनिराज या कोई आचार्य, विद्वान् आदि इनके पूछने पर आप कविता बना देते हैं और कविता के नीचे उस व्यक्ति का नाम, स्थान, समय सबकुछ डालकर छपवाते हैं। यह कविता इस व्यक्ति के प्रश्न पूछने पर बनी है।

आपने यह सिद्ध कर दिया है पढ़ने की कोई उम्र नहीं होती-

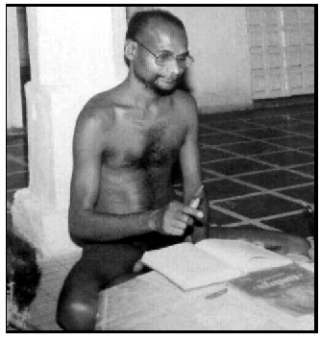

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव अध्ययन करते हुए

बहुत बार हम सुनते हैं कि 30-35 की उम्र होने के बाद कुछ भी याद करो तो भूल जाते हैं, याद नहीं होता है। और एक कहावत भी आती है कि साठी बुद्धि नाठी, यानि कि 60 की उम्र होने के बाद व्यक्ति की बुद्धि घट जाती है। उसकी बौद्धिक क्षमता कम हो जाती है। वह बस 60 का होने के बाद खाता और सोता है। परन्तु इन सबको आपने फैल कर दिया है। आप कहते हैं मैं जीवनभर विद्यार्थी रहूँगा और विद्यार्थी बनकर पढ़ाई-लिखाई करूँगा। वही आप कर रहे हैं।

आपकी उम्र को देखते हुये लगता है, मनुष्य जब अपना एक लक्ष्य बना लेता है तो वह फिर अपनी कितनी ही उम्र का क्यों ना हो जाये परन्तु वह सब कुछ कर सकता है। आपसे प्रमाद और आलस्य तो दूर ही रहता है। आपकी बुद्धि के आगे तो मैं आपको किस चीज की उपमा दूँ, हर उपमा आपके आगे छोटी पड़ जायेगी। जो परिश्रम आपने ज्ञानार्जन के लिये किया है और कर रहे हैं। अभी आपके जैसा परिश्रमी कोई नहीं मिलेगा। हर कार्य को आप मिनटों में कर लेते हैं। हम तो सोचते ही रहते हैं, ये काम करें आज नहीं तो कल कर लेंगे और आप स्फुर्ति से उत्साह के साथ कार्य को पूर्ण भी कर देते हैं। किसी भी काम को करने में आलस्य नहीं करते हैं। आपके चेहरे पर ही कार्य कुशलता झलकती है। इतनी उम्र होने के बाद भी आपकी विषयों को खोजने की जो लगन आपके अंदर है,पता नहीं ऐसी लगन तो शायद किसी वैज्ञानिक में हो, आपने अपने नाम के आगे लगे वैज्ञानिक शब्द को सार्थक कर दिया है। आप पुस्तकें भी विशेष कर वैज्ञानिकों की पढ़ते हैं एवं आपकी पुस्तकें वैज्ञानिक पढ़ते हैं, उन्हीं का अध्ययन आप करते हैं।

आपको कोई भी विषय अकेले पढ़ना कम अच्छा लगता है या दूसरे से उस विषय को पढ़ाते हैं और पूछने पर समझाते हैं। आपकी आदत है आपको जब नींद नहीं आ रही हो तो आप संघ के ब्रह्मचारी आदि से रात्रि के समय भी कुछ न कुछ नये विषयों पर लेख आदि सुनते हैं, तभी आप सोते हैं। आप जब दिल्ली, कोटा आदि में भी बीमार हुये थे तो आपको दिन में भी डाक्टर लोग आराम करने के लिये कहते थे। परन्तु जब तक आपको कोई कुछ पढ़कर नहीं सुनाते थे तब तक आपको नींद नहीं आती थी। दिन में कोई न कोई मुनिश्री, माताजी या मैं जब ब्रह्मचारिणी थी, तब आपको पढ़कर सुनाती थी और रात में ब्रह्मचारी या कोई बच्चे आपको लेख पढ़कर सुनाते थे, तब आप सोते थे। अभी भी मैंने आपको देखा जिस दिन आपका मौन रहता है या फिर क्लास नहीं लगती तो आप वैज्ञानिकों की पुस्तक या शिक्षाप्रद कोई लेख पढ़वाते हैं और फिर सबसे अनुभव पूछते हैं।

आप चाहते हैं कि सब आपके जैसे ज्ञानी और अनुभवी बने। अनुभव सीखे और अपने जीवन को समतामय बनाये। जिस वेश को धारण किया है उस लक्ष्य को प्राप्त करें। आप सबके जीवन का उत्थान और प्रगति देखना चाहते हैं। जब आशीर्वाद भी देते हैं तो यही बोलते हैं, आपकी खूब प्रगति हो, आपके जीवन का विकास हो, आपकी भावना और उज्ज्वल बने। ऐसी भावना केवल शिष्य की प्रगति चाहने वाले गुरु ही कर सकते हैं। जो अपने समान बनाना चाहते हैं, वो ही कर सकते हैं। जिनके मन में राग, द्वेष, ईर्ष्या की भावना नहीं है वो ही कर सकते हैं।

संघ में मैं ही पढ़ाऊँगा किसी पंडित (विद्वान्) से नहीं पढ़ने दूँगा–

आपकी भावना कितनी उज्ज्वल है। संघ में कोई साधु किसी विद्वान् से पढ़ने की बात करता तो आप कहते थे जब तक मैं हूँ तब तक किसी भी साधु को किसी पंडित (विद्वान्) से नहीं पढ़ने दूँगा। जिसके पास में मात्र ज्ञान है, आचरण नहीं है ऐसे विद्वानों से क्यों पढ़ना, मैं सबको पढ़ाऊँगा, आप साधुओं को भी पढ़ाते हैं और आपने ही बच्चों का शिविर लगाना शुरू किया, बच्चों को संस्कार देने का काम किया। प्रशिक्षण शिविर के माध्यम से आपने हजारों बच्चों को पढ़ाया, धर्म के संस्कार दिये। अभी तक आप 34 शिविर एवं हजारों कक्षायें लगा चुके हैं। 13 विशाल वैज्ञानिक संगोष्ठियों का आयोजन कर चुके हैं। आपके पास देश–विदेश के वैज्ञानिक पढ़ने आते हैं। वो सही ज्ञान आप से प्राप्त करते हैं।

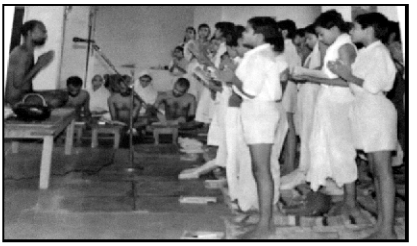

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव बच्चों को पढ़ाते हुए

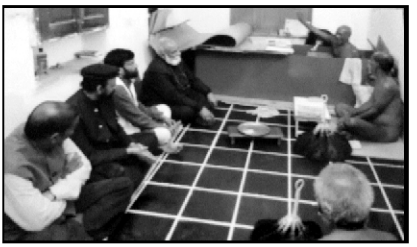

गुरुदेव से वैज्ञानिक शिष्य पढ़ते हुए

विदेश में जाकर वो सब अपने जिनधर्म का प्रचार करते हैं। आचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव के द्वारा दीक्षित शिष्यों को आपने ही पढ़ाया है, आप नंदी संघ के शिक्षा गुरु हैं।

225 साधु एवं माताजी को आपने पढ़ाया है यानि की चतुर्विध संघ को अध्ययन करवाया है। कई पंडित और भट्टारक भी आपसे पढ़े हैं। अनेक संघ के मुनि, आर्यिका, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी आपके पास पढ़ने आये और पढ़कर चले गये। आपका संघ तो चलता-फिरता गुरुकुल है। जब तक साधु लोग पढ़ना चाहते हैं वो आपके पास पढ़ते हैं और पढ़कर फिर चले जाते हैं। आचार्य श्री कुंथुसागर जी के संघ में रहते हुये आपने बहुत सारे साधुओं को पढ़ाया था।

आपसे पढ़ने वाले साधुओं की संख्या-

(1) 46 साधु को पढ़ाया, ये सब आचार्य श्री कुंथुसागर जी से दीक्षित शिष्य गण हैं।

(2) 29 आर्यिका माताजी आपसे पढ़ाई करती थीं।

(3) आपसे दीक्षित और शिक्षित शिष्य 4 हैं। तीन मुनिराज और एक आर्यिका आस्थाश्री माताजी।

(4) ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी 9

(5) आचार्य विमलसागर जी, आचार्य भरतसागर जी का संघ जब सोनागिर में था तब 70-80 के करीब साधुओं को पढ़ाया था।

(6) आचार्य विरागसागर जी ससंघ को पढ़ाया।

(7) गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में हस्तिनापुर में समयसार 250 पंडितों को पढ़ाया था। उस समय 45 साधु-साध्वी भी पढ़े थे।

(8) आचार्य अभिनंदनसागर जी के संघ को और आचार्य पद्मनंदी जी के संघ के साधुओं को करीब 60-70 साधुओं को आपने 1996 में उदयपुर में पढ़ाया था। कोई भी साधु पढ़ने के लिये आते हैं तो आप उनको आगम का सही बोध देते हैं। कभी पढ़ाने के लिये आप मना नहीं करते हैं। पढ़ने और पढ़ाने का कार्य आपने तीसरी कक्षा से ही किया है। बचपन में स्कूल के बच्चों को पढ़ा देते थे। आज साधु-संतों को पढ़ा रहे हैं। पढ़ाने से ज्ञान का क्षयोपशम बढ़ता है। ज्ञान देने से ज्ञान बढ़ता है, आप इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। आप इसका निःस्वार्थ भाव से सबको ज्ञान देते हैं इसलिये आपका ज्ञान बढ़ता ही जा रहा है। दिन-दूनी रात-चौगुनी ज्ञान वृद्धि कर रहा है।

(9) सन् 1997 में ईडर गुजरात में गणिनी आर्यिका विशुद्धमति माताजी के संघ से अहमदाबाद से आते समय मिलन हुआ था। वहाँ एक महीने का प्रवास रहा। उस समय माताजी के संघ के 12, 13 माताजी, 6,7 ब्रह्मचारिणियों को आपने पढ़ाया था।

आप एक वैज्ञानिक आचार्य है विज्ञान आपका प्रिय विषय है-

आप जितना भी विषय पढ़ाते हैं वो सब विज्ञान के संदर्भ से पढ़ाते हैं। विज्ञान से घटित करके उदाहरण सहित पढ़ाते हैं ताकि पढ़ने वाले के दिमाग में एकदम फीट हो जाये।

वैज्ञानिक- विज्ञान से परे जो ज्ञान का विषय आपने खोजा है और उसे आपने लिखा है। वो विषय तो अभी वैज्ञानिक भी खोज नहीं पाये। आप तो अभी तक विदेश की यात्रा करने भी नहीं गये। फिर जो सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय शास्त्रों को पढ़कर आपने लिखा है वह वैज्ञानिकों के लिये खोजने का विषय बन गया है। दिन-रात आपका शुभ चिंतन, मनन, ध्यान ही चलता रहता है। ध्यान और समता से आप सत्य की खोज में लगे रहते हैं।

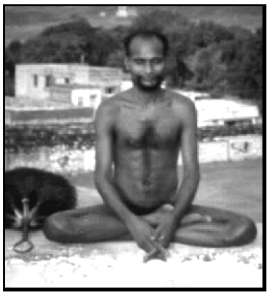

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव चिंतन करते हुए

वैसे भी आप जब नहीं बोलते हैं तो आपको देखकर ऐसा लगता है गुरुदेव पता नहीं किस विषय पर विचार कर रहे हैं। उस समय आपका चेहरा अलग ही दिखता है। संसारी जीवों का मन एक सेकेंड में पता नहीं कहाँ–कहाँ भ्रमण करके आ जाता है। आपका मन सत्य की खोज में निकलता है। चुपचाप बैठते हैं तब चेहरे को इधर से उधर घुमाते हैं तो लगता है गुरुदेव को जो चाहिये वो मिल गया है और अभी हम सबको बताने वाले हैं और कभी–कभी तो बता देते हैं और कभी बोल देते हैं समय आने पर बताऊँगा। सुनने वाला तो भूल जाता है परन्तु आप नहीं भूलते हैं। समय आने पर आप बोल भी देते हैं।

कोई विषय आपको अच्छा लगता है तो आप उसका अनुभव पूछते हैं–

कभी–कभी किसी के मुँह से कोई भी विषय निकल जाये तो आप फिर उस विषय की तह तक पहुँचने की कोशिश करते हैं। तुमने ऐसा क्यों बोला– इसका कारण बताओ, मैं जानना चाहता हूँ, जो बोला वो सही बोला। इसमें क्या अनुभव हुआ है ? आप किसी भी विषय को सामान्य से नहीं लेते, उसकी गहराई में चले जाते हैं। पूछ–पूछकर सामने वाले का अनुभव बढ़वा देते हैं और साथ में कहते हैं मैं इसलिये कहता हूँ अनुभव करो। ऐसे बहुत सारे प्रसंग हमने गुरुदेव के पास में देखे हैं। एक ही चीज का अनुभव हर व्यक्ति से पूछते हैं। कौन कितना ग्रहण करता है, कितना बताता है, किसका क्षयोपशम कितना है। मैं इतना बताता हूँ, मेरी बात को सुनने वाले कितना याद रखते हैं और कितना अपने जीवन में अपनाते हैं। केवल ये लोग बोलते ही हैं या कुछ करते भी हैं। सबकी बोलने की शैली कैसी है ? कौन किस भाव से बोल रहा है ?

अपने आपको सबसे अधिक ज्ञानी तो नहीं मान रहा है। दूसरों को नीचा दिखाने को तो नहीं बोल रहा है। सबसे अधिक होशियार मैं हूँ ऐसा तो नहीं सोच रहा है। इत्यादि अनेक कारणों से आप सबके भाव पढ़ने के लिये सबका स्वभाव जानने के लिये सबसे एक ही बात का अनुभव पूछते हैं। कभी–कभी तो ऐसा लगता है, गुरुदेव दिनभर जब भी क्लास में बुलाते हैं, पास में बैठते हैं तो क्यों अनुभव–अनुभव करते हैं वो ही बार–बार पढ़ाते हैं। लेकिन जब आपके वो ही अनुभव कहीं काम आते हैं तब आपके साथ में बिताये हरेक पल बड़े मूल्यवान बन जाते हैं। आपके अनुभव के सूत्र बड़े ही मूल्यवान है। कई जन्मों के पुण्य से आप जैसे पढ़ाने वाले गुरु किसी शिष्य को मिलते हैं। **जैसे चन्द्रगुप्त मौर्य को चाणक्य मिले थे वैसे ही नंदी संघ को आप जैसे कनकनंदी शिक्षा गुरु मिले हैं।** आप कहते हैं मेरा काम रास्ता दिखाना है। चलना या नहीं चलना तुम्हारा काम है। मैं तुमको जबरदस्ती नहीं घसीटूँगा। बड़े भाग्य से नहीं परम सौभाग्य से एक–एक अक्षर का ज्ञान देने वाले आप जैसे गुरु हमें मिले हैं। आप क्या अनुभव करते हैं, वहाँ तक कोई अपने अनुभव से नहीं पहुँच सकता।

आप जंगल में और एकांत में रहना अधिक पसन्द करते हैं–

आपको जंगल में बहुत अच्छा लगता है। प्राकृतिक वातावरण में रहकर एकांत साधना करना आपको अतिप्रिय है। आप कहते हैं, हमारे तीर्थंकर भी मुनि बनकर एकांत स्थान जंगल में रहकर ध्यान करते हैं, मौन रहकर शक्ति संचित करते हैं। घातियाँ कर्मों का क्षय होने के बाद जब समवशरण की रचना होती है तब जंगल में भी जनता की भीड़ वहाँ पहुँच जाती है और बारह सभा लग जाती है। आप एकांत में रहकर सत्य और समता को और बढ़ाना चाहते हैं।

वैसे तो आप बचपन में भी अकेले ही जंगल में चले जाते थे। आप अपने हाथ से छोटे–छोटे पैड़–पौधे लगाते थे। इससे सिद्ध होता है गाँव और जंगल आपको बहुत पसन्द आते हैं।

आप जंगल में भी रहते हैं तब भी आपके पास देश–विदेश के वैज्ञानिक लोग आपको ढूँढ़ते हुये आ जाते हैं क्योंकि सूर्य किसी के घर पर नहीं जाता है। जिसको सूर्य का प्रकाश चाहिये वो अपने घर के दरवाजे, खिड़की खोल देते हैं तो उसे सूर्य का प्रकाश मिल जाता है। उसी तरह आप भी सूर्य के समान हैं। जिसको ज्ञान चाहिये, विज्ञान के सूत्र चाहिये वो अपने आप आपके पास में आ जाते हैं।

आपको जैनधर्म को भारत में नहीं विश्व में पहुँचाना है–

आपकी भावना है, आप जैन धर्म को केवल मंदिर या नगर, क्षेत्र, राष्ट्र, देश में सीमित नहीं रखना चाहते हैं। आप जैनधर्म को विश्व धर्म बनाना चाहते हैं। जैनधर्म को पूर्ण वैज्ञानिक सिद्ध करना चाहते हैं। सूर्य की तरह ऊपर उठकर सबको आप विज्ञान के आलोक में प्रकाश देना चाहते है। आप ही एक ऐसे संत हैं। आज तक जैन धर्म को भारत में तो बहुत से संतों ने फैलाया है, परन्तु आप भारत के साथ–साथ विदेश में भी जैनधर्म का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। आप ही एक ऐसे संत है जो जैनधर्म को विश्व धर्म बनाने में प्रयत्न कर रहे हैं और आपका वह प्रयत्न बहुत देशों में सफल हो चुका है और शीघ्र ही विश्व में जैनधर्म एक वैज्ञानिक धर्म के नाम से आपके द्वारा प्रसिद्ध हो जायेगा। आप जैनधर्म को विश्व के कोने–कोने में पहुँचाना चाहते हैं। जैसे तीर्थंकरों ने धर्म का प्रचार–प्रसार किया, गणधरों ने किया, पूर्वाचार्यों ने किया। वही काम आप भी करना चाहते हैं। कहते हैं अच्छी भावना हमेशा अच्छा ही फल देती है। आपकी भावना भी आपको अवश्य सफलता दिलवायेगी।

एक दिन जैनधर्म वैज्ञानिक धर्म के नाम से जाना जायेगा। जो चीज विदेश में प्रसिद्ध होती है बाद में उस चीज की प्रसिद्धि भारत में होती है। इसलिये आपका काम भी विदेश में वैज्ञानिकों के द्वारा किया जा रहा है। वैज्ञानिकों के और उन दार्शनिकों के सिर पर आपका हाथ है। जिस दिन विदेश में जैनधर्म को लोग पूर्णतया जान जायेंगे उस दिन भारत में भी वैज्ञानिक जैनधर्म फैल जायेगा।

आप कहते हैं कि जितनी भी नई–नई वस्तुओं का आविष्कार हो रहा है। वो सब वैज्ञानिक ही करते हैं। कुछ वैज्ञानिकों को आप ही पढ़ाते हैं। विज्ञान से परे परा विज्ञान सिखाते हैं। छोटी–छोटी वस्तुओं का भी आविष्कार जैनधर्म के सूत्रों पर ही हो रहा है। विज्ञान यानि विशिष्ट ज्ञान की खोज आज आप कर रहे हैं और वैज्ञानिक आपके कहे अनुसार कार्य कर रहे हैं। वो ही जैनधर्म में छुपा विज्ञान है।

आपको प्रवचनसार बहुत प्रिय है कैसे आपने लिखा–

आप जब छोटी–बड़ी कई पुस्तकें लिख चुके तब आपने बड़े ग्रंथ लिखने का विचार किया, आपकी इच्छा हुई कि मैं 'समयसार' पर टीका करूँ। परन्तु आपने जब समयसार देखा तो पता चला कि समयसार पर तो बहुत टीकायें हो चुकी हैं। अनेक आचार्यों ने टीका कर दी है। जिस ग्रंथ की समीक्षात्मक टीका नहीं हुई है। ऐसे ग्रंथ की टीका और समीक्षा करना चाहिये। आपने निश्चय कर लिया कि अब मैं प्रवचनसार पर टीका करूँगा। आपने प्रवचनसार पर विज्ञान के आलोक में बहुत ही सुन्दर ढंग से समीक्षा व टीका की है। आप कहते हैं 'समयसार' में तो केवल एक मुख्य गाथा है। उसी पर पूरा 'समयसार' लिखा हुआ है।

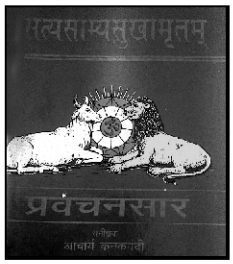

आप कहते हैं- प्रवचनसार एक आध्यात्मिक ग्रंथ है। पूर्ण वैज्ञानिक ढंग से इसे पढ़ना चाहिये और उसे गहराई से समझना चाहिये।

ऐसे तो आपकी हरेक पुस्तक बड़ी ही खोजपूर्ण, वैज्ञानिक, धार्मिक है। इस प्रकार हर पुस्तक विज्ञान सम्मत है। आपके वैज्ञानिक प्रोफेसर्स शिष्यों के द्वारा अनेक शोधपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुए और अभी 'कषायपाहुड़' ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है।

आपके सभी ग्रंथ शोधपूर्ण हैं-

आपके सभी ग्रंथ बड़े ही शोधपूर्ण है। आपके द्वारा लिखित शोधपूर्ण ग्रंथ की कई संस्थाओं में स्थापना हुई है। आज भी कई स्थानों पर वैज्ञानिक लोग पी.एचडी. कर रहे हैं। आप 35-36 साल से अनेक साधु-साध्वियों को पढ़ाते आ रहे हैं। आप 25 साल की उम्र से संघ के साधुओं को पढ़ाने लगे थे। 24 साल की उम्र में ही आपकी क्षुल्लक दीक्षा हुई। क्षुल्लक अवस्था से पढ़ाते आ रहे हैं। 1978 से आज 2015 चल रहा है। आपका जन्म 1954 में हुआ है। अभी आपका 62वाँ साल चल रहा है। आप निरन्तर पढ़ते और पढ़ाते आ रहे हैं। 37 वर्षों से सब साधुओं को स्वाध्याय करवाते आ रहे हैं।

आपने केवल साधुओं को ही नहीं गृहस्थ और वैज्ञानिकों को भी पढ़ाते हैं-

आपने आचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव से दीक्षित सभी मुनिराजों को आर्यिकाओं को पढ़ाया है और भी अनेक संघ के साधु-संतों को पढ़ाया है। इनके साथ-साथ अनेक श्रावकों को, बच्चों को आपने पढ़ाया है। सबसे बढ़कर आपके पास वैज्ञानिक, प्रोफेसर, इंजीनियर, लेक्चरार, जज, कुलपति आदि लोग एक बालक की भाँति आपके चरणों में रहकर पढ़ते हैं। ये वैज्ञानिक कुलपति आदि विदेश में जाकर धर्म का प्रचार करते हैं। ये सब वैज्ञानिक महाविद्वान् हैं, ये सब सत्य को आपसे जानते हैं।

ये वैज्ञानिक देश-विदेश में विश्वविद्यालयों में पढ़ाते हैं। विश्व धर्म संसद में ये शोधपत्र भी प्रस्तुत करते हैं।

आप कहते हैं कदाचित् विज्ञान या वैज्ञानिक तो कुछ गलती भी कर सकते हैं परन्तु जैनधर्म के सिद्धान्तों को कोई नहीं काट सकता।

भारत विश्व गुरु रहा है वापस वैसा ही बने-

आप कहते हैं- यह भारत भूमि विश्व गुरु के नाम से जानी जाती है। पहले भारत विश्व गुरु था। क्योंकि भारत ऐसा देश है जहाँ ऋषि, मुनि, दार्शनिक, शोध बोधकर्त्ता, तीर्थंकर जैसे महान् पुरुषों ने जन्म लिया है। हमारे तीर्थंकर भगवान सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक थे। सुपर साइंटिस्ट थे। उनके केवलज्ञान के सामने अन्य का ज्ञान कुछ भी नहीं है। सूक्ष्म अणु जो कि हमें आँख से दिखाई नहीं देता है। उस शुद्ध परमाणु को बताने वाला जैनधर्म है। तीर्थंकर भगवान हैं। ऐसे सूक्ष्म सिद्धान्तों को सीखने, समझने आपके पास वैज्ञानिक आते हैं।

जैनधर्म प्राणीमात्र के लिये है जो उसे पाले, समझे उसका है-

जैनधर्म और जैन साधु सबके हैं। सबके लिये हैं। प्रत्येक प्राणी जैनधर्म को पालन कर सकता है। धारण कर सकता है। मनुष्य ही इसके अधिकारी नहीं। देव, तिर्यंच, नारकी जो पाले उसका धर्म है। किसी व्यक्ति विशेष के लिये जैन धर्म नहीं है। किसी जाति के लिये जैनधर्म नहीं है। इसलिये जो पाले उसका जैनधर्म है, कितने ही तिर्यंच प्राणियों ने जैनधर्म को धारण किया और उत्तम सुख के भागी बने।

आप कहते हैं जैन साधु सबके हैं, आपका कहना एकदम सत्य है। लोग कहते जरूर है परन्तु मानते नहीं।

कोई भंगी, चमार, मुसलमान आयेगा तो लोग उसे घृणा की दृष्टि से देखेंगे, उसके पूछने पर भी हम उसे जैनधर्म का स्वरूप नहीं बतायेंगे, उसे दूर कर देंगे। जैनधर्म किसी से घृणा करना नहीं सिखाता है। ऊँच–नीच का भेदभाव हमारे मन में आ जाता है। हम संकीर्णता के दायरे में बंधकर रह जाते हैं। कर्म से इंसान उच्च–नीच कुल में जन्म ले सकता है परन्तु धर्म का स्वरूप जानने के लिए कोई भी व्यक्ति आपके पास में आता है तो आप उसे जिनधर्म का सच्चा ज्ञान देते हैं। आपकी दया, करुणा उन वैज्ञानिकों पर बरसती है। कोई भी वैज्ञानिक किसी भी जाति का हो उसकी जात से आपको कुछ नहीं लेना है। उसे आप सत्य का उपदेश देते हैं। आपका मार्गदर्शन पाकर कई वैज्ञानिक सत्य की खोज में लगे हुये हैं। आपके पास कोई भी वैज्ञानिक या इंजीनियर किसी भी जाति का हो वो आयेगा तो वह भी सत्य ज्ञान को पाने में लालायित हो जायेगा। आपके चरण सानिध्य में रहकर वो वैज्ञानिक आदि वास्तविक धर्म को जानते और पढ़ते हैं। जिनधर्म पर अटूट श्रद्धा करते हैं। वो सब इतने शांत स्वभाव के होते हैं जैसे एक छोटा सा एक दो साल का बालक हो। शांत स्वभावी जीव अपनी बुद्धि का विकास तीव्र गति से करते हैं। आप भी कहते हैं मौन रहने से, एकांत में रहने से, प्राकृतिक जीवन जीने से, जितनी समता बढ़ती है उतनी ही बुद्धि प्रखर बनती है, बौद्धिक विकास होता है।

आपके साहित्य पर होती है संगोष्ठी–

आपके द्वारा लिखे हुये ग्रंथों पर संगोष्ठी होती है। आपके साहित्य को जैन, अजैन, हिन्दू, मुसलमान, श्वेताम्बर आदि समाज के भक्तजन पढ़ते हैं। भारत के विभिन्न विश्वविद्यालय में आपके जो दिगम्बर श्वेताम्बर शिष्य हैं वो शोधपत्र भी प्रस्तुत करते हैं। संगोष्ठी एवं शोधपत्र आदि में सक्रियता से भाग लेते हैं।

आपके आशीर्वाद से वे भक्त बड़ी–बड़ी संगोष्ठी में मंच संचालन भी बड़े अच्छे ढंग से करते हैं। आपके मार्गदर्शन में वो विदेश में भी कार्य करते हैं। जब भी विदेश में संगोष्ठी होती है, तब वैज्ञानिक भक्त आपसे परामर्श करके एक विषय सुनिश्चित करके वहाँ शोधपत्र पढ़ते हैं। उनके शोधपत्र में जो कुछ भी विषय रहता है वह सब आपके द्वारा दिया हुआ अनमोल ज्ञान है। ऐसा शोधपत्र जो भी पढ़ता है उसे निश्चित ही वहाँ पुरस्कृत भी किया जाता है, कई उपाधियों से अलंकृत किया जाता है। आपके शिष्यों का बहुमान यानि कि आपका ही बहुमान है। आपका ही साक्षात् सम्मान है। आपके बताये मार्ग पर जो भी शिष्य चलते हैं उनको हरक्षेत्र में सफलता मिलती है। भारत में भी जहाँ–जहाँ पर वैज्ञानिक संगोष्ठियाँ होती हैं वहाँ पर शोधपत्र पढ़ने वाले आपके शिष्य ही सबसे अधिक होते हैं।

आपके साहित्य की 57 विश्व विद्यालयों में स्थापना हुई है–

आपके शिष्यों द्वारा 14 प्रदेश के 57 विश्वविद्यालयों में आपके साहित्य की स्थापना हो चुकी है। आपके साहित्यों से आजकल विद्यार्थी शोधार्थी शोध करते रहते हैं। शोध करने वाले श्रेष्ठ विद्यार्थियों को प्रथम वर्ष की स्कालरशिप में18 हजार रुपये मिलते हैं। दूसरे वर्ष में 20 हजार और तीसरे वर्ष में 25 हजार उनको यू.जी.सी. की तरफ से मिलते हैं। ऐसे विद्यार्थियों को शोधार्थियों को उच्च स्तर की नौकरी भी मिलती है। ये शोधार्थी दूसरों को शिक्षा मिले ऐसे निबंध भी लिखते हैं। आपके प्रोफेसर शिष्य भी ये काम बड़ी खुशी से करते हैं।

सबसे पहले आपके साहित्य की स्थापना कहाँ पर हुई–

सबसे पहले आपके साहित्यों की स्थापना 'लाडनूं' विश्वविद्यालय में हुई और वह साहित्य स्थापना अब बढ़ती जा रही है। अभी भारत के 14 प्रदेशों में आपके साहित्यों की स्थापना हो चुकी है।

आपके साहित्य और आपके भाव विदेश तक कौन पहुँचा रहा है–

आपने तो एक लक्ष्य बना लिया है। समता में रहकर साधना रत रहूँगा। आपका कार्य स्वयमेव विश्व स्तर तक हो रहा है, सहज सरल पहुँच रहा है। आपने इतने शिष्यों को तैयार कर लिया है, वो ही शिष्य आपके द्वारा उल्लिखित कार्य को अंजाम दे रहे हैं। देश–विदेश में प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। आप किसी से राग–द्वेष, छल–कपट, तेरा–मेरा का भाव नहीं करते हैं। जो कार्य शांति और समता से होता है वह कार्य विषमता और अशांति से नहीं हो सकता। वैसे भी आपकी भाषा इतनी कठिन होती है कि सामान्य बुद्धि के लोग उसे समझ भी नहीं सकते हैं। आपकी भाषा तो वैज्ञानिक भी थोड़ा–थोड़ा समझते हैं। अज्ञानी जीवों के लिये तो आपके वाक्य, आपकी भाषा केवल श्रद्धान् का विषय है, आज्ञा प्रमाण है।

आपके अन्दर तो नीचे धरती से लेकर अंतिम ब्रह्माण्ड तक खोजने की क्षमता है। आपकी कही बात पर हम पूर्ण विश्वास करते हैं।

आपसे कुछ विज्ञान के विषय में कठिन प्रश्न पूछते हैं तो पूछने पर आप पहले ही कह देते हैं– आप लोगों को अभी समझ में नहीं आयेगा। आपने तो कठिन से कठिन विषय जो एक वर्ष में रात–दिन जग करके पढ़ लिया। जो विषय आपने एक वर्ष में पढ़ लिया उस विषय को हम 20–22 साल तक भी नहीं पढ़ सकते, पढ़ेंगे तो इतने वर्ष लग जायेंगे। जब हमें इतने वर्ष लग जायेंगे तब तक तो हमारा जीवन ही पूरा हो जायेगा। इसलिये जो सूत्र आपसे मिलते हैं, आप पढ़ाते हैं वो हम श्रद्धा से सुनते हैं, उसे ग्रहण करने का पूर्ण प्रयत्न करते हैं। अकेले बैठकर उस विषय का चिंतन–मनन करते हैं। आगम का सिद्धान्त है श्रद्धा से सुनी गई गुरुवाणी तो अगले भव केवलज्ञान में कारण बन जाती है।

आपके वैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रचार कितने देशों में हो रहा है–

आपके शिष्य भी साइंटिस्ट–वैज्ञानिक हैं। जो गुरु जैसा होता है उसे उसी के अनुकूल चलने वाले शिष्य प्रशिष्य भी मिलते हैं। आप महान् ज्ञानी, विज्ञानी, तार्किक, चूड़ामणि रत्न है तो आपकी ज्ञान रश्मियों को झेलने वाले भी वैज्ञानिक शिष्य हैं। आप जो भी संदेश देश–विदेश के लिये देते हैं। वो वैज्ञानिक लोग उस संदेश को अमेरिका, यूरोप, आस्ट्रेलिया, एशिया आदि बड़े देशों में फैलाते हैं। पुस्तकों के माध्यम से अपने भाषण से संदेश देते हैं। इन महादेशों में जाकर वैज्ञानिक लोग सबको धर्म से जोड़ने का प्रयास करते हैं। आपका संदेश लोगों तक पहुँचाते हैं।

अमेरिका में आपके भक्तों के द्वारा जिन मंदिर का निर्माण–

अमेरिका जैसे राष्ट्र में आपके भक्त शिष्यों के द्वारा जैनमंदिर का निर्माण चल रहा है वह शीघ्र ही बनने वाला है। आपके वैज्ञानिक शिष्य विदेश में वेबसाइट के माध्यम से भी धर्म का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। विदेश में धर्मदर्शन विज्ञान की अनेक संस्थाएँ बन चुकी हैं। आपके आशीर्वाद से विदेश में यह कार्य बहुत ही तीव्र गति से चल रहा है। आप किसी भी संस्था के लिये और किसी मंदिर के लिये चंदा चिट्ठा नहीं करते हैं। आप पैसों वाला काम या पैसे वाले को अधिक सम्मान कभी नहीं देते, सबको समान अधिकार आपके पास में मिलता है। बल्कि देखने में ये आता है कि जो कोई व्यक्ति आपको एक, दो, पाँच, दस रुपये की चीज लाकर देते हैं आप उसका बहुत बार सम्मान करते हैं। पैसों वालों की कोई कीमत आपके पास में नहीं है ना ही कोई आपके लिये वी.आई.पी. है। सब एक समान है। आपने कभी किसी संस्था को पैसा नहीं दिलवाया है और ना ही किसी मंदिर को और आगे भी आप नहीं दिलवायेंगे। ये आपकी प्रतिज्ञा है।

आपके नाम की कोई पर्सनल संस्था भी नहीं है। आप किसी संस्था के मालिक भी नहीं हैं। आप किसी संस्था से जुड़े हुये भी नहीं हैं।

सब लोग इस कारण आप से आकर अपने आप ही जुड़ जाते हैं। आप अपनी पुस्तक को छपवाने (प्रकाशित) के लिये भी किसी को नहीं कहते हैं, फिर भी आपकी इतनी सारी पुस्तकें छपती रहती हैं। पुस्तक के लिये आपको कभी बोलना नहीं पड़ता है। आपसे जुड़े हुये भक्त ही आपकी पुस्तकें छपवा देते हैं।

जो कुछ भी कार्य देश विदेश में हो रहा है उसमें आपकी प्रेरणा है। नवकोटि से आप उन सबसे बहुत दूर हैं। आप इन सबसे ऊपर उठ चुके हैं जो कुछ हो रहा है। आगे भी होता रहेगा वो सब आपके शिष्य अपने मन से करते रहेंगे। उन कार्यों में आपका कोई हस्तक्षेप नहीं है। आप उनसे ये भी नहीं कहते, आपको ऐसा नहीं ऐसा करना चाहिये। ऐसे निर्मोही, निस्पृही गुरुदेव को बारम्बार प्रणाम हो। आप किसी भी कार्य में हेर-फेर नहीं करते हैं। आपको किसी से कुछ भी लेना-देना नहीं है। इसलिये सरस्वती माँ आपके आगे-आगे है और लक्ष्मी मैय्या आपके पीछे-पीछे चलती है। किसी भी संस्था के लंद-फंद में आप नहीं है। आपने इन सबका त्याग कर दिया है। आपने प्रतिज्ञा कर ली है। समता से आप साधना करते रहते हैं। सूर्य के समान सबके ऊपर उठकर सबको ज्ञान का प्रकाश दे रहे हैं। यही आपका काम है। आप सब कुछ करते हुये भी कुछ नहीं करते हैं। आपके आशीर्वाद से सब हो रहा है। आप भगवान के समान बनना चाहते हैं। उसी की साधना कर रहे हैं, आप कहते हैं भगवान सब कुछ जानते हैं परन्तु वो क्या किसी से घृणा करते हैं, बार-बार किसी को बोलते हैं, नहीं बोलते हैं। उसी प्रकार आप भी जानते हुये भी अपना स्वभाव कहीं विषमता में ना बदल जाये इसलिये आप समता में रहते हैं, किसी से कुछ भी नहीं कहते हैं। आपका केवल एक सपना विशेष है, भारत पुनः जैसा पहले था यानि कि विश्व गुरु था, वो वापस बन जाये और विश्व में जैनधर्म फैल जाये। जैनधर्म वैज्ञानिक घोषित हो जाये। सत्य को प्राणीमात्र समझ जाये यही आपकी सर्वोत्कृष्ट भावना है। उसका ही आप प्रयास कर रहे हैं।

आपने सबसे अधिक समय मेवाड बागड़ में बिताया–

आपको बागड़ और मेवाड़ के गाँव बहुत अच्छे लगते हैं। यहाँ अभी भी भारतीय ग्राम्य संस्कृति जीवित है। आपस में प्रेम, वात्सल्य दिखता है। इनके पढ़ने का ज्यादा भूत सवार नहीं हुआ है। फैशन और व्यसन से अभी यहाँ के लोग दूर हैं। गुरु के प्रति इनके अन्दर समर्पण भाव है। श्रद्धा और भक्ति से ओतप्रोत है। गुरु की भक्ति में हमेशा तैयार रहते हैं। गाँव का रहन–सहन, खान–पान, व्यवहार आपको अच्छा लगता है।

गाँव का फोटो

आपको यहाँ रहते हुए 20–22 वर्ष होने को आ रहे हैं, परन्तु एक भी मंदिर में आपका फोटो नहीं है। आपने कभी किसी समाज से यह नहीं कहा कि तुम मेरा फोटो लगाओ, मैंने यहाँ चातुर्मास किया है या शिविर या संगोष्ठी की है। वो तो दूर किसी मंदिर का आपने पंचकल्याणक कराया है तो वहाँ भी आपके फोटो हमें देखने को नहीं मिलते हैं। आपकी प्रतिज्ञा का पालन मेवाड़ बागड़ के लोग भी करते हैं। आप कहते हैं– कभी मैं कहकर अपना पोस्टर, पेम्पलेट, पत्रिका, बैनर आदि नहीं बनवाऊँगा। मंदिर हो या घर किसी भी स्थान पर आपके फोटो देखने को नहीं मिलते हैं। आप ख्याति, पूजा, प्रसिद्धि नाम से दूर रहना चाहते हैं। आप तो सोचते हैं, मैं अच्छे गुणों को बढ़ाऊँ और इसी भव में कर्म काटके मोक्ष चला जाऊँ भले ही आंशिक मोक्ष हो और आपकी समता, ज्ञान और साधना को देखते हुये आप एक–दो भव में ही मोक्ष अवश्य ही प्राप्त करेंगे।

बाहरी दिखावा आडम्बर ढ़ोंग में कल्याण नहीं है–

आप कहते हैं ये बाहर की ख्याति, लाभ, प्रसिद्धि तो दिखावा है, ढ़ोंग है, उससे मुझे आत्मिक शांति नहीं मिलेगी, वो मुझे नहीं चाहिये, स्व की उपलब्धि ही मेरा लक्ष्य है, वही मुझे पाना है।

आप कभी भी अपने नाम की इच्छा नहीं करते। आपके सानिध्य में कभी धर्मशाला, संत भवन, मंदिर आदि भी बनते हैं तो वहाँ आप अपना नाम नहीं लिखने देते। आप तो अपना नाम सिद्धालय में अंकित करना चाहते हैं। सिद्ध बनने की इच्छा एवं लक्ष्य बना रखा है। आप स्वप्न आदि जो भी देखते हैं उनके संकेत आप देते हैं कि ये स्वप्न भविष्य की सूचना दे रहे हैं। आने वाले समय में बहुत बड़े-बड़े काम होंगे। आज भी एक से बढ़कर एक कार्य आपके माध्यम से हो रहे हैं। आगे भी और काम बढ़ेंगे, घटेंगे नहीं। आपकी वास्तव में अलौकिक वृत्ति है। जो चीज आपके अंदर व सामने दिखाई देती है वो अन्य साधुओं में नहीं मिलती है। आपके अन्दर गुणों का अथाह महासागर बह रहा है, भंडार भरा है। उसमें से कुछ गुण मेरे अंदर भी आ जाये। आप कहते हैं- जीव में ज्ञान चाहे थोड़ा हो पर सम्यक् हो, बुद्धि हमेशा सुबुद्धि ही रहे, कुबुद्धि ना बने, सरल प्राणी संसार से पार हो जायेगा। कुटिल परिणामी अपनी कुटिल भावनाओं में उलझ जायेगा। आपका आदर्श जीवन सबके लिए एक दर्पण की तरह है। आपको देखकर ही अपने मन, वचन, काय को सरल बनाया जा सकता है।

आप हमेशा संघ में साधुओं को भजन कविता की प्रेरणा देते थे-

आपकी यह कार्य प्रणाली बहुत अच्छी लगती है उसमें भी कभी किसी साधु से किसी प्रकार का अपराध (गलती) हो जाये तो आप उसे ज्यादा माला फेरने के लिये नहीं देते या कोई व्रत, उपवास आदि नहीं देते। अपितु उसको जिस विषय में रुचि होती है वह कार्य प्रायश्चित्त में देते थे। भोजन छोड़कर प्रायश्चित्त किया और साथ में संक्लेश परिणाम कर लिये तो डबल पाप का बंध कर लिया। आप प्रायश्चित्त में पूजन बनाने का, देश भक्ति की कविता बनाने का या लेख आदि लिखने का प्रायश्चित्त देते हैं। बनाने पर दूसरों को भी प्रेरणा देते हैं। संघ में एक साधु को ही प्रेरणा नहीं देते हैं। संघ के सभी साधुओं को कविता आदि बनाने की प्रेरणा देते रहते हैं। प्रेरणा देने से आज आप सब साधुओं से बहुत आगे बढ़ गये हैं।

हमने सब साधुओं ने तो गिनती की (थोड़े ही) कविता, पूजन, भजन बनाये हैं परन्तु आपकी हजारों आध्यात्मिक कवितायें बन गई है। कोई दिन ऐसा जाता होगा जिस दिन आप कोई रचना नहीं करते होंगे वरना तो हर रोज नई कविता बनाकर प्रातःकाल साधुओं को दिखा देते हैं। आप कहते हैं कविता ऐसी बनाओ जिसमें शिक्षा हो, ज्ञान मिले, पढ़कर अपने आचरण में उतारी जाये। आपसे प्रेरणा पाकर बनाने वाले तो पीछे रह गये और आप बहुत आगे बढ़ गये। आप हमारे लिये उदाहरण है। कभी भी हमें किसी का उत्साह बढ़ाने का भरपूर प्रयास करना चाहिये। उसके कार्य की सराहना करनी चाहिये। अच्छे कार्य को अंजाम देने वाले को और आगे बढ़ाना चाहिये जिससे उससे भी अधिक अच्छा काम हमारे द्वारा सम्पन्न हो सके। आपने प्रेरणा देकर इतना पुण्य कमाया था। इसी भव में वह पुण्य तीव्र रूप में उदय में आया और आपकी लेखनी गद्य से पद्य की ओर अग्रसर होकर बढ़ रही है। ऐसे गूढ़ रहस्य आप कविताओं में देते हैं, उनको समझना बड़ा ही कठिन है। द्रव्यानुयोग के ग्रंथ को अकेले पढ़कर समझना कठिन है वैसी ही आपकी कविता भी कठिन है।

हम जो कुछ सुनते थे वो गलत है या जो देख रहे हैं वो गलत है–

आपको देखकर हमारी बहुत बड़ी गलत धारणा टूट गयी। आप सचमुच में एक विद्यार्थी, शोधार्थी है। बालकवत् छोटे से बच्चे के समान सरल स्वभावी है। जहाँ सुनते थे कि 50–60 के बाद इंसान आलसी हो जाता है, वो तो बस क्लेश के सिवा कुछ नहीं करता है। वह स्वयं हंसना भूल जाता है। वह दूसरों की हँसी भी छीन लेता है। आपकी स्फूर्ति देखकर तो 100 वर्ष का वृद्ध भी बच्चा बन सकता है।

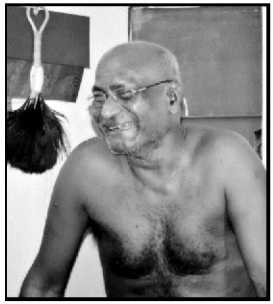

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव हँसते हुए

आपकी निश्चल हँसी, चेहरे पर भोलापन सहज, सरल हर क्रिया देखकर मन गदगद हो जाता है। जो लोग ये समझते हैं वो आचार्यश्री के जीवन से कुछ सीखें। कुछ प्रेरणा लें। जब कोई व्यक्ति राग–द्वेष से ऊपर उठकर अंतरंग के चक्षु से आपको देखेगा तभी उसे अपना बचपन आपके पास में मिलेगा। आत्म शक्ति को जागृत कर पायेगा। जीव में अनंत शक्ति है। हमने अपनी शक्ति को पहचाना नहीं है। व्यक्ति उम्र से कितना ही बढ़ा बन जाये परन्तु हमेशा विद्यार्थी जीवन जीयेगा तो वह भी ज्ञानार्जन कर सकता है।

आपने हर वर्ग के लिये कुछ न कुछ कार्य किया है–

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव एवं आ. गुप्तिनन्दी जी गुरुदेव ससंघ पंचकल्याण करते हुए

आपने सबसे बड़ा काम सबसे पहले साधुओं को पढ़ाने का काम किया। आपने बच्चों के लिये अनेक शिविर लगाये। वैज्ञानिकों के लिये आपने कई संगोष्ठियों का आयोजन किया। जिनभक्तों के लिये आपने 24 तीर्थंकरों के पंचकल्याणक करवायें। आप हर कल्याणक का धार्मिक वैज्ञानिक विश्लेषण बहुत अच्छे ढंग से करते हैं। प्रबुद्ध वर्गों के लिये भी आपने क्लासें ली हैं। उनको धर्म से जोड़ा है। आपने जैनधर्म को वैज्ञानिक धर्म बताया है, उसको देश–विदेश में फैलाने के लिये आप सतत प्रयास कर रहे हैं।

आपको शिक्षा देने वाले अनेक शिक्षक थे–

आपने जब जैन धर्म को समझने का प्रयास किया। जैनधर्म में सत्य मिला तब आप सब कुछ छोड़कर, माता–पिता, भाई–बहन आदि से मुख मोड़कर गुरु के चरणों में आ गये। संसारी जीवों से अपना नाता तोड़कर ऐसे निकले कि फिर आप कभी उस तरफ झुके नहीं, जिनको छोड़ा उनको कभी देखा नहीं कौन है ? कैसे हैं ? कहाँ है ?

आपने जन्म देने वाले माता–पिता से कोई संबंध ही नहीं रखा। ''धन्य हैं आप और आपकी वीतरागता को''। आप तो बचपन से ही बड़े मेधावी थे। अच्छे–अच्छे के दाँत खट्टे कर देते थे। आप स्वयं पढ़ते थे, अपने ज्ञान को दूसरों में भी बाँटते थे। अपनी ही क्लास के बच्चों को आप सबकुछ पढ़ा लेते थे। आपके गुरुजन आपको जितना पढ़ाते थे उससे कई गुणा आप अपनी बुद्धि से पढ़ लेते थे। आप हर क्लास में मॉनिटर थे।

(1) धर्म क्षेत्र के प्रथम गुरु कौन हैं– आपके प्रथम गुरु ऐसे मिले शिक्षा से लेकर दीक्षा तक उन्होंने दी और आचार्य पद प्रदान किया। ऐसे प्रथम गुरु हैं आचार्य श्री कुंथुसागर जी गुरुदेव।

(2) धर्म की शिक्षा देने वाले द्वितीय गुरु – आपके दूसरे गुरु हैं राष्ट्रसंत कुंदकुंद भारती दिल्ली में विराजमान आचार्य श्री विद्यानंदी जी।

(3) आपके तृतीय गुरु– इस वसुधा के महान संत वात्सल्य रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागर जी गुरुदेव। इन्हीं के शिष्य मर्यादा शिष्योत्तम आचार्य श्री भरतसागर जी भी थे, दोनों आचार्य आपके शिक्षा गुरु हैं।

आर्यिकाओं में प्रथम गुरु कौन हैं–इस युग की प्रथम गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी आपकी प्रथम गुरु हैं। इन्होंने ही आपकी शंकाओं का समाधान किया था। आपको जैनधर्म का दिग्दर्शन कराया था। आपको गहन अध्ययन कराया है। सभी गुरुओं तक पहुँचाने वाली गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी हैं। आपको सर्वप्रथम विजयमति माताजी मिली इसलिये आपकी हर क्षेत्र में विजय होती गई। आप उच्च शिखर की ओर विजय ध्वज फहराने चल पड़े।

और किस–किस ने आपको अन्य विषय पढ़ाये– धर्मग्रन्थों के अलावा आपने संस्कृत, प्राकृत, व्याकरण का बड़ी गहराई से अध्ययन किया है। इन विषयों का अध्ययन आपको पंडित श्री प्रभाकर जी शास्त्री ने करवाया है। अन्य विद्वानों से भी अध्ययन किया है।

पंडित श्री शिखरचंद जी शास्त्री और पंडित श्री परमानंद जी शास्त्री, पंडित श्रेयांस जी दिवाकर इन सब विद्वानों ने आपको दर्शन शास्त्र-तर्क आदि पढ़ाये हैं। आपको किसी भी व्यक्ति से एक अक्षर का ज्ञान भी मिला होगा तो उसे भी आप पूरा बहुमान, सम्मान देते हैं। उसका विनय यथायोग्य करते हैं। किसी के द्वारा किये गये उपकार को आप कभी भी नहीं भूलते। आपको किसी आचार्य से ज्ञान मिला हो, किसी साधु से ज्ञान मिला हो या किया आर्यिका माताजी से आप उनका उपकार सदैव स्मरण करते रहते हैं। साधु तो दूर सामान्य श्रावक ने दो अक्षरों का ज्ञान दिया होगा तो उसका कभी नाम नहीं छिपाते, आज अधिकांश देखने में आता है- साधु-साध्वी भी अपने दीक्षा दाता का नाम, ज्ञानदाता का नाम छुपा देते हैं। अपने गुरु का नाम नहीं लेते हैं उससे और तीव्र ज्ञानावरणी कर्म का बंध होता है। शिक्षा देने वाला गुरु ही होता है चाहे वह एक अक्षर का ज्ञान (शिक्षा) दें, हमें उसका नाम नहीं छुपाना चाहिये। जो अपने गुरु का नाम नहीं छुपाता है वही ज्ञानी श्रेष्ठ बनता है। अगले भव में केवलज्ञान को प्राप्त करता है।

आपके वैसे तो अनेक गुण हैं परन्तु कुछ गुण आपके बड़े ही विशेष हैं-

आपके गुणों का मैं पूरी तरह से बखान नहीं कर सकती, आप सूरज हैं, मैं तो दीपक की लौ हूँ। मैं क्या आपके गुणों को लिख पाऊँगी, फिर भी आपके आशीर्वाद से कुछ महत्त्वपूर्ण विशेष गुणों को मैंने लिखने का प्रयास किया है। आपके कोई-कोई गुण तो सार्वभौमिक हैं। सबको पता है फिर भी आपको जो एक बार नजदीक से देख लेता है वह आपके भावों को, आपके गुणों को समझ लेता है। जैसे कि आप अपने कक्ष में बैठे रहते हो तब कोई भी भक्त अपनी भक्ति से कुछ पंक्तियाँ आपके विषय में लिखकर लाया है या और भी कोई विषय लिखा है तो आपको वह विषय बताने पर आप उसकी बहुत तारीफ करते हैं। उसको प्रोत्साहित करते हैं, उत्साह बढ़ाते हैं, चाहे उसमें कितनी ही गलती ही क्यों ना हो, पहले गलती नहीं बताते हैं।

पहले उत्साहवर्धन करते हैं फिर उसे गलती बताते हैं। साधु–साध्वी भी कुछ लिखकर बताते हैं तो उनकी भी प्रशंसा करके उन्हें प्रोत्साहित कर देते हैं, बहुत अच्छा लिखा है। इतना सुनते ही सामने वाला और एकाग्र मन से उस विषय पर जुट जाता है। उत्साह के साथ लिखता है और आगे बढ़ता है। छोटे बच्चों को तो साथ में अच्छा काम करने पर पुरस्कार आदि भी देते हैं। किसी को हतोत्साहित नहीं करते हैं, आपके चरणों में आने वाला हमेशा प्रसन्न होकर जाता है। आप किसी को आगे बढ़ता हुआ देखकर ईर्ष्या नहीं करते हैं, आगे बढ़ाने को और अधिक प्रेरणा देते हैं, सबको आगे बढ़ने की शुभ कामना देते हैं, आपकी प्रगति हो, उत्थान हो, मंगल हो, बहुत आगे बढ़ो, ये आपके शब्द रहते हैं। गुरु के शुभ वाक्य ही मंगलकारी है। आप उन शब्दों का ही प्रयोग करते हैं। कम शब्दों में आप बहुत सारा संदेश देते हैं।

आपकी अनेक प्रतिज्ञायें नियमावली–

आपने अनेक प्रतिज्ञायें ले रखी हैं जिसको प्रचार का माध्यम माना जाता है। ऐसी पत्रिका छपवाने के लिये आप कभी नहीं बोलते हैं। अपने आप छप गई तो आप उसमें कुछ भी नहीं बोलते कि पत्रिका ऐसी क्यों छपवाई, इसमें ऐसा फोटो लगवाते, ऐसा क्यों लगवाया इत्यादि आप किसी प्रकार का कोई प्रश्न नहीं पूछते हैं। आपने इसलिये इस तरह की अनेक प्रतिज्ञायें ले रखी हैं। पत्र–पत्रिका, पाण्डाल, पोस्टर, मंच, माईक, विज्ञापन, जन्म–जयन्ति, दीक्षा जयन्ति, आचार्य पदारोहण आदि के कोई भी कार्यक्रम नहीं करने देते हैं। आप ख्याति, लाभ, पूजा, प्रसिद्धि नाम के आगे नहीं भागते। कोई भक्त स्वेच्छा से भक्ति के वश अगर कुछ करता है तो उसको आप मना नहीं करते हैं और स्वयं बोलकर भी कभी नहीं करवाते। आप कहते हैं कोई भक्त गुरु के गुण गाकर पुण्य बंध करता है। उसके पुण्य में मैं बाधक नहीं बनूँगा।

आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव का विधान करते हुए
आ. गुप्तिनन्दी जी गुरुदेव ससंघ

आरती, पूजन, विधान के लिये भी स्वयं कभी नहीं बोलूँगा। होगा तो मना नहीं करूँगा। आपको दिखावा और ढोंग आडम्बर करना अच्छा नहीं लगता। ढ़ोंग करना एक पाखण्ड है। ये ही आत्म पतन में कारण है। जिन कारणों से संक्लेश होता हो उनसे हमेशा आप दूर रहते हैं। कभी ऐसे कारण आप नहीं जुटाते हैं और भी आपकी प्रतिज्ञायें हैं। जो आपने कविता में कई जगह लिखी हैं। राग-द्वेष, छल-कपट, पाटा, पुस्तक, चटाई, शिष्य-शिष्या, दंभ, तेरा-मेरा, निंदा, कलह, सम्मान-अपमान, लड़ाई-झगड़ा, ईर्ष्या, घृणा, क्रोध, कषाय, अशान्ति, विषमता, दबाव, प्रलोभन आदि जितने विभाव भाव हैं उनसे आप ऊपर उठ गये हैं। ये सब आपको नहीं करने पड़े वही कार्य आप समता और शांति में रहकर सत्य को पाने के लिये करते हैं। परम सत्ता को पाने का ही आपका एक लक्ष्य है। इन छोटी-मोटी तुच्छ वस्तुओं से आप प्रभावित नहीं होते। जैसे सुमेरु पर्वत कितना ही तूफान चले परन्तु अपने स्थान से चलायमान नहीं होता है। उसी प्रकार आप इन दुर्भावों से कभी चलायमान नहीं होते हैं। आपने आत्मा का उत्थान करने के लिये जो-जो नियम लिये हैं वो नियम निश्चित ही आत्म उत्थान में कारण बनेंगे। जब भी जिसको स्व-कल्याण करना है। 'स्व को पाना है।' मैं की उपलब्धि को प्राप्त करना है उसे सबसे पहले ये सब नियम धारण करने पड़ेंगे। क्योंकि ये दुर्भाव संक्लेश बढ़ाते हैं। शांति भंग करते हैं, विषमता बढ़ाते हैं। हम जितना-जितना इन सब चीजों से दूर रहते हैं उतना ही मन में आनंद, समता और शांति रहती है। बाहरी काम प्रायः दिखावे के लिये ही किये जाते हैं। कोई कार्यक्रम के लिये पैसा चाहिये, भीड़ चाहिये, व्यवस्था चाहिये। कुछ भी कमी रही तो संक्लेश परिणाम होते हैं और दिन-रात आर्त्त रौद्रध्यान होता रहता है।

अच्छा काम हो जाता है तो अहंकार बढ़ जाता है। मेरा इतना नाम हो गया, मेरे पास में इतनी भीड़ आती है। मेरे इतने शिष्य हैं। सब लोग मेरी कितनी पूजा-भक्ति करते हैं। आप इन सबसे दूर रहते हैं और दूर रहने के बाद में भी आज जो काम आपका भारत में ही नहीं, भारत से बाहर विदेश में चल रहा है। आप नहीं बोलते हैं फिर भी आपका इतना बड़ा काम हो रहा है। आप अपना नाम नहीं चाहते हैं फिर भी आपका नाम भारत में ही नहीं विदेश में गूँज रहा है। जो जितना त्याग करता है वह उतना ही ऊपर उठता है। आपने सब कुछ छोड़ दिया है। सबसे आप निवृत्त हो चुके हैं। आपकी सहज, सरल जो भक्त भक्ति करता है वही आपका वास्तविक आशीर्वाद प्राप्त करता है। आप बागड़ी भाषा में अपने आपको जंगली साधु बोलते हैं। आप कहते हैं ''मैं'' गांड़ा वैंडा थइग्या हूँ।'' आप पहले किसी भी मेवाड़ बागड़ प्रांत को छोड़कर अन्य गाँव, शहर या नगर में जब तक रहे तब तक आपने किसी वृद्ध महिला पुरुषों से आहार नहीं लिया था। यहाँ आकर इस बागड़ और मेवाड़ के लोगों की भक्ति देखकर ही यहाँ के वृद्ध श्रावक-श्राविकाओं से आहार लेने लगे। पहले सब स्थानों में बच्चों से ही आहार लेते थे। ''भक्त के वश में भगवान भी हो जाते हैं'' ऐसी लोकोक्ति है। आप भी मेवाड़ बागड़ के भक्तों से बड़े ही प्रभावित हैं। इसलिये सबसे आहार आदि ले लेते हैं।

कौन से आचार्य ने आपको कौनसा पद, कहाँ पर प्रदान किया-

आपका ज्ञान देखकर और आपकी पढ़ाने की शैली देखकर हरेक बड़े से बड़े आचार्य आप से हमेशा प्रभावित हो जाते हैं। जहाँ-जहाँ भी आप अपने दीक्षा गुरु के साथ में गये बड़े-बड़े संघों से मिले तब-तब आपको किसी-न-किसी आचार्य ने कुछ-न-कुछ पद अवश्य दिया। आपको बताकर कोई भी आचार्य पद नहीं देते थे। आप उनकी इतनी अनुनय, विनय करते थे कि जब भी कोई बड़े गुरु मिले, वो आपसे बड़े ही खुश हुये।

उन्होंने पद देकर अपनी प्रसन्नता प्रगट की, आपके दीक्षा गुरु ने भी आपको अनेक पद प्रदान किये। लेकिन जब कोई अन्य संघ के आचार्य पद देते हैं, उसकी बात ही निराली है और सबकी नजरों में पद लेने की गरिमा, गौरव और बढ़ जाता है।

(1) सबसे पहले कौनसा पद किसने कहाँ पर दिया ('मुनि से उपाध्याय बने हासन कर्नाटक 1982 में)–

सबसे पहले आपको आपके दीक्षा गुरु ने ब्रह्मचारी से क्षुल्लक बनाया, उसके बाद आपको मुनि दीक्षा दी। मुनि बनने के बाद अनेक आचार्यों ने आपके गुणों को देखते हुये समय–समय पर पद प्रदान किये। **जब आप दीक्षा गुरु के साथ विहार करके 1982 में हासन आये तब दीक्षा गुरु ने आपको हासन में उपाध्याय पद प्रदान किया।** उस समय संघ में अनेक साधु–साध्वियाँ थी।

(2) दूसरा पद (सिद्धान्त चक्रवर्ती का पद समनेवाड़ी में 1983)–

सन् 1983 में 'शमनेवाड़ी' में आप संघ के सभी साधुओं को धवला पढ़ाते थे। उस क्लास और पढ़ाई से प्रभावित होकर आपको **आचार्य श्री कुंथुसागर जी और आचार्य श्री देशभूषण जी ने अनेक संतों की उपस्थिति में सिद्धान्त चक्रवर्ती का पद दिया।**

(3) तीसरा पद (''आरा में ऐलाचार्य'')–

जब आप स्वगुरु के साथ संघ सहित आरा (बिहार) में आये तब 35 पिच्छी संघ में थी। उस समय स्वगुरु ने आपकी विनय नम्रता को देखकर आपको **ऐलाचार्य** का पद प्रदान किया।

(4) दिल्ली में विश्व धर्म प्रभाकर बने–

बिहार आदि प्रांतों से विहार करते हुये जब ससंघ का विहार दिल्ली की तरफ हुआ।

भारत की राजधानी दिल्ली में ससंघ का भव्य मंगल प्रवेश हुआ। यहाँ पर भगवान पारसनाथ जी का पंचकल्याणक भी बड़े धूमधाम के साथ ससंघ सानिध्य में सम्पन्न हुआ। इस पंचकल्याणक में **आचार्य श्री कुंथुसागर जी ससंघ** उपस्थित थे और **आचार्य श्री आनंदसागर जी भी आये** थे। उस पंचकल्याणक में आपके दीक्षा गुरु ने आपको **'विश्व धर्म प्रभाकर'** पद प्रदान किया।

(5) 1991 में रोहतक में ज्ञान–विज्ञान दिवाकर पद मिला–

दिल्ली से ससंघ का विहार रोहतक (हरियाणा) प्रांत में हुआ। इस वर्ष का चातुर्मास भी रोहतक में ही हुआ था। रोहतक के चातुर्मास में आपके तत्वावधान और आचार्यश्री के सान्निध्य में अनेक कार्यक्रम सानंद सम्पन्न हुये। वहाँ की समाज ने व आपके गुरु ने कल्पद्रुम महामंडल विधान में आपको **'ज्ञान–विज्ञान दिवाकर'** की पदवी प्रदान की।

आपको कोई पद लेने की इच्छा नहीं रहती थी, परन्तु अनेक कार्यक्रम में आपको कुछ–न–कुछ पद प्रदान किये गये।

(6) छट्टा पद कब किस गुरु ने कहाँ पर दिया–

और भी अनेक पद आपको मिले। आपके दीक्षा गुरु ने आपको निवाई चातुर्मास के समय ही आचार्य पद का पत्र भेज दिया था। परन्तु आप उस समय आचार्य नहीं बने, आपने मना कर दिया। 2 तीन वर्ष तक आप आचार्यश्री को मना करते रहे। जब आप से छोटे मुनि, आचार्य बन गये तब आपने आचार्य पद की स्वीकृति प्रदान की।

जब आप उदयपुर में अपने गुरु भाई से मिले और एक आचार्य अभिनंदनसागर जी मिले तब उन सबके पास आचार्य श्री कुंथुसागर जी का पत्र आया और अन्य गुरुओं के पास भी आया कि उपाध्याय कनकनंदी जी को मेरे आदेश से आचार्य पद प्रदान कर दिया जाये।

ये हमारे प्रथम शिष्य हैं। संघ के सभी साधुओं के शिक्षा गुरु हैं। इन्हें मेरी आज्ञा से आचार्य बनाया जाये। आचार्यश्री की आज्ञा से आचार्य अभिनंदनसागर जी और आचार्य पद्मनंदी जी ने मुनि दीक्षा में आपको आचार्य पद देने का संयोजन किया। संघस्थ मुनि श्री कुमार विद्यानंदी, मुनि श्री गुप्तिनंदी, आर्यिका राजश्री माताजी व आर्यिका क्षमाश्री माताजी ने अनुमोदन किया।

25-4-1996 में आपको आचार्य अभिनंदनसागर जी ने **आचार्य पद प्रदान** किया। उन्होंने अपनी तरफ से 'रत्न' का पद भी दिया। इस तरह आप **'आचार्यरत्न श्री कनकनंदी जी'** कहलाये।

अब आपके दो पद ही बाकी हैं। वो पद आपको कोई नहीं दे सकता। वो पद तो आप अपनी साधना के बल पर ही पा सकते हैं, इन दो पदों के संस्कार कोई नहीं कर सकता, कोई गुरु दे नहीं सकता। इन दोनों पद को प्राप्त करना ही हर साधु का लक्ष्य होता है।

आप पद प्राप्त करके भी कभी अहंकार नहीं करते हैं कि मेरे पास इतने सारे पद हैं। पद का अहंकार मद बढ़ाता है और मद सम्यक्त्व से दूर करके मिथ्यात्व की ठोकरें खिलाता है। ये भौतिक पद की आपको तनिक भी इच्छा नहीं है। आप तो हरपल हरक्षण मैं को पाने की भावना करते रहते हैं। मैं मिल गया तो सब कुछ मिल गया। संसार का सार, मोक्षमार्ग का सार ही मैं है और कुछ भी नहीं है। आपने वही लक्ष्य चुना है। आपने अपने हरपद का अच्छे से पालन किया है। पद के अनुसार ही आपने कार्य किये हैं। कभी अपने पद का आपने दुरुपयोग नहीं किया है।

आपने अभी तक कहाँ-कहाँ की तीर्थ वंदना की है-

आपके जीवन की शुरूवात ही शाश्वत तीर्थ सम्मेद शिखर जी की वंदना से हुई है। आप सबसे पहले प्रारिम्भक अवस्था में सम्मेद शिखर आये। वहाँ के प्रभु के दर्शन किये और चतुर्विध संघ आपको यहीं पर मिला।

गुरु आपको तीर्थ पर ही मिले। गुरु और गुरु माँ विजयमति माताजी यहीं शिखरजी में ही मिले थे। जिसके मोक्षमार्ग की शुरूआत ही सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्र से हुई हो वह जीव निश्चित ही कर्म काटकर सिद्ध अवश्य बनेगा।

शिखर जी में दो चातुर्मास आपने अपने गुरु के साथ में किये और चंपापुर सिद्धक्षेत्र में भी स्वगुरु के साथ चातुर्मास किया। आपकी क्षुल्लक दीक्षा भी पपौरा जी अतिशय सिद्धक्षेत्र पर हुई। मुनि दीक्षा भी श्रवणबेलगोला भगवान बाहुबली के चरणों में हुई। आपने सम्मेद शिखर जी तीर्थ वंदना अनेक बार की है। एक गृहस्थ अवस्था में करीब 21 साल की उम्र में और 1987 में आपके ससंघ का चातुर्मास जब अकलुज में हुआ तब वहाँ के कर्मठ कार्यकर्त्ता श्रीमान् बाबूभाई गाँधी (हीरालाल गाँधी) ने यात्रा करवाई। युवा कार्यकर्त्ताओं की बहुत अच्छी टीम इनके साथ थी। संघ को शिखरजी लेकर गये और आरा तक संघ को इन्होंने छोड़ा। आरा में चातुर्मास हुआ। पूरी यात्रा का अर्थ भार मुम्बई के दानवीर श्रेष्ठी श्री कांतिलाल जवेरी ने स्वेच्छा से वहन किया। आपने अनेक तीर्थों की वंदना, दर्शन आदि अपने दीक्षा गुरु के साथ में ही की। महाराष्ट्र, कर्नाटक, बिहार, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, बुन्देलखण्ड, यू.पी., हरियाणा, दिल्ली आदि प्रदेशों में अपने दीक्षा गुरु के साथ में विहार किया। राजस्थान में आप गुरु की आज्ञा से अकेले ही धर्म प्रभावना करने के लिये पाँच पिच्छी को साथ में लेकर आये। आपने राजस्थान में सर्वाधिक चातुर्मास किये हैं।

दीक्षा गुरु आ.कुन्थुसागर जी के साथ दर्शन करते हुए
आ. कनकनन्दी जी गुरुदेव

आपकी ख्याति देश-विदेश में है-

आप ख्याति प्रसिद्धि नहीं चाहते हैं परन्तु आपकी ख्याति देश और विदेश में है। विदेश में आपकी प्रसिद्धि भारत देश से अधिक है। आप जब विज्ञान के छोटे-छोटे सूत्र समझाते हैं तब सुनकर ऐसा लगता है- गुरुदेव ने इस ज्ञान को पाने के लिये कितनी मेहनत की है। हमें तो आयता माल मिल रहा है पर हम उसका लाभ नहीं उठा पा रहे हैं। हम तो आपके ज्ञान की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। आपके अन्दर इतना ज्ञान भरा पड़ा है। पंचम काल में इस आधुनिक युग में आपके ज्ञान का पार नहीं है। फिर जिन आचार्यों ने इतने बड़े-बड़े ग्रंथ लिखे हैं उनके ज्ञान का क्या कहना और भगवान के केवलज्ञान की तो कौन महिमा गा सकता है ? अर्थात् कोई नहीं।

आपकी कुण्डली आपके विषय में क्या कहती है ?-

महान् ज्ञानी व्यक्ति की कुण्डली भी कोई ऐरा-गेरा ज्योतिष नहीं बता सकता। आपके शरीर के शुभ लक्षणों को देखकर एक ज्योतिष वैज्ञानिक ने कुण्डली बनाई है। उन्होंने ऊपर से नीचे सिर से लेकर पैर तक हर अंग का वर्णन किया है। आपके अंग कौन से शुभ हैं और ये शुभ अंग आपको अभी क्या-क्या फल दे रहे हैं और आगे क्या फल देंगे। जहाँ शुभ लक्षण अधिक हो वहाँ अशुभ तो अपने आप ही दब जाता है। वह अपना कुछ भी दुष्प्रभाव शरीर पर नहीं दिखाता है। अधिक पुण्य परमाणु के सामने पाप परमाणु कुछ नहीं कर सकते। सूर्य के प्रकाश में तारे अपना प्रकाश नहीं दिखा सकते। खुशबू के होने पर बदबू दब जाती है। अनेक गुणों के सामने एक-दो अवगुण ढ़क जाते हैं। उन्होंने जो आपके अंगोपांग मसा तिल आदि के बारे में जितना बताया है उससे आप कई गुणा ज्यादा भाग्यवान, महान् हैं।

(1) आपका गज मस्तक सूचित कर रहा है, **आप प्रखर बुद्धि** के धारी है। आपका कोई सामना नहीं कर सकता। उन्नत ललाट कहता है।

आपके अन्दर **सबके प्रति प्रेम वात्सल्य की भावना** है। दया, करुणा के आप भण्डार हैं। गुरुदेव के विशेष गुण जानने के इच्छुक भक्तगण उनकी पुस्तकों का अवलोकन करें। पूरी जानकारी गुरुदेव की बहुत सी पुस्तकों में लिखी है। आपके शरीर में अनेक शुभ सूचक चिह्न नये–नये प्रगट हो रहे हैं। हमने पहले कभी आपके शरीर में ये चिह्न नहीं देखे थे जो इस वर्ष हमने अभी देखे हैं। आपके मुख में ब्रह्माण्ड उभर कर आया है। वह भी आपको नित नये कार्य की ओर बढ़ाने वाला है। आपके हाथ में तिल है, वह तिल लक्ष्मी का और ज्ञान का प्रतीक है, आपको कभी किसी के सामने किसी भी वस्तु की याचना नहीं करनी पड़ेगी। बिना बोले ही आपका सब काम हो जाता है वैसे **भी आपने प्रतिज्ञा कर रखी है कि आप कभी किसी से याचना नहीं करेंगे।** आपके अंगोंपांग का और कुण्डली के अनुसार ज्योतिष ने जो वर्णन किया है वह बहुत ही सुन्दर किया है, विशेष जिज्ञासु अवश्य उनका लेख पढ़ें।

आप जानकर भी अनजान बन जाते हैं–

आप कभी–कभी बड़े ही अनजान भोले बाबा बन जाते हैं। जैसे कुछ हुआ ही नहीं। कहीं भी किसी प्रकार की घटना दुर्घटना घट जाये और वह आपसे जुड़ी हो तो भी आप बिल्कुल समता से उसका सामना करने के लिये तैयार रहते हैं। आपका चेहरा देखकर कोई भी यह नहीं कह सकता कि गुरुदेव को किसी बात का दुःख है। कोई कुछ बताने आता है तो चुपचाप सुनते रहते हैं। ऐसे सुनते हैं जैसे कि आपको कुछ पता ही नहीं है। आप कभी गंभीर विषय को भी सीरियस होकर नहीं सोचते। सबको शास्त्र, स्वाध्याय कराके उनको धर्म में स्थित करते रहते हैं।

आप मनोविज्ञान के अनुसार कार्य करते हैं। आप यह जानते हैं कि अगर मैं जो घटना घटी उसके विषय में कुछ पूछूँगा, बोलूँगा तो बताने वाले और ज्यादा बताते ही जायेंगे।

आप मन को कन्वर्ट करने का प्रयास करते हैं। येन-केन प्रकार से सबका स्थितिकरण करते हैं। आपके सामने कोई किसी भी साधु-साध्वी के विषय में, किसी श्रावक आदि के बारे में कुछ बोल जाये, किसी की कोई बुराई करें तो आप कभी नहीं सुनते। सही बात भी हो तो गलती करने वाले पर नाराज नहीं होते, उसको कुछ नहीं कहते। हमेशा उसके साथ एक समान व्यवहार बनाकर रखते हैं ताकि उसे कुछ पता ना चले।

कोई भी साधक किसी प्रकार की बात आपको बतावें तो आप कभी किसी को नहीं बोलते हैं। किसी की गल्ती अन्य किसी के सामने प्रगट नहीं करते हैं। इस तरह आप अपरिश्रावी गुण के धनी हैं। आप कभी भी खाली नहीं बैठते कुछ-न-कुछ करते ही रहते हैं। कभी पढ़ना, कभी लिखना, कभी दूसरों को पढ़ाना आदि।

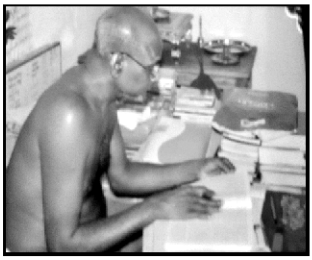

आ.कनकनन्दी जी गुरुदेव लिखते हुए

खाली चर्चा तो बाहर से आये हुये किसी श्रावक से भी अधिक समय नहीं करते हैं। दो पाँच मिनिट बोलेंगे और कविता पढ़ाने बिठा देते हैं या सुनाने के लिये कह देते हैं। आप अकेले कमरे में जब भी बैठे होंगे तो आपके हाथ में या तो पेन और कागज होगा या फिर किसी वैज्ञानिक की पुस्तक होगी।

आप अभी विज्ञान और वैज्ञानिकों के द्वारा लिखे हुये साहित्य का ही अध्ययन करते हैं। जैन धर्म के चारों अनुयोगों का तो आपने अध्ययन कर लिया है। अब जो विषय किसी के समझ में नहीं आते हैं वह आप पढ़ते हैं, आपको कठिन विषय और कठिन से कठिन कविता बनाना, काम करना अच्छा लगता है।

आप आठ अंगों का पालन बहुत अच्छे से करते हैं–

आप आठों अंगों का पालन बड़ी श्रद्धा से करते हैं। चार अंग स्व से संबंध रखते हैं और चार पर से सम्बन्धित हैं। धर्म से गिरते प्राणी को बहुत प्रेम और वात्सल्य से सम्बोधित करते हैं। सबका अच्छे से स्थितिकरण करते हैं।

आपकी जिनागम पर अटूट आस्था है। आप किसी विषय पर शंका नहीं करते हैं। आप दूसरों की शंकाओं का समाधान करते हैं। आप किसी कामना (इच्छा) को लेकर साधु नहीं बने। आप बोलते हैं – मैं साधु बना हूँ तो मुझे स्वर्गादिक सुख मिले, इन्द्रों का वैभव मिले इसके लिए नहीं। आप किसी भी रोगी, बीमार, रुग्ण, साधु, श्रावक, तिर्यंच आदि से ग्लानि नहीं करते हैं। अपने हाथ से उसकी सेवा–सुश्रुषा उपचार करते हैं।

मूढ़ता छोड़कर ही आपने दीक्षा ग्रहण की है। आप अपने गुणों को बढ़ाने के लिये अपनी प्रशंसा करते हैं। दूसरों के अवगुण प्रगट नहीं करते हैं। आपके द्वारा जो भी शरीर का स्वास्थ्य देखते हुये दोष लग रहा है उसे आप गलत मानते हैं और छोड़ने की भावना करते हैं। यही **आपका उपगूहन गुण** है। कैसी भी परिस्थिति आपके सामने आ जाये, आप कभी अपनी समता को नहीं छोड़ते, अपने धर्म में स्थित रहकर दूसरों को भी धर्म में स्थित करते हैं। ये **स्थितिकरण** है। आपका **वात्सल्य** आपके पास आकर **पढ़ने वाले हर साधु ने पाया है। कभी आप साधुओं में भेदभाव नहीं करते कि ये मेरा शिष्य है तो इसे अधिक पढ़ाऊँ, इसे अधिक ज्ञान दूँ। ये साधु तो दूसरे संघ से मेरे पास केवल पढ़ने के लिये आये हैं, इन्हें अधिक ज्ञान नहीं दूँ। पक्षपात, तेरा–मेरा नहीं करते। सबको समान प्रेम, वात्सल्य देते हैं।**

आप नंदी संघ के शिक्षा गुरु हो। आप जब अपने दीक्षा गुरु के साथ में थे तब भी पूरे संघ की भारत में एक अलग पहचान थी। जहाँ भी आचार्यश्री का संघ गया वहाँ पर महति धर्म की प्रभावना हुई। अभी आप जंगल में, गाँव में रहकर भी बहुत ही धर्म प्रभावना कर रहे हैं। जंगल में रहकर भी आप भारत देश में ही नहीं विदेश तक धर्म की प्रभावना कर रहे हैं। धर्म प्रभावना कोई शहर में रहने से ही नहीं होती। पहले तो स्वयं के आचरण से प्रभावना होती है फिर बाहरी प्रभावना होती है। पहले के आचार्य आदि शहर में आकर प्रभावना नहीं करते थे। शहर वाले उनके चरणों जाते थे और राजा, महाराजा, चक्रवर्ती आदि गुरु की भक्ति करके धर्म की प्रभावना करते थे। जहाँ संत विराजमान होते थे वहाँ हर ऋतु के फल-फूल खिल जाते थे। प्रकृति खिल जाती थी। तिर्यंच प्रेम से वैर भाव छोड़कर एक साथ बैठ जाते थे। **ये सब गुरु के वात्सल्य वलय के कारण होता था और धर्म की प्रभावना होती थी। इसलिए सबसे बड़ी है आत्म प्रभावना, फिर धर्म प्रभावना। आप जहाँ भी जाते हैं शांति और समता का संदेश देते हैं और धर्म की प्रभावना करते हैं।**

आपके गुणों को जितना लिखूँ उतना कम है-

आपके विषय में मैं जितना लिखूँ उतना कम है। मैंने आचार्यश्री को 18 साल के बाद में देखा। देखने पर अलग ही आनंद का अनुभव हुआ। आपमें बहुत परिवर्तन दिखाई दिया। आपके चेहरे पर हमेशा मुस्कान दिखाई देती है। हँसते हुये आप एक बच्चे की तरह लगते हैं। आपका सबके प्रति निश्चल प्रेम, आपका वात्सल्य बड़ा ही अनोखा है। राग-द्वेष से रहित समता भाव ही आपका मुख्य लक्ष्य है। समता भाव आपके पास में आकर देखने और सीखने मिला। समता ही आत्मा का स्वभाव है।

मेरा नाम आस्था है, आपके प्रति मेरी और आस्था बढ़े। आस्था से ही मुझे गुरुवर आपके आशीर्वाद से मोक्ष का रास्ता मिला, गुरु के गुण लिखना तो सूर्य को दीपक बताने के समान है। मैं आपके गुणों को पूरा वर्णन नहीं कर सकती। मुझसे लिखने में कुछ भी त्रुटि हुई हो तो विद्वत्जन क्षमा करें। गुरुवर आपसे तो मैं क्षमा भी नहीं माँगती। आप से जब कोई क्षमा माँगते हैं तो आप कहते हैं कि क्या इतने समय तक मैं अक्षमा में था यानि क्रोध में था ? नहीं ! इसलिये मैं किसी पर क्रोध नहीं करता, नाराज नहीं होता और क्षमा भी नहीं करता। आप तो हमेशा समता में ही रहते हैं। जिनवाणी जिनकी माता है और अरहंत सिद्ध ही जिनके पिता हैं। समता शांति ही जिनके परिवार के बंधु हैं। ऐसे गुरुवर आचार्यरत्न श्री कनकनंदी जी गुरुदेव के चरणों में कोटि-कोटि वंदन है, शत्-शत् नमन है।

***

जय गुरु कनकनंदी

दोहा- समता जिनकी साधना, ज्ञान विज्ञान विशेष।
ज्ञान ध्यान में रत रहे, पाने जिन का वेष॥1॥
परम तपस्वी कनक गुरु, करें सतत स्वाध्याय।
पर में 'मैं' कभी ना मिले, 'मैं' का ध्यान लगाय॥2॥

मेरे (आ. कनकनन्दी) आध्यात्म गुरुओं की वंदना

प्रस्तुति : आचार्य कनकनंदी

(चाल-ज्योति कलश छलकें....)

वन्द्य चरण जिनके ऽऽऽ
जिनके चरणे नतमस्तक है, कनकनन्दी मन/(भाव) से ऽऽऽ (टेक)
सूरी कुन्थुसागर गुरुवर, मोक्षमार्ग प्रदाता सूरीवर।
शिक्षा-दीक्षा दातार, दयालु मुनिवर॥ वन्द्य चरण.....

सूरी विमलसागर गुरुवर, मार्गदर्शक आद्य गुरुवर।
ज्ञान–आशीषदाता, वात्सल्य रत्नाकर ।। वन्द्य चरण.....

सूरी भरतसागर गुरुवर, शंका निवारक ज्ञानदातार।
वात्सल्य सहयोगी, कोमल हृदयी ।। वन्द्य चरण.....

देशभूषण आचार्य गुरुवर, 'सिद्धान्तचक्री' अनुमोदक।
शिविर–प्रशिक्षणे, नियुक्तिकर्त्ता ।। वन्द्य चरण.....

विद्यानन्द आचार्य गुरुवर, ज्ञानदाता शंका निवारक।
ज्ञान व उपकरण, दातार सूरीवर ।। वन्द्य चरण.....

आचार्य अभिनन्दन गुरुवर, आचार्य पदवी संस्कार दातार।
आचार्य रत्न पदवी, प्रदायक ।। वन्द्य चरण.....

विजयमती मम ज्ञान प्रदात्री, प्रमुख शिक्षादायिनी सती।
अनुयोग चारों की, ज्ञानदायी गणिनी, उपकृत उनसे॥
त्रयकालवर्ती पञ्च गुरुवर, रत्नत्रययुत श्रेष्ठ गुरुवर।
'कनकनन्दी' वन्दे, पदकमल जिनके ।। वन्द्य चरण.....

मेरी (आचार्य कनकनन्दी) की प्रतिज्ञा

ससंघ के नियम व कारण

(चाल – तेरा प्यार का आसरा...)

–आचार्य कनकनन्दी

ब्रह्मचारी क्षुल्लक मुनि दीक्षा में, व्रत लिया हूँ मैं गुरु साक्षी में।
सम्मेदाचल (1988) में ली ग्यारह प्रतिज्ञायें, बहु अवसर पर बहु प्रतिज्ञायें।

1. जन्म जयन्ती नहीं मनाने के कारण

जन्म–जरा–मरण नाश के लिए, साधु मैं बना हूँ मोक्ष के लिए।
अतः जन्म–जयन्ती नहीं मनाता हूँ, दीक्षादि जयन्ती भी नहीं मनाता हूँ॥1।

2. पूर्व गृहस्थ सम्बन्ध त्याग के कारण

गृह त्यागी ब्रह्मचारी जब से बना हूँ, गृहस्थ अवस्था से विरक्त हुआ हूँ।
क्षुल्लक की ग्यारह प्रतिमा धरा हूँ, अनुमत उद्दिष्ट भी गृह से त्यागा हूँ॥2॥

दिगम्बर साधु-व्रत जब से धरा हूँ, अलौकिक अनागार आचार धरा हूँ। नवीन नामकरण गुरु ने किया है, गृहस्थ अवस्था के सम्बन्ध/(मोह) त्यागा है॥3॥

पंच परमेष्ठी ही बन्धु हैं मेरे, वैश्विक कुटुम्ब के विचार मेरे।
रत्नत्रय ही हैं वैभव मेरे, मोक्ष महल ही है मकान मेरे॥4॥

3. याचना, भौतिक निर्माण आदि नहीं करने का कारण

मुमुक्षु-भिक्षुक हूँ मैं नहीं भिखारी, सर्व परिग्रहत्यागी साम्यधारी। अतः मैं याचना या चन्दा न करूँ, भौतिक निर्माण हेतु भी कुछ न करूँ॥5॥

4. प्रसिद्धि आदि नहीं चाहने का कारण

आत्मा की सिद्धि हेतु साधु मैं बना, राग-द्वेष-मोह ममत्व त्यागा। अतः मैं ख्याति-पूजा-प्रसिद्धि त्यागा, निस्पृह निराडम्बर समता भोगा॥6॥

5. भेद-भाव-विद्वेष-विघटनपूर्ण व्यवहार नहीं करने का कारण

समता साधक मैं श्रमण बना, संकल्प-विकल्प-संक्लेश त्यागा। सभी में सदाकाल ही समता भाव, अतः न मेरा-तेरा विभाव भाव॥7॥

6. ढोंग पाखण्ड-दबाव प्रलोभन आदि से दूर रहने के कारण

आत्मविश्वास-ज्ञान-चारित्र धर्म, इससे विपरीत होता अधर्म। ढोंग-पाखण्ड आडम्बर दंभ को त्यागा, दबाव प्रलोभन भय को त्यागा॥8॥

7. पत्रिका विज्ञापन आदि नहीं करने के कारण

पत्रिका विज्ञापन या निमन्त्रण, धन-जन-मान व दिखावा काम। माइक-मंच व पण्डाल तामझाम, नौकर-चौका व गाड़ी सामान॥9॥ इत्यादि कार्य हेतु मैं नहीं कहता, अनावश्यक हेतु मना करता। सहज आगमोक्त जो कार्य होता, निस्पृह-समता से मैं प्रवृत्त होता॥10॥

8. निस्पृह वृत्ति के कारण

कर्तृत्व वर्चस्व व प्रसिद्धि हेतु, कोई काम न करूँ संक्लेश हेतु। निस्पृह आकिंचन्य निस्वार्थ युक्त, काम करूँ मैं कृतज्ञता युक्त॥11॥ संस्थादि का नामकरण मेरा न करता, सहयोगी दाताओं का नाम लिखता। ऐसा ही पूरा संघ के नियम होते, समता शान्ति सहयोग से रहते॥12॥

9. देश-विदेश में धर्म प्रचार के साधन

ध्यान-अध्ययन व लेखन प्रवचन, शिविर संगोष्ठी व साहित्य प्रकाशन।
देश-विदेशों में धर्म (ज्ञान) का प्रचार, संघ में होता है सहज प्रचुर॥13॥
स्वेच्छा से सहगामी होते हैं भक्तजन, सहयोग करते वे तन व मन।
समय-श्रम व धन भी लगाते, देश-विदेशों के भक्त ये करते॥14॥
सहज सरल व समता शान्ति से, सुयोग्य द्रव्य-क्षेत्र-काल व भाव से।
मेरी प्रतिज्ञा व संघ के नियम कहा, 'कनकनन्दी' को आध्यात्म भाया॥15॥

मेरी कुछ समस्यायें एवं सावधानियाँ

(चाल-छोटी-छोटी गैया...)

मेरी कुछ समस्याओं का, मैं कर रहा हूँ वर्णन।
जिससे में सतर्क रहूँ, करूँ आत्मकल्याण॥1॥
मेरी शरीर की प्रकृति है, अत्यन्त पित्त व उष्ण।
अत्यन्त संवेदनशील भी, शरीर-इन्द्रियाँ व मन॥2॥
विद्यार्थी-अवस्था से ही कर रहा हूँ अध्ययन व अध्यापन।
अधिक-जागना व कम सोना, करता हूँ प्रायः प्रतिदिन॥3॥
अधिक पसीना भी आता है, मेरे शरीर से नौ मास।
गरमी गन्दगी (दुर्गन्धी) से, होती है समस्यायें विशेष॥4॥
क्षुल्लक बनने से लेकर प्रायः, होंगे पन्द्रह वर्ष तक।
अधिक अन्तराय भी हुए, आचार्य की पदवी तक॥5॥
समुचित व योग्य आहार भी, नहीं मिलता है हर दिन।
अधजला-अधपका, अधिक नमक खट्टा भोजन॥6॥
जिससे और भी अधिक पित्त, बढ़ गया तथाहि उष्ण।
जिससे वमन व चक्कर (बेहोशी/दंतक्षय) आना, पसीना सहित होता है तन॥7॥
हैजा व पीलिया रोग भी, हो गया है एक-एक बार।
दीर्घकाल तक उसका प्रभाव, रहा है शरीर पर॥8॥
अन्य के लिए जो योग्य, भोजन-पानी-औषध।
मेरे लिए (वे) अयोग्य भी होते, गैस-वातावरण व गन्ध॥9॥

कलह विसंवाद पक्षपात, अनुशासन हीन निन्दा व अपमान।
संकीर्णता रूढ़ि व अनुदारता, अयोग्य है शब्द प्रदूषण॥10॥
इन सब कारणों से मेरा भाव-व्यवहार, होता है अन्य से भिन्न।
अतएव मुझे अन्य न समझ पाते, गलत मानते हैं कोई जन॥11॥
आहार के समय मुझे अधिक, रहना होता है सतर्क/सजग।
गरमी गन्दगी बदबू कलह, आदि से अधिक होता कष्ट॥12॥
इन सब कारणों से मुझे, रहना पड़ता है सजग।
ज्ञान-वैराग्य व भावनानुसार (मैं), नहीं कर पाता हूँ त्याग॥13॥
उत्सर्ग व अपवादानुसार, करता हूँ आहार व विहार।
जिससे न बढ़े समस्या मेरी, साधना बढ़े निरन्तर॥14॥
ध्यान-अध्ययन के लिए, चाहिए स्वस्थ तन व मन।
इसी हेतु मैं सेवन करता हूँ, औषधि व शीतल/(स्वच्छ) स्थान॥15॥
द्रव्य क्षेत्र काल भावानुसार, करता बाह्य तप-त्याग।
ध्यान-अध्ययन व शान्ति समता, सेवता हूँ वैराग्य॥16॥
आगम में मैंने पढ़ा, तथाहि किया मैं अनुभव।
ध्यान अध्ययन आदि से, अधिक होता पावन भाव॥17॥
पावन भाव से ही अधिक, होती है कर्म-निर्जरा।
शान्ति-समता की भी वृद्धि होती, जिससे कर्म की निर्जरा॥18॥
ख्याति पूजा व लाभ हेतु नहीं, करता हूँ कुछ काम।
भीड़ जोड़ना व धन कमाना, नहीं हे मेरा प्रयोजन॥19॥
आत्मकल्याण सहित जो, होता है विश्व कल्याण।
वैसा ही 'कनक' आचरण करे, नहीं अन्य प्रयोजन॥20॥

आचार्य कनकनंदी ससंघ के दैनिक कार्यक्रम

(पूर्व नियोजित सुयोग्य कार्य ही संघ में होते)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल-छोटी-मोटी गैया.../तीन बार भोजन भजन एक बार..)

हमारे संघ के कार्यक्रम मैं लिखूँ, जिससे सबको हो सही परिज्ञान।
जिससे सभी लोग लाभान्वित हो, स्व-पर विश्वकल्याण में समर्थ भी॥1॥

तीन बार सामायिक स्वाध्याय दो बार, प्रतिक्रमण होते हैं दिन में तीन बार।
लेखन व संशोधन ग्रन्थों का होता, आहार दिन में एक बार ही होता॥2॥
प्रतिष्ठापन (शौच) हेतु बाहर भी जाते, प्राणायाम योगासन बाहर करते।
शोध-बोध-अनुसन्धान रोज करते, देश-विदेशों के साहित्य भी (रोज) पढ़ते॥3॥
दबाव प्रबोलन व संक्लेश बिना, प्रवचन करते आडम्बर के बिना।
पूजा विधान प्रभावना शिविर, संगोष्ठी होती द्वन्द्व कलह बिना॥4॥
व्यवस्थित कार्यक्रम सदा ही चले, सेवा सहयोग से शान्ति से चले।
अतएव पूरा संघ ही व्यस्त रहता, अन्य जनों का भी सहयोग रहता॥5॥
हर कार्य नियोजना पूर्व ही होते, जिससे हर कार्य व्यवस्थित चलते।
संतुष्टि शान्ति व शिक्षा मिलती, अशान्ति अव्यवस्था देरी न होती॥6॥
इससे संघ के कार्य होते महान्, देश-विदेशों के धार्मिक काम।
विश्व विद्यालयों में शोध प्रबन्ध काम, स्वसंघ परसंघ अध्ययन के काम॥7॥
देश-विदेशों से वैज्ञानिक भी आते, दिगम्बर श्वेताम्बर हिन्दू भी आते।
अध्ययन व शोध कार्य करते, आध्यात्मिक प्रगति यहाँ करते॥8॥
व्यस्त-मस्त-संतोष भी हम रहते, पूर्व नियोजना पूर्वक कार्य करते।
अन्यथा कार्यक्रमों में व्यवधान पड़ता, वैश्विक धर्म प्रचार सही न होता॥9॥
अनावश्यक काम हम नहीं करते, आडम्बर अव्यवस्थित काम न होते।
अन्य के सहयोग भी हम ऐसा चाहते, 'कनक' को महान् कार्य ही भाते॥10॥

मेरे एकान्त निवास व मौन के कारण

(चाल- 1. तुम दिल की धड़कन... , 2. सायोनारा)

-आचार्य कनकनन्दी

एकान्त मौन में रहकर मुझे, ध्यान अध्ययन ही करना है।
लौकिक सम्पर्क प्रसिद्धि त्यागकर, समता शान्ति को पाना है॥ स्थायी॥
जन सम्पर्क से/(में) होती है चर्चा, राग-द्वेष-घृणा-ईर्ष्या की।
निन्दा अपमान विकथा गप्प, आकर्षण-विकर्षण-मोह की॥
राग-द्वेष व कलह भी होते, पक्ष-विपक्ष व द्वन्द भी।
कोई नाराज तो कोई राजी, अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा भी॥1॥

जिससे किसी को मनाना पड़ता, किसी को अनुशासन दण्ड भी।
किसी को चुप करना भी पड़ता, किसी से वैर-विरोध भी॥
इसी से मन चञ्चल होता, होता अपव्यय समय भी।
ध्यान-अध्ययन-चिन्तन न होते, न होते शोध-बोध-लेखन भी॥2॥
इससे मुझे भी सन्ताप होता, होता है पश्चात्ताप खेद भी।
पापकर्मों का होता है बन्ध, होता है दीन-हीन भाव भी॥
अन्य के कारण क्यों बनूँ पापी, दीन-हीन-अज्ञानी दुःखी।
अतएव 'कनक' सदा ही चाहे/(भजे, सेवे)... मौन एकान्त निस्पृह वृत्ति॥3॥

जैनश्रमण का त्याग होता है सांसारिक कुटुम्ब

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल - 1. तुम दिल की धड़कन.. 2. आत्मशक्ति से...)

माता-पिता व भाई-बन्धु होते हैं सांसारिक कुटुम्बी जन।
स्व-आत्मा ही निश्चय से, होता है आध्यात्मिक जन॥ (स्थायी)
भले शरीर के माता-पितादि, होते हैं व्यवहार से।
आत्मा के वे न होते माता-पिता, आत्मा तो है अनादि से॥
शरीर के तो हो गये माता-पिता अनादि से अनन्त।
अनादि की इसी परम्परा को, अभी तो करना है अन्त॥1॥
सचित्त-अचित्त-मिश्र परिग्रह, से भी निवृत्त होते हैं श्रमण।
श्रमण बनकर पुनः इसी में, जो प्रवृत्त होता वह भ्रष्ट श्रमण॥
नवकोटि से जो होता त्याग, वह ही होता यथार्थ त्याग।
त्यागे हुए विषयों में ममत्व करना, नहीं होता है यथार्थ त्याग॥2॥
इसीलिये पूर्व आचार्यों ने, स्व-रचित ग्रन्थों में न किया वर्णन।
माता-पितादि के नाम नहीं है, गुरु-शिष्यों का किया वर्णन॥
'कनकनन्दी' भी इसी परम्परा को, कर रहा है सदा निर्वहण।
आत्मोपलब्धि निमित्त ही, हो रहा है सदा प्रयत्नवान्॥3॥

सन्दर्भ- कथापि तपश्चरणे गृहीतेऽपि यदि गोत्रादि ममत्वं-
करोति तदा तपोधन एव न भवति॥ (प्र.सार टीका)

जब किसी तरह से तप ग्रहण करते हुए अपने सम्बन्धी आदि से ममता भाव करे, तब कोई तपस्वी ही नहीं हो सकता। कहा भी है-

जो सकलणयररज्जं पुव्वं चइऊण कुणई यममत्तिं।
सो णवरि लिंगधारी संजमसारेण णिस्सारो॥ (प्र. सार क्षेपक)

जो पहले सर्व नगर व राज्य छोड़ के फिर ममता करे, वह मात्र भेषधारी है, संयम की अपेक्षा से रहित है अर्थात् संयमी नहीं है।

मेरा परिचय

(चाल - छोटी-छोटी गैया...)

सत्ता-संपत्ति व प्रसिद्धि डिग्री, यह नहीं है मेरा स्व-परिचय।
नाम-ग्राम-जन्म-मरण तिथि, शत्रु-मित्र या कुटुम्ब-परिवार॥1॥
तन-मन-इन्द्रिय न मेरा परिचय, नहीं देश-भाषा राजनीति आदि।
यह सब तो अशुद्ध भौतिकमय, इसी से परे है मेरी स्थिति॥2॥
मैं हूँ सच्चिदानंदमय अमूर्तिक, स्वयंभू स्वयंपूर्ण शाश्वतिक।
अव्यय अविनाशी अविभागी, नित्य-नूतन व नित्य-पुरातन॥3॥
अतः सत्ता-सम्पत्ति आदि ने मेरा रूप, यह तो भौतिकमय पर रूप।
नाम ग्राम आदि सब काल्पनिक, लोक-व्यवहारमय अशुद्ध रूप॥4॥
तन-मन-इन्द्रिय भी है कर्मजन्य, कर्म भी है सब भौतिकमय।
शत्रु-मित्रादि भी सभी कर्मजन्य, मेरा शुद्ध रूप है अकर्मजन्य॥5॥
आकाश में दृश्यमान विभिन्न रंग-रूप, आकाश के नहीं होते वे भौतिक रूप।
तथाहि व्यवहार के सभी परिचय, मेरा परिचय नहीं है सभी जड़मय॥6॥
मुनीनां अलौकिक वृत्तिः भवन्ति, लौकिक व्यवहार से परे प्रवृत्ति।
कर्मसह मुनिदशा सहितोऽपि, श्रद्धा-प्रज्ञा में स्वभाव की प्रवृत्ति॥7॥

उक्तंच- **सर्व विवत्तोत्तीर्णं, यदा स चैतन्यमचलाप्रोतिः।**
भवति सदा कृतकृत्य, सम्यक् पुरुषार्थ-सिद्धिमापन्नः॥ (11.पुरु.सि.)

हिन्दी- समस्त विभावों को पारकर जब, अचल चैतन्य को प्राप्त करे।
तब होता है जीव कृतकृत्यमय, सही पुरुषार्थ को प्राप्त करे॥

श्लोक– **नित्यमपि निरूपलेपः स्वरूपसमवस्थितो निरूपघातः।**
गगनमिव परम पुरुषः परम–पदे स्फुरति विशदतमः॥(223 पुरु.सि.)

हिन्दी– निरूपलेप होकर जब जीव, स्वरूप में स्थित होता है बिना घात।
आकाश के सम वह परम–पुरुष, परम पद में होता विशद प्रकाशित॥

श्लोक– **कृतकृत्यः परमपदे परमात्मा सकल–विषय विरतात्मा।**
परमानंद–निमग्नो, ज्ञानमयो नन्दति सदैव॥ (224 पुरु.सि.)

हिन्दी– सकल विषय से विरक्त परमात्मा, कृतकृत्य (हो) स्थित होता परम पद में
परमानंद में ही निमग्न होकर, ज्ञानानंद में ही रमन्ते सदैव।

ऐसा ही श्रद्धान व ज्ञान से सम्पन्न, मैं हू अनंत–गुणों के धाम।
व्यवहार से हूँ मैं 'आचार्य कनक'/(कनकनन्दी), आचार्य कुंथुसागर गुरु है मम॥

दुराभिमान, स्वाभिमान, आत्मानुभव (28)

(अशुभ शुभ शुद्ध अहंभाव)

चाल : (1) हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम... (2) यमुना किनारे श्याम...

अशुभ शुभ तथा शुद्ध प्रकार,
अहंभाव है जानो तीन प्रकार,
अशुभ अहंकार, शुभ स्वाभिमान,
आत्मानुभव मानो सोऽहंभाव
अनात्म द्रव्य में होता अहंकार
अनात्म द्रव्य में होता अहंकार
अशुभ त्याग में होता स्वाभिमान... (टेक)....

आत्मिक गुण स्मरण आत्मरमण,
शुद्धात्मभावना अध्यात्म ध्यान,
यह सब सोऽहंभाव शुद्धात्म भाव,
अन्य द्रव्य निरपेक्ष शुद्ध स्वभाव
इसी निमित्त से होता शुभ त्याग,
शुद्ध माध्यम से प्राप्त शुद्ध स्वभाव॥1॥

अनन्तानुबन्धी मान कषाय युक्त,
मिथ्यात्व से युक्त अनात्म स्वरूप।
कर्म उदय से प्राप्त विभाव भाव,
शरीर आश्रित जो भी स्वभाव॥
जाति कुल–बल आदि अष्ट जो मद,
सो है अशुभभाव मोह के मद॥2॥

जिससे अष्टमद नहीं होते हैं,
पंच पाप, सप्तभय नहीं होते हैं।
अन्याय, कुकृत्य व्यसन त्याग होते
शुद्धभाव प्राप्ति हेतु जो भाव होते
वही स्वामिमान जानो शुभ संकल्प (विकल्प),
सनम्र सत्यग्राहिता दृढ़ संकल्प॥3॥

यह भाव करणीय विकास हेतु,
शुद्ध प्राप्ति के निमित्त यथा है सेतु।
नदी पार निमित्त जो सेतु है हेतु,
नदी पार अनन्तर नहीं है हेतु।
तथावत् स्वाभिमान उभय हेतु,
अहंकार त्याग तथा सोऽहं के हेतु॥4॥

अहंकार तजकर स्वाभिमान (को) धर,
सोऽहं भाव का सतत लक्ष्य भी धर।
सनम्र सत्याग्राही दृढ़ संकल्पी बनो,
अहं भाव हठग्राही भाव को हनो॥
'कनकनन्दी' तो सदा प्रयत्नरत है,
विश्वमानव भी करें ऐसा प्रयत्न है॥5॥

(टोकर, दि. 1–7–2011 मध्याह्न 3.57 बजे)